ISSN NUMBER : 2455-9717

शिवना प्रकाशन

वर्ष : 9 अंक : 35
अक्टूबर-दिसम्बर 2024
मूल्य 50 रुपये

RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

शुभ दीपावली

जब यह दीप थके
महादेवी वर्मा

जब यह दीप थके तब आना।

यह चंचल सपने भोले हैं,
दृग-जल पर पाले मैंने, मृदु
पलकों पर तोले हैं;
दे सौरभ के पंख इन्हें सब नयनों में पहुँचाना!

साधें करुणा-अंक ढली हैं,
सान्ध्य गगन-सी रंगमयी पर
पावस की सजला बदली है;
विद्युत के दे चरण इन्हें उर-उर की राह बताना!

यह उड़ते क्षण पुलक-भरे हैं,
सुधि से सुरभित स्नेह-धुले,
ज्वाला के चुम्बन से निखरे हैं;
दे तारों के प्राण इन्हीं से सूने श्वास बसाना!

यह स्पन्दन है अंक-व्यथा के
चिर उज्ज्वल अक्षर जीवन की
बिखरी विस्मृत क्षार-कथा के;
कण का चल इतिहास इन्हीं से लिख-लिख अजर बनाना!

लौ ने वर्ती को जाना है
वर्ती ने यह स्नेह, स्नेह ने
रज का अंचल पहचाना है;
चिर बन्धन में बाँध इन्हें धुलने का वर दे जाना!

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नई पुस्तकें

फूल को याद थे सारे मौसम
कविता संग्रह
लेखक - विजय बहादुर सिंह
मूल्य- 350 रुपये, वर्ष- 2024

काली धार
उपन्यास
लेखक - महेश कटारे
मूल्य- 450 रुपये, वर्ष- 2024

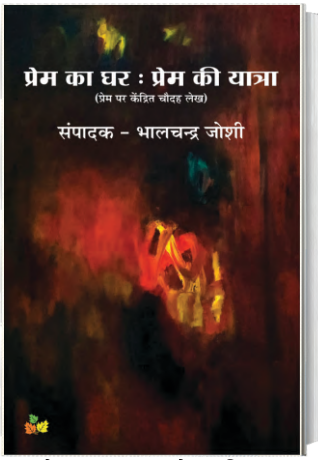

प्रेम का घर - प्रेम की यात्रा
निबंध
संपादक - भालचन्द्र जोशी
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2024

सुधा ओम ढींगरा का साहित्य -
महत्त्व एवं मूल्यांकन
प्रो. नवीन चन्द्र लोहानी, डॉ. योगेन्द्र सिंह
मूल्य- 500 रुपये, वर्ष- 2024

दण्ड से न्याय तक
शोध
लेखक - प्रवीण कक्कड़
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2024

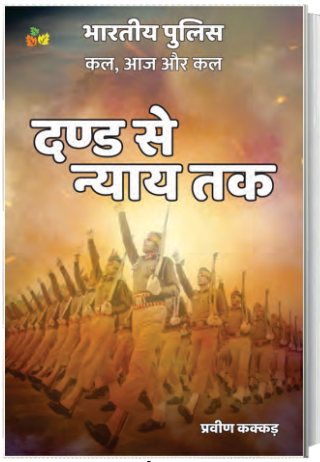

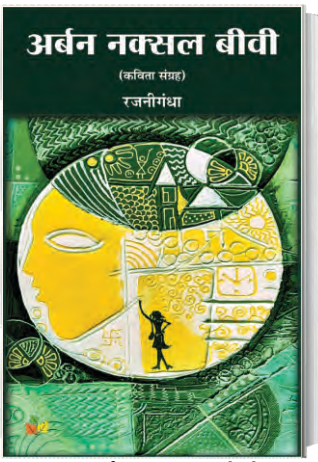

अर्बन नक्सल बीवी
कविता संग्रह
लेखक - रजनीगंधा
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

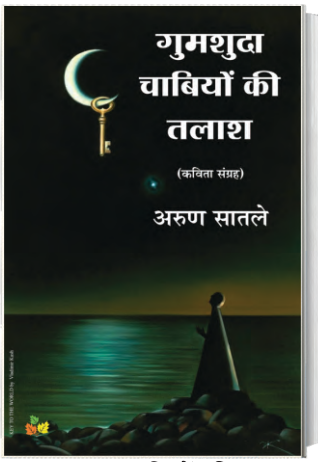

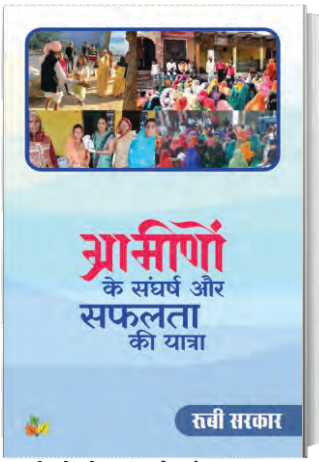

गुमशुदा चाबियों की तलाश
कविता संग्रह
लेखक - अरुण सातले
मूल्य- 250 रुपये, वर्ष- 2024

ग्रामीणों के संघर्ष और सफलता की
यात्रा, रिपोर्ताज
लेखक - रूबी सरकार
मूल्य- 350 रुपये, वर्ष- 2024

हरसिंगार सा झरूँगा मैं
कविता संग्रह
लेखक - मनीष शर्मा
मूल्य- 150 रुपये, वर्ष- 2024

धार्मिक मेले और पर्यटन
निबंध
लेखक - विमल कुमार चौधरी
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2024

थे मजा करो महाराज
व्यक्तित्व
संपादक - कौसर भुट्टो
मूल्य- 150 रुपये, वर्ष- 2024

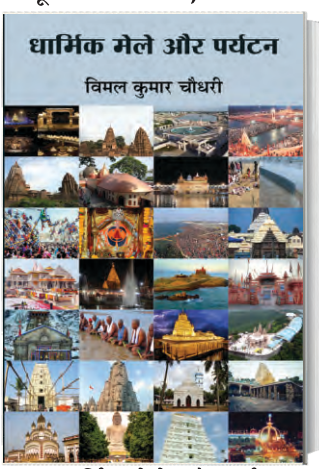

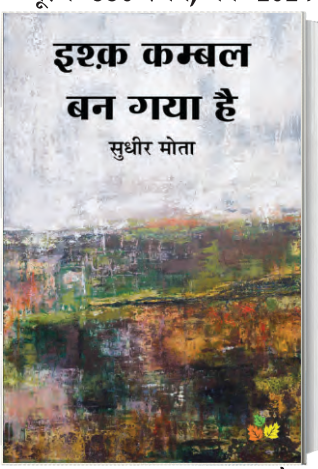

इश्क़ कम्बल बन गया है
ग़ज़ल तथा कविता संग्रह
लेखक - सुधीर मोता
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 2-8, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेंसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फ़ोन- 07562-405545, 07562-490372
मोबाइल- +91-9806162184 (शहरयार), +91-6265665580
व्हाट्सएप- +91-8959446244, ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com
वेबसाइट- www.shivnaprakashan.com

Email- shivna.prakashan@gmail.com
+91-8959446244 https://twitter.com/shivnac
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
https://www.youtube.com/c/ShivnaCreations
https://www.amazon.in/s?me=A17JJYGSVM2CEV

संरक्षक एवं सलाहकार संपादक
सुधा ओम ढींगरा

संपादक
पंकज सुबीर

कार्यकारी संपादक एवं क़ानूनी सलाहकार
शहरयार (एडवोकेट)

सह संपादक
शैलेन्द्र शरण, आकाश माथुर

डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी, सुनील पेरवाल, शिवम गोस्वामी

संपादकीय एवं प्रकाशकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
दूरभाष : +91-7562405545
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल- shivnasahityiki@gmail.com

ऑनलाइन 'शिवना साहित्यिकी'
http://www.vibhom.com/shivnasahityiki.html
फेसबुक पर 'शिवना साहित्यिकी'
https://www.facebook.com/shivnasahityiki
एक प्रति : 50 रुपये, (विदेशों हेतु 5 डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
3000 रुपये (पाँच वर्ष), 6000 रुपये (दस वर्ष)
11000 रुपये (आजीवन सदस्यता)
बैंक खाते का विवरण-
Name: Shivna Sahityiki
Bank Name: Bank Of Baroda,
Branch: Sehore (M.P.)
Account Number: 30010200000313
IFSC Code: BARB0SEHORE

संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यावसायिक। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर माह में प्रकाशित होगी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर (मध्य प्रदेश) रहेगा।

शिवना प्रकाशन

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 9, अंक : 35, त्रैमासिक : अक्टूबर-दिसम्बर 2024
RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929
ISSN : 2455-9717

आवरण कविता
महादेवी वर्मा

आवरण चित्र
पंकज सुबीर

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक जुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, जोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।

इस अंक में

आवरण कविता

जब यह दीप थके
महादेवी वर्मा

संपादकीय / शहरयार / 3

व्यंग्य चित्र / काजल कुमार / 4

साक्षात्कार

कविता के केंद्र में आलोचना की संगत
कवि-आलोचक विजय कुमार से साधना अग्रवाल की बातचीत / 5

केंद्र में पुस्तक

आधी दुनिया पूरा आसमान
सुप्रिया पाठक, डॉ. बी. मदन मोहन, जयपाल ब्रह्मदत्त शर्मा / 7

चलो फिर से शुरू करें
दीपक गिरकर, ममता त्यागी, रेखा भाटिया सुधा ओम ढींगरा / 13

डोर अंजानी सी
संदीप तोमर, रेखा भाटिया
ममता त्यागी / 20

टूटी पेंसिल
दीपक गिरकर, जसविन्दर कौर बिन्द्रा
हंसा दीप / 24

ज़ोया देसाई कॉटेज
अमृतलाल मदान, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, गोविन्द सेन
पंकज सुबीर / 28

उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श
डॉ. सुरेश वशिष्ठ, ब्रजेश कानूनगो,
डॉ. शील कौशिक
दीपक गिरकर / 32

पुस्तक समीक्षा

तस्वीर जो नहीं दिखती
दीपक गिरकर
कविता वर्मा / 35

अब न नसैहों
सुधा जुगरान
सरोजिनी नौटियाल / 38

चाँद गवाह
सुषमा मुनीन्द्र
उर्मिला शिरीष / 40

यायावरी
शैलेन्द्र शरण
शेर सिंह / 42

कुछ चेहरे, कुछ यादें
सुरेश रायकवार
ज्योति जैन / 44

एजी ओजी लोजी इमोजी
लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
अरुण अर्णव खरे / 46

21 श्रेष्ठ नारी मन की कहानियाँ
डॉ. कुमारी उर्वशी
डॉ. अनिता रश्मि / 48

कुछ तो बचा रहे
रमेश खत्री
रामदुलारी शर्मा / 50

गतिविधियों की रेल
ओम वर्मा
रवि खंडेलवाल 52

सुगंधा- एक सिने सुंदरी की त्रासद कथा
डॉ. रेवन्त दान
मुरारी गुप्ता / 54

तट पर हूँ तटस्थ नहीं
शैलेन्द्र शरण
डॉ. शोभा जैन / 56

विदेश में हिंदी पत्रकारिता
डॉ. पिलकेन्द्र अरोरा
जवाहर कर्नावट / 58

वांग छी
डॉ. उपमा शर्मा
मनीष वैद्य / 60

शनिवार के इंतज़ार में
ज्योत्स्ना कपिल
नीलिमा शर्मा / 62

नई पुस्तक

फूल को याद थे सारे मौसम
विजय बहादुर सिंह / 34

सुधा ओम ढींगरा का साहित्य.....
प्रो. नवीन चन्द्र लोहनी, डॉ. योगेन्द्र सिंह / 39

इश्क़ कम्बल बन गया है
सुधीर मोता / 45

काली धार
महेश कटारे / 47

थे मज़ा करो म्हाराज
कौसर भुट्टो / 49

हरसिंगार सा झरूँगा मैं
मनीष शर्मा / 51

धार्मिक मेले और पर्यटन
विमल कुमार चौधरी / 53

ग्रामीणों के संघर्ष और सफलता की यात्रा
रूबी सरकार / 55

प्रेम का घर : प्रेम की यात्रा
भालचन्द्र जोशी / 57

दण्ड से न्याय तक
प्रवीण कक्कड़ / 59

अर्बन नक्सल बीवी
रजनीगंधा / 61

गुमशुदा चाबियों की तलाश
अरुण सातले / 63

पुस्तक पड़ताल

विमर्श- रूदादे-सफ़र
दीपक गिरकर
सुधा ओम ढींगरा / 64

शिवना साहित्यिकी के सभी पाठकों, लेखकों, समीक्षकों को प्रकाश-पर्व दीपावली पर सुख, शांति, आरोग्य तथा समृद्धि की अशेष शुभकामनाएँ।

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 9, अंक : 35,

त्रैमासिक : अक्टूबर-दिसम्बर 2024

संपादकीय

रसरी आवत-जात ते सिल पर परत निशान

शहरयार
शिवना प्रकाशन, पी. सी. लैब,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र.
466001,
मोबाइल- 9806162184
ईमेल- shaharyarcj@gmail.com

कुछ बातें बार-बार दोहरानी पड़ती हैं, इस आशा के साथ कि कवि वृंद ने यह दोहा- 'करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान। रसरी आवत-जात ते सिल पर परत निशान॥' सही लिखा होगा और कभी न कभी तो सिल पर निशान पड़ेगा ही। जब से शिवना साहित्यिकी को पूरी तरह से समीक्षा, आलोचना तथा शोध की पत्रिका बनाया गया है, तब से ही यह समस्या सामने आ रही है कि गुणवत्ता के लिए लगातार संघर्ष करना पड़ रहा है। असल में अधिकतर तो समीक्षाएँ ही प्राप्त हो रही हैं, तथा ये समीक्षाएँ अधिकांशत: समीक्षक द्वारा नहीं बल्कि उस लेखक द्वारा ही भेजी जाती हैं, जिसकी किताब पर वह समीक्षा होती है। हाँ, कुछ समीक्षक जो लगातार शिवना के लिए लिख रहे हैं, उनकी समीक्षाएँ शिवना के पास सीधे आती हैं। संपादक मंडल इन समीक्षकों के प्रति आभार प्रकट करता है। मगर जो समीक्षाएँ सीधे लेखक की तरफ़ से आती हैं, वे समीक्षाएँ ऐसी होती हैं, जैसे किसी भोजन की थाली में सारे व्यंजन मीठे परस दिये गए हों, षडरस सिद्धांत का बिलकुल पालन नहीं करते हुए। क्या कोई भी ऐसी कृति की रचना संभव है जिसमें कहीं कोई दोष नहीं हो ? ऐसी कृति की तलाश में जाने कितने कलाकार / रचनाकार फ़ना हो गए। मगर लेखक द्वारा भेजी गई समीक्षाओं में यही स्थिति होती है कि समीक्षित कृति में कहीं किसी भी प्रकार का कोई दोष है ही नहीं। चूँकि समीक्षा लेखक द्वारा ही सीधे भेजी जाती है, इसलिए मुमकिन है कि भेजने के पूर्व लेखक द्वारा उसमें संपादन कर दिया जाता हो। और यह भी मुमकिन है कि समीक्षक ने ही रचना के कमज़ोर पक्ष की तरफ़ उँगली नहीं उठाई हो। आजकल आलोचना सुनना कोई नहीं चाहता है, आलोचना कृति की होती है, लेकिन संबंध लेखक और समीक्षक के ख़राब हो जाते हैं। शायद इसीलिए समीक्षक किसी भी रचना के कमज़ोर पक्ष के बारे में अपनी समीक्षा में चर्चा ही नहीं करता है। इस कारण ही ऐसा हो रहा है कि समीक्षाएँ मीठे व्यंजनों की थाली होकर रह गई हैं, कहीं कोई चटनी, कहीं कोई अचार उसमें नहीं होता। इन समीक्षाओं के साथ कई सारी परेशानियाँ दूसरी भी होती हैं, जिनके बारे में इसी संपादकीय में कई-कई बार लिखा जा चुका है, और इस बार फिर लिखा जा रहा है। समीक्षा के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, प्रकाशक का नाम तथा समीक्षक का पूरा पता, इस पत्रिका में हम यही लगाते हैं, किन्तु अधिकतर समीक्षाओं के साथ कभी पुस्तक के कवर का चित्र नहीं होता तो कभी प्रकाशक की जानकारी, और समीक्षक का पूरा पता तो अधिकांशत: होता ही नहीं है। पुस्तक का कवर और प्रकाशक की जानकारी तो इंटरनेट से उठाई जा सकती है, मगर सबसे बड़ी समस्या आती है समीक्षक के बारे में जानकारी की, समीक्षा के साथ केवल समीक्षक का नाम लिखा होता है, जैसे कहीं किसी पत्र में लिखा गया था- 'महात्मा गांधी- जहाँ कहीं हों'। एक और समस्या जो सामने आ रही है, वह है बहुत छोटी समीक्षाएँ मिलने की। कम से कम पन्द्रह सौ शब्दों की समीक्षा होगी, तभी तो पुस्तक पर समग्र रूप से चर्चा हो पाएगी, मगर नहीं, कई बार तो समीक्षाएँ चार सौ शब्दों की ही होती हैं, अब उसे कैसे पुस्तक समीक्षा कहा जाए और प्रकाशित किया जाए ? उसे पुस्तक का परिचय ज़रूर कह सकते हैं। कृपया पन्द्रह सौ शब्दों से कम की समीक्षा नहीं भेजें, पत्रिका में उनको प्रकाशित कर पाना संभव नहीं होगा। इस बार एक समीक्षा किसी उपन्यास पर ऐसी प्राप्त हुई, जिसमें समीक्षक ने पूरी समीक्षा में उपन्यास पर कोई चर्चा ही नहीं की, पहले उपन्यास को लेकर लेखक से हुई दूरभाष पर चर्चा का उल्लेख किया, फिर उपन्यास के बारे में लेखक द्वारा लिखी गई 'अपनी बात' पर लंबी चर्चा की और फिर एक अन्य लेखक द्वारा लिखी गई पुस्तक की भूमिका पर उतनी ही लंबी चर्चा। संभवत: समीक्षक ने उपन्यास पढ़ने की ज़हमत ही नहीं उठाई थी और इन्हीं सारे तत्वों के आधार पर समीक्षा लिख दी थी। हालाँकि इन बातों की चर्चा पूर्व में भी की जा चुकी है, मगर एक बार फिर से की जा रही है कि शायद 'रसरी आवत-जात' से कोई निशान पड़ ही जाए। **आपका ही**

प्रकाश-पर्व दीपावली की आप सभी को शुभकामनाएँ।

शहरयार

व्यंग्य चित्र-

काजल कुमार
kajalkumar@comic.com

साक्षात्कार

(साक्षात्कार)

कविता के केंद्र में आलोचना की संगत

कवि-आलोचक विजय कुमार से साधना अग्रवाल की बातचीत

साधना अग्रवाल
आम्रपालि गोल्फ होम्स, पलाश, बी-3/जी-02, सेक्टर 4, ग्रेटर नोएडा वेस्ट, ग्लैक्सी व्लू सफायर के नज़दीक
उप्र 201318
मोबाइल- 9891349058
ईमेल- agrawalsadhna2000@gmail.com

सुपरिचित कवि और आलोचक विजय कुमार बैंक में अधिकारी रहे हैं और मुंबई उनकी जन्मस्थली और कर्मस्थली रही है। साठोत्तरी कविता पर उनकी कई आलोचनात्मक पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनके पास एक गहरी सूझबूझ और अंतर्दृष्टि के साथ संवेदनशीलता भी भरपूर है।

साधना अग्रवाल- आप कवि और आलोचक हैं। हिन्दी के जिन आलोचकों ने- आचार्य शुक्ल, डॉ .रामविलास शर्मा, डॉ. नामवर सिंह कविता लिखना छोड़कर बाद में आलोचना की ओर प्रवृत ही नहीं हुए, बल्कि आलोचना के क्षेत्र में ख़ूब नाम भी कमाया। आपके तीन कविता-संग्रह निकल चुके हैं। क्या अब भी आप कविता लिखते हैं ? यदि लिखते हैं तो अपने कवि और आलोचक के बीच संतुलन कैसे बिठाते हैं?

विजय कुमार- साहित्य में मेरा प्राथमिक सरोकार कविता लिखना ही रहा है। अब भी जब-तब कविताएँ लिखता रहता हूँ। शीघ्र ही मेरा नया काव्य -संग्रह भी आएगा। आलोचना लेखन तो मेरे लिये कविता लिखने के समानांतर आस्वाद की एक प्रक्रिया रही है। कविता हमेशा मेरे लिए केंद्र में रही है और आलोचना उसकी संगत है- वैचारिक प्रतिश्रुति के साथ सजग, सहानुभूतिपूर्ण और संवादपूर्ण। अकादमिक अर्थों में मैं अपने को आलोचक मानता भी नहीं। मेरे लिए समालोचना का अर्थ कृति से एक नज़दीकी संबंध बनाना रहा है। जब कोई कृति अच्छी लगी तो पढ़ते हुए मेरे भीतर जो प्रतिक्रियाएँ जन्मीं, मेरे जो रिस्पांस रहे उन्हें ठहर कर देखने, निरखने की प्रक्रिया मुझे दिलचस्प लगी। इसी को ध्यान में रखकर ही मैंने आलोचना -कर्म किया अपने उस आलोचनात्मक लेखन -टिप्पणियों की पहली पुस्तक का शीर्षक 'कविता की संगत' रखा था।

साधना अग्रवाल - हिन्दी के सुपरचित आलोचक डॉ. नंदकिशोर नवल ने 1999 में एक लेख लिखा था 'हिन्दी की युवा आलोचना', उसमें उन्होंने हिन्दी के तीन युवा आलोचकों 'कविता की संगत' (विजय कुमार), 'विषयांतर' (मदन सोनी)और 'तीसरा रुख' (पुरुषोत्तम अग्रवाल) की पुस्तकों पर टिप्पणी की थी। आपके कई लेखों और समीक्षाओं के बारे में उन्होंने आप पर यह आरोप लगाया कि जो कवि जनवाद (संकेत जलेस) के घेरे में आता है उनकी कविताओं की व्याख्या आपने पूर्वाग्रहों के साथ की है। यह आरोप कितना सही है?

विजय कुमार- दो व्यक्ति हर जगह सहमत हों, यह आवश्यक नहीं। हर व्यक्ति की अपनी प्राथमिकता, अभिरुचि और संवेदन जगत् का एक धरातल होता है। नंदकिशोर नवल की आलोचना से मैं भी कभी अपना बहुत तादात्म्य नहीं बिठा पाया। लेकिन हर किसी को अपनी बात कहने का पूरा अधिकार है। साथ ही अंतिम सत्य जैसा कुछ नहीं होता।

साधना अग्रवाल - आपकी दृष्टि में आलोचना का स्वधर्म क्या है?

विजय कुमार- आलोचना का मूल धर्म है कृति के अन्त:करण तक पहुँचना। एक रचनाकार के आलोचना के संसार की जब भी चर्चा होगी तो यही बात उभर कर आएगी कि वह अपने से होकर दूसरों के कृतित्व से किस तरह से जुड़ता रहा है। कोई सृजनात्मक रचना केवल विचारों को ढोने का साधन नहीं है, वह एक संयोजन है, संगठन है, उसमें अनेक तत्वों की एक 'हार्मनी' है। रचना की जटिलता और अर्थ के स्तरों की अनेकरूपता के प्रश्न, रचना से आलोचना के निकटतम संबंध, विचार, भाव- सौंदर्य और संप्रेषणीयता के प्रश्न, एकांगी दृष्टिकोण को पार करने की चुनौतियाँ और सृजन प्रक्रिया को भीतर से देखने की यात्रा जैसी तमाम बातें एक आलोचना का स्वधर्म कही जा सकती हैं। रचनाकार की अपनी वैयक्तिकता और उसके अपने समय की सामुदायिक अंतश्चेतना के साथ संबंधों की खोज किसी भी समय की आलोचना के लिए सबसे बड़ी चुनौती होती है।

साधना अग्रवाल - किसी कृति के पुनर्मूल्यांकन की कब आवश्यकता होती है?

विजय कुमार- रचना जीवन सापेक्ष है और कृति एक 'पाठ' है। इस 'पाठ' की अनेकार्थता हो सकती है। कृति की कोई एक निर्णायक या अंतिम व्याख्या नहीं हो सकती। समय के बदलने के समानांतर स्थापित मान्यताओं में परिवर्तन, संशोधन, जोड़ने और घटाने की यह एक प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। 'क्लासिक्स' मानी गई चीज़ों का भी परवर्ती समय में पुनर्मूल्यांकन हुआ

है। कृति में अन्तर्निहित अर्थों के पुनर्पाठ का यह सिलसिला कभी थमता नहीं। हमारे पुरोधा नामवर सिंह ने स्वयं कहा है कि मानक आलोचना जैसी कोई चीज़ नहीं होती।

साधना अग्रवाल - आचार्य शुक्ल ने लिखा है कविता हृदय की मुक्तावस्था है, क्या आप इससे सहमत हैं?

विजय कुमार- शुक्ल जी की यह धारणा बहुत महत्त्वपूर्ण है कि कविता का संबंध मनुष्य के हृदय की मुक्त अवस्था से है। कविता ही स्वार्थ संबंधों के संकुचित मंडल से ऊपर सामान्य भावभूमि पर ले जाती है जहाँ जगत् की नानाविध स्थितियों के मार्मिक स्वरूप का साक्षात्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं। सृष्टि के अनेकानेक रूपों के साथ मनुष्य की रागात्मक वृति का सामंजस्य ही कविता का प्रयोजन है।

साधना अग्रवाल - आपके प्रिय कवि कथाकार और आलोचक कौन हैं? उनकी किसी कृति का नाम बताएँ?

विजय कुमार- पचासों कवियों, कथाकारो और आलोचकों के नाम गिनाये जा सकते हैं। हिन्दी में निराला, मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय की कविताएँ अलग-अलग वजहों से मुझे पसंद हैं। उसके बाद के कवियों में भी बहुत सारे ऐसे नाम हैं जिनका रचना संसार मुझे आकर्षित करता रहा है। यही बात कथाकारों और आलोचकों की स्थिति के बारे में कहा जा सकती है। कृति के आस्वाद में आलोचक की द्वंद्वात्मक भूमिका को लेकर हिन्दी में मलयज का काम मुझे विशेष रूप से बहुत पसंद है।

साधना अग्रवाल - क्या कविता के प्रतिमान कविता की प्रवृत्ति एवं प्रकृति बदलने के साथ बदलते रहते हैं?

विजय कुमार- समय बदलता है और उस समय की नाप-जोख के पैमाने भी बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिए वर्तमान में कविता-कर्म के सम्मुख अनेक नई तरह की स्थितियाँ और चुनौतियाँ हैं। रचनाकार हमेशा ही शक्ति-तंत्र का एक प्रतिपक्ष रहा है। पर आज उसके माध्यम शब्द को ही शक्ति के तंत्र द्वारा भ्रष्ट कर दिया जा रहा है। बाज़ार, उपभोग, टेक्नोलॉजी और प्रचार - माध्यमों द्वारा रचे गए एक विकराल अर्थहीन शोर से घिरे हुए मानव अस्तित्व के अन्तर्मन की खोज, तमाम तरह की विषमताओं, दमन, हिंसा, विस्थापन और विस्मृति के संसार में अनसुनी और अलक्षित रह गई पीड़ाओं के संदर्भ, संवेदन- तंत्र पर पड़ते आघातों की पहचान, भीतर की किसी बुनियादी जिजीविषा का रूपांकन, किसी सौन्दर्य चेतना, किसी आदर्श, किसी मूल्य - दृष्टि का संरक्षण- ये सब हमारे समय की कविता के लिए बहुत बड़ी चुनौतियाँ हैं। वर्चस्वकारी ताक़तों, उनके द्वारा रचे गए मूल्यों और अधीनस्थ के संबंधों को देखने की कुछ नई दृष्टियाँ इधर उभर कर आईं हैं। सारी स्थितियों के बीच आज लिखी जा रही कविता के भाव जगत् और उसके अभिव्यक्ति रूपों को जानने और समझनेकी नई-नई प्रविधियाँ अभी और विकसित होती जाएँगी और वे कविता को नए प्रतिमानों की ओर ले जाएँगी।

साधना अग्रवाल - समकालीन आलोचना की वर्तमान स्थिति से क्या आप संतुष्ट हैं?

विजय कुमार- आलोचना वहीं अपनी भूमिका कारगर तरीके से निभा सकती है जब उसके भीतर साहित्य और जीवन के परस्पर गतिशील और जटिल संबंधों को देखने परखने की दृष्टि हो, विश्लेषण के कुछ नए उपकरण हों। आलोचना के लिए बड़ा संकट तब होता है जब कोई एक ही स्वीकृत मानदंड या एक ही बहु प्रचारित कसौटी बन जाती है। किसी भी महत्त्वपूर्ण कृति को बहुत सारी बहसों से होकर गुज़रना होता है। निश्चय ही विवेचन के सरलीकरणों और सरोकारोंके कुछ वैचारिक फार्मूलों तक सीमित हो जाने की वजह से हमारे समय में आलोचना -कर्म का ह्रास हुआ है और आलोचना की भूमिका एक बड़ी हद तक सिकुड़ती गई है। पर आलोचना में इसी सारे गतिरोध के बीच से नई प्रतिभाएँ भी विकसित होंगी ऐसा मेरा विश्वास है। नई वैचारिक दृष्टि से संपन्न इधर कुछ प्रतिभाशाली युवा आलोचक उभर रहे हैं।

साधना अग्रवाल - अपने अब तक के लेखन से आप कहाँ तक संतुष्ट हैं? भविष्य में लिखने की कोई ऐसी योजना जिसे अब तक पूरी न कर सके हों।

विजय कुमार- अपने लिखे को लेकर कोई विशेष संतुष्टि का भाव अपने भीतर नहीं बन पाता। एक अधूरेपन की स्थिति को ही हमेशा अनुभव करता हूँ। अनेक चीज़ें अभी करनी हैं, कितना कर पाता हूँ यह आने वाला समय बतायेगा।

साधना अग्रवाल - आज हिन्दी में थोक के भाव से पुरस्कार दिए जा रहे हैं। इस पर टिप्पणी करना चाहेंगे?

विजय कुमार- पुरस्कार किसी को अमर नहीं बना सकते। एक अच्छी कविता कोई लिख ले उससे बड़ा और कोई पुरस्कार उसके लिए नहीं। रचनाकार की पहचान अंतत: उसकी रचनात्मकता से ही बनती है चाहे उसने बहुत पुरस्कार बटोर लिए हो या उसकी झोली बिल्कुल ख़ाली हो।

साधना अग्रवाल - मलयज पर अपने साहित्य अकादेमी के लिए मोनोग्राफ लिखा है। क्या आपको लगता है कि मलयज का आलोचक उनके कवि से बड़ा है?

विजय कुमार- मलयज की कविता में अपने युग के तनावों और मानव मन के विखंडित आत्मबोध की अभिव्यक्ति हुई है और परिवेश के साथ इस मानव मन का एक वेदना से भरा संबंध है। लेकिन उनके आलोचक का कद बहुत बड़ा है उनकी गहन अन्तर्दृष्टि, हिस्सेदारी, विवेक, रचना के साथ लगाव साथ ही विश्लेषण में अपनायी गई बौद्धिक तटस्थता और स्पष्टवादिता उन्हें एक असाधारण आलोचक बना देती है। मलयज की कविता उनकी आलोचना की छाया में ही चलती रही यह सच है लेकिन यह भी सच है कि एक आलोचक के रूप में मलयज के यहाँ कृति से आंतरिक लगाव में उनके कवि कर्म का बहुत बड़ा योग था। मलयज को पढ़ते हुए एक विशुद्ध अकादमिक आलोचक और एक कृतिकार- आलोचक के बीच के अंतर को समझा जा सकता है।

000

केंद्र में पुस्तक

(उपन्यास)

आधी दुनिया पूरा आसमान

समीक्षक : सुप्रिया पाठक, डॉ. बी. मदन मोहन, जयपाल

लेखक : ब्रह्मदत्त शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

डॉ. सुप्रिया पाठक
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, स्त्री अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय कार्यालय, प्रयागराज

डॉ. बी. मदन मोहन
सेवा निवृत प्रोफेसर
यमुनानगर, हरियाणा
मोबाइल- 9416226930

जयपाल
न्यू प्रताप नगर, अंबाला शहर
हरियाणा 134003
मोबाइल- 9466610508

स्त्री समानता का स्वप्न और यथार्थ

सुप्रिया पाठक

भारतीय समाज में स्त्रियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वह समस्त सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों की धुरी मानी जाती हैं। ऐसा माना जाता है कि माँ के बिना बच्चे की परवरिश संभव नहीं होती। वह उसकी प्रथम पाठशाला होती है जो बच्चे के मन में सामाजिक जीवन का संस्कार भरती है। हमारा समाज अपने आदर्श में स्त्री पूजक समाज है जो अनादि काल से देवियों के रूप में स्त्रियों की पूजा करता आया है। संभवत: भारत दुनिया का एकमात्र देश है 'जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है' इस धारणा में विश्वास करता है। हमारा समाज वास्तव में स्त्रियों के प्रति कितना संवेदनशील है और उन्हें समान मानते हुए उनकी प्रतिभा को किस स्तर तक स्वीकार करता है, यह स्त्रियों की सामाजिक स्थिति के मूल्यांकन के संदर्भ में प्रासंगिक परंतु जटिल प्रश्न है। हमारी सामाजिक व्यवस्था में लोकतांत्रिक आदर्शों की तलाश रोज़मर्रे के जीवन में कठिन है क्योंकि लोकतंत्र की संकल्पना जब विभिन्न सामाजिक संरचनाओं जाति, वर्ग, धर्म, लिंग इत्यादि से टकराती है, तब कई विषमताओं को जन्म देती है जिसमें एक है 'स्त्री-पुरुष समानता का अधिकार'।

आज के दौर में स्त्रियाँ घर और बाहर दोनों दायित्वों को सफलतापूर्वक निभा रही हैं। उनसे परिवार एवं समाज को बहुत अपेक्षाएँ हैं परंतु स्त्रियों द्वारा की गई अनगिनत कोशिशों के बावजूद भी वे समाज में अपना अपेक्षित स्थान हासिल नहीं कर पाई हैं। वे अपनी पहचान बनाने की जद्दोजहद से लगातार गुज़र रही हैं। आज भी उन्हें निजी संबंधों, पारिवारिक दायित्वों तथा कार्यस्थल पर स्वयं को प्रमाणित करने की आवश्यकता पड़ती है। हम उनकी केंद्रीय भूमिकाओं के साथ उन्हें स्वीकार तो करते हैं पर उनकी सामाजिक स्थिति को परिधि पर ही बनाए रखते हैं। स्त्रियों को उनकी सम्पूर्णता में स्वीकार न कर पाने के पीछे मनोवैज्ञानिक आधार क्या है ? यह जानना आवश्यक है। ब्रह्म दत्त शर्मा का हालिया प्रकाशित उपन्यास 'आधी दुनिया पूरा आसमान' पाठकों को स्त्री समानता के इसी प्रश्न का उत्तर तलाशने का प्रयास है।

समकालीन स्त्रीवादी विमर्श की यह प्रस्थापना है कि 'स्त्रियाँ भी मनुष्य है' अर्थात आज भी मनुष्य होने की प्रारंभिक शर्त से स्त्रियाँ कोसों दूर हैं, इसलिए सबसे पहले उन्हें अपने मनुष्यता को प्राप्त करने की आवश्यकता है। यह विचार 19 वीं शताब्दी में स्त्रीवाद की प्रथम लहर के रूप में उभरे उदारवादी नारीवादी चिंतन की उपज है जो मनुष्यता को स्त्री की तर्कशक्ति, उपलब्ध संसाधनों तक उसकी पहुँच तथा राज्य द्वारा प्रदत्त अवसरों में समानता के संदर्भ में परिभाषित करता है। 'मनुष्यता' का विमर्श मानवाधिकारों के विमर्श का पर्याय है और वैश्विक स्तर पर आज भी स्त्रियाँ अपने मूलभूत मानवाधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। भारत में भी कमोबेश वही स्थितियाँ मौजूद हैं।

इस उपन्यास की नायिकाएँ किरण, मनीषा, ममता, सरोज, सुधा मैडम, सोना अपने अपने तरीक़े से समाज में अपनी जगह बनाने का प्रयास करती हैं। वे ऐसा करते हुए अनवरत घर एवं कार्यस्थल के बीच अधिकतम सामंजस्य बैठाने का प्रयत्न करती हैं, परंतु हर बार किसी न किसी कारणवश चूक जाती हैं। इस उपन्यास में लेखक वर्तमान स्त्री विमर्श के दौर में भारतीय समाज में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति का आकलन, स्त्रियों के गर्भ पर उनके अधिकार के प्रश्न तथा पितृसत्तात्मक व्यवस्था में 'बेटों वाली माँ' की अहमियत को अपने लेखन का प्रस्थान बिंदु बनाते हैं एवं स्त्रियों के समक्ष उपस्थित वर्तमान दौर की चुनौतियों की तरफ पाठकों का ध्यान बहुत संवेदनशील दृष्टि के साथ आकर्षित कराते हैं। हम जिस समाज में रहते हैं, वहाँ हिंसा की संकल्पना बहुत सूक्ष्म संरचना के रूप में हमारे अवचेतन में बसाई जाती है और हम जाने-अनजाने एक हिंसक समाज का हिस्सा बनते जाते हैं। विशेषकर स्त्रियों के प्रति बरती जाने वाली हिंसा के प्रति समाज में एक सायास चुप्पी क़ायम रहती है जिसके कारण वैवाहिक संबंधों में तनाव, मारपीट, भ्रूण हत्या तथा बेटियों को बोझ समझ कर उन्हें किसी भी तरह निपटा देने की हिंसक प्रवृति को 'घर का निजी मामला' बताकर उसे सामाजिक तौर पर मौन सहमति प्रदान की जाती है। इस उपन्यास में लेखक ने स्त्रियों के प्रति होने वाली इस प्रकार की हिंसा के मनोवैज्ञानिक आधार को कई घटनाओं के माध्यम से बहुत सूक्ष्मता से पकड़ने की कोशिश की है, जिसमें वे काफी हद तक सफल हुए हैं।

भारतीय समाज में परिवार की धुरी समझे जाने वाली स्त्री की स्थिति दरअसल कोल्हू के उस बैल की तरह है जो अपने केंद्र की परिधि में चक्कर लगाता रहता है। बचपन से आज तक हमने अपने आस-पास की स्त्रियों को प्रसन्नचित्त भाव से घर का काम-काज सँभालते और पारिवारिक रिश्तों में प्रेम-सौहार्द्र बनाए रखने के लिए सामंजस्य बिठाते हुए ही देखा है। अपने अधिकारों और लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए लड़ती हुई स्त्री हमें अपवादस्वरूप ही देखने को मिलती है। वे माँ, पत्नी, प्रेमिका, बहन, दादी, नानी जैसे अनेक रूपों में सदियों से अपनी भूमिका निभाती आई हैं। बावजूद इसके, उनकी नोक-झोंक, लड़ाई और तनावों के क़िस्से ननद-भौजाई, सास-बहू, देवरानी-जेठानी, सौतनों और पड़ोसिनों के रूप में हमारे लोकगीतों, कहानियों और किंवदंतियों में दर्ज हैं।

हमारे समाज में स्त्रियों को प्रेम, सम्मान, संरक्षण और देखभाल के योग्य तो माना जाता है परंतु उनके विवेक और तर्क पर भरोसा जताने की परंपरा नहीं रही है। इसकी स्पष्ट झलक हमें इस उपन्यास के उन प्रसंगों में मिलती है जहाँ किरण अपनी प्रतिभा के बल पर सरकारी नौकरी प्राप्त करने का प्रयत्न करती है, कॉलेज के दिनों के अपने अधूरे सपने (आई ए एस) को अपनी बचपन की सहेली मनीषा की मदद से साकार करने का दृढ़ संकल्प करती है। परंतु इस निर्णय के रास्ते में सबसे पहले उसके माता-पिता आते हैं जिन्हें किरण का ससुराल छोड़कर, दो छोटी बच्चियों को उनके भरोसे छोड़कर मुंबई जा बैठना तनिक भी नहीं सुहाता। उसके परिजन, पति एवं ससुराल के सभी लोगों को किरण की ज़िद और उसका घमंड तो दिखता है परंतु उसके आत्मसम्मान एवं गरिमा पर लगी चोट किसी को दिखाई नहीं देती। लेखक ने किरण की परिधि की सभी स्त्री पात्रों को रचते समय उस सूक्ष्म पितृसत्तात्मक तंतु को पकड़ा है जिसके कारण स्त्रियों को ही स्त्रियों का दुश्मन मानने की कहावत में अंतर्निहित हिंसक मनोभाव एवं साज़िश से पाठक गुज़रता है। यही इस उपन्यास का मूल तत्व भी है। लेखक यह प्रस्तुत कर पाने में सफल हुए हैं कि हमारी सामाजिक व्यवस्था अपने तमाम दावों एवं वायदों के बावजूद भी स्त्रियों के प्रति असहिष्णु है। ममता द्वारा अपने बच्चे के साथ ट्रेन से कूदकर आत्महत्या कर लेने की ख़बर सिर्फ किरण को ही नहीं, बल्कि पाठकों को भी हिला कर रख देती है।

नियति पंड्या और भानगाँवकर द्वारा लिखित आलेख ईक्वल बट डिफरेंट डिफरेंट: व्यूज़ ऑन जेंडर रोल एंड रिस्पोंन्सिबिलिटिस अमंग अपर क्लास हिन्दू इंडियन्स इन स्टैब्लिस्ड अडल्टहुड में पारिवारिक व्यवस्था में स्त्री-पुरुष समानता के मनोवैज्ञानिक पक्ष की जाँच करते हुए कुछ महत्त्वपूर्ण बिंदुओं को उभारा गया, जिसमें समानता, बुद्धिमता, संभावना, मूल्य, परिवार के प्रति उत्तरदायित्व, भिन्नता, भावनाएँ, मिज़ाज, सोच, प्राथमिकताएँ, जेंडर की निर्मिति, भूमिका एवं दायित्व इत्यादि चरों के माध्यम से समानता के स्तर की जाँच की गई। इस कार्य के परिणाम रोचक हैं। स्त्रियाँ हर क्षेत्र में पुरुषों से अधिक योगदान कर रही थीं लेकिन इसके बावजूद भी पारिवारिक व्यवस्था में संसाधनों एवं अवसरों में समानता नहीं है।

इस उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है भ्रूण हत्या के उपरांत उससे गुज़रने वाली स्त्रियों के शारीरिक एवं मानसिक स्थिति का संवेदनशील निरूपण। हमारे समाज में बालिकाओं का जन्म बोझ समझे जाने के कारण उनके प्रति जन्म के पूर्व ही लैंगिक पूर्वाग्रह व्याप्त होता है। अल्ट्रासाउंड की प्रक्रिया से लेकर एबॉर्शन की असह्य पीड़ा से गुज़रना उस स्त्री के लिए ताउम्र की टीस छोड़ जाता है। वह आजीवन अपनी अजन्मी बच्चियों के क़त्ल की गुनहगार होती है। उसके जीवन में बार-बार बेटा पैदा होने तक यह दु:खद घटना दुहराई जाती है। हर बार अपनी कोख ख़ाली करती माँ मानसिक स्तर पर किस त्रासदी से गुज़रती है, इससे समाज को कोई विशेष फर्क नहीं पड़ता क्योंकि यह उनके लिए महज 'सफाई' का काम है, जिसके बाद उनकी उम्मीदें फिर से जागती हैं। परंतु स्त्री देह पर लगातार घटित होने वाली इन भयावह स्थितियों के प्रति विरोध करने के स्थान पर वे पति एवं परिवार के दबाव में इस 'हत्या' का हिस्सा बनने को विवश होती हैं। इस उपन्यास में लेखक द्वारा किरण एवं ममता की मन:स्थिति का स्त्री होकर वर्णन करना एक बड़ी उपलब्धि है।

महिलाओं के जीवन का एक बड़ा हिस्सा घरेलू कामों में ही खप जाता है और इसका कोई आकलन सकल घरेलू उत्पाद या अन्य

आँकड़ों में नहीं किया जाता है। महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कठिन परिश्रम के बावजूद उनकी उपस्थिति अवैतनिक श्रम में बढ़ी है। घरों में किए जाने वाले कार्यों में बच्चों-बुज़ुर्गों की देखभाल करना, खाना बनाना, पानी भरकर लाना, पशुओं की देखभाल करना इत्यादि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त कृषि कार्यों में सहायता एवं वन उत्पादों को एकत्रित करना भी महिलाओं द्वारा किए जाने वाले के अवैतनिक कार्यों की श्रेणी में आता है, जिनका उपयोग घरेलू उपभोग के लिये होता है। जब तक हमारे नीति निर्माता इन संरचनात्मक मुद्दों का आकलन का सही तरह से नहीं करेंगे तथा महिलाओं को कार्यबल में प्रवेश करने को लेकर बाधाएँ बनी रहेंगी, तब तक भारत में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाना संभव नहीं होगा।

समाज में स्त्रियों को चटोरी और तीखा अचार पसंद करने वाली के रूप में क्यों प्रस्तुत किया जाता है, इसका मर्म हमें उनकी रोज़मर्रे की ज़िंदगी और भोजन की उपलब्धता के गणित को देखने के बाद समझ में आता है। आज भी हमारे समाज में असंख्य घरों में स्त्रियाँ पुरुषों का भोजन के समाप्त होने के बाद खाती हैं। सालों से उनके थाली का समाजशास्त्र बिगड़ा हुआ है जिसने कई पीढ़ियों से स्त्री शरीर के गठन, क़द और सेहत (बॉडी मास इंडेक्स) को प्रभावित किया है। रसोईघर में उपलब्ध खाद्य संसाधनों पर स्त्री-पुरुष दोनों का बराबर हक़ है बल्कि स्त्रियों का अधिक क्योंकि उन्हें स्वयं स्वस्थ रहकर अगली स्वस्थ पीढ़ी पैदा करनी है। इन सभी बातों को जानते हुए भी वे अपने शरीर और ज़रूरतों के प्रति उपेक्षित भाव अपनाती हैं। परंपरा से अधुनिकता की लम्बी यात्रा के बाद भी स्त्रियों की इस मन:स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया है। ख़ुद से ही अनभिज्ञ बने रहना, अपनी उपेक्षा करना, अपनी सशक्त उपस्थिति का दावा न पेश करना, हर परिस्थिति में स्वयं को ढाल लेना स्त्रियों को इस सामाजिक व्यवस्था ने ही सिखाया है। इस उपन्यास के लेखक ने भी स्त्री उपेक्षिता की यही डोर अपने स्त्री पात्रों को थमा दी है।

बावजूद इसके, यह रचना किरण एवं मनीषा जैसी असंख्य भारतीय स्त्रियों का प्रतिनिधित्व भी करती है जो संघर्ष करती हैं और जीतती हैं। संघर्ष सभी के जीवन की सबसे ख़ूबसूरत चीज़ है जो हममें ज़िंदा होने के जज़्बे को बनाए रखती है। किरण के रोज़मर्रे का संघर्ष और उससे निबटने का प्रयास पाठकों को अपने व्यक्तिगत जीवन में भी संघर्ष की प्रेरणा देता है। पाठक इस रचना को पढ़ते हुए बचपन से ही अपने आस-पास घटित हो रहे स्त्री विषयक हिंसा के साथ जुडाव महसूस करने लगते हैं। उनकी स्मृतियों में वे सभी स्त्रियाँ एकाकार होती हैं जो इसे झेलते हुए या तो इसे आत्मसात् करती हैं अथवा इस व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह करती हैं। विद्रोहिणी स्त्रियाँ समाज एवं परिवार की नापसंदगी का शिकार होती हैं। पाठकों के अवचेतन मन में उनके द्वारा अपने घर की स्त्रियों के प्रति किए गए दुर्व्यवहार के प्रति ग्लानि का भाव पैदा करती है। इस उपन्यास के लेखक पाठकों के मन में जेंडर संवेदनशीलता की चेतना जगाने में सफल होते हैं। मनीषा इस उपन्यास का वह किरदार है जो अपनी शर्तों पर जीवन जीती है और किरण के अंदर भी स्वयं को साबित करने का आत्मविश्वास पैदा करती है। संभवत: दोनों की पारिवारिक पृष्ठभूमि उनके अंदर भिन्न व्यक्तित्व का निर्माण करती है। समय के साथ-साथ उनमें परिस्थितियों का सामना करने की क्षमता भी विकसित होती है। शहरी वातावरण एवं भाई द्वारा मिले प्रोत्साहन के कारण एक तरफ जहाँ मनीषा मुखर और ज़िंदगी को अपनी शर्तों पर जीना सीखती है, वहीं किरण प्रारंभ से ही जीवनसाथी एवं परिवार के स्तर पर समझौते करने को विवश होती है।

हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक निर्मितियों में स्त्री एवं पुरुष दोनों ही पितृसत्तात्मक विचारधारा के वाहक हैं, विशेषकर स्त्रियाँ जो इस वर्चस्वशाली विचारधारा का पोषण सदियों से करती आई हैं। बावजूद इसके हमारे लोक में व्याप्त लोकगीतों और मुहावरों में हमें भयानक स्त्री विद्वेषी मुहावरे देखने को मिलते हैं : जोरू ज़मीन जर के नहीं तो किसी और के, स्त्रियों को नाक नहीं होती तो वह मैला खातीं, स्त्री की बुद्धि से चलने वाला घर और पुरुष नष्ट हो जाते हैं, स्त्री और धन सँभाल कर रखने की चीज़ है, दुनिया में सारे युद्ध स्त्रियों की बुद्धिहीनता के कारण हुए हैं। इस तरह की अनेक लोक अभिव्यक्तियाँ हमारे मानस को रचने में अपनी महती भूमिका निभाती हैं। जो समाज स्त्रियों को उनके विवेक और तर्क की कसौटी पर हमेशा कमतर आँकता आया हो, वह मनुष्य के रूप में उनकी प्रतिभा को स्वीकार कर उन्हें बराबरी का दर्जा देने की स्थिति में आ चुका है, यह कोरी कल्पना है।

परंतु उपन्यास के अंत में, स्वयं लेखक द्वारा किरण की ससुराल वापसी के प्रकरण तथा उससे फिर से बेटा जनने की उम्मीद पाठकों को 'वही ढाक के तीन पात' की स्थिति में लाकर खड़ा कर देती है और निराश करती है। प्रश्न यहाँ लेखक से भी बनता है कि वे अपने सशक्त स्त्री चरित्रों के साथ कितना न्याय कर पाए हैं ? उपन्यास के प्रारंभ से लेखक द्वारा जिस किरण को जीवन की हर स्थिति में अपने और अपनी कोख के प्रति विद्रोह करते हुए दिखाया गया हो, भले ही वह परिस्थितियों के कारण हर बार घुटने टेकने पर मजबूर की गई हो परंतु वह एक सशक्त स्त्री पात्र है। अधिकारी बनने के बाद किरण न सिर्फ आर्थिक रूप से समर्थ होती है बल्कि अपने आश्रय के लिए भी अब वह किसी पर निर्भर नहीं है।

अपनी मेहनत एवं लगन से वह अपना और अपनी बच्चियों का भविष्य सुरक्षित करती है, ऐसी स्थिति में लेखक द्वारा अपनी नायिका को उसी घर में जहाँ उसके मान-सम्मान एवं आत्मविश्वास की धज्जियाँ उड़ाई गई हों, जहाँ वह शारीरिक एवं भावनात्मक हिंसा का शिकार हुई हो और उस घर में कभी वापस न लौटने के प्रण के साथ निकली हो, उसे वापस वहीं भेजने का निर्णय अंतत: हमें इसी सामंती पितृसत्तात्मक व्यवस्था के साथ तालमेल और सामंजस्य बिठाकर चलने का संदेश देता है। अंतत: जब इतने संघर्ष के बाद नायिका किरण का उसी चहारदिवारी में

लौटना तय था तो फिर उसके संघर्ष, उसकी जिजीविषा और बेटे की उम्मीद लगाए बैठी सास और गाँव की अन्य महिलाओं के सामने उसके मायूस हो जाने को पाठकों द्वारा किस रूप में लिया जाना चाहिए ? हमेशा से किसी भी प्रकार के अन्याय पर अपनी असहमति जताने वाली किरण आज चुप क्यों हो गई ? यह विचारणीय प्रश्न है। क्या किरण की उपलब्धि पति-पत्नी के संबंधों में गहरे रूप से बन गई गाँठ को खोल पाई ? क्या सुखबीर अपने पौरुष बोध से ग्रसित मन को अपनी अधिकारी पत्नी के समक्ष सहजता से खोल पाया और सही मायनों में अपने हमसफ़र का दर्जा दे पाया या किरण को मायके और ससुराल में मिला प्रेम और सम्मान उसके पद के कारण संभव हो पाया।

बावजूद इसके कि इस प्रकार के समस्त प्रश्न लेखक से किए जाने चाहिए यह भी सत्य है कि लेखक अपनेसामाजिक-सांस्कृतिक यथार्थ से भी भली-भाँति परिचित हैं, जिससे निकलना नायिका के लिए इतना सरल नहीं रहा होगा। इस उपन्यास की विशेषता यह है कि यह एक यथार्थवादी रचना है जिसक अन्त सिंड्रेला की स्वप्निल दुनिया की तरह संभव नहीं। जीवन एवं संबंधों की वास्तविकता यही है कि हम अंत तक उसे बचाए रखने की कोशिश करते हैं। यहाँ कुछ भी व्यक्तिगत नहीं बल्कि सामूहिक है इसलिए किरण अपने आत्मनिर्भर होने के सम्मान के साथ अपने ससुराल वापस लौट आती है, अपने बच्चियों के पिता के पास। एक नई उम्मीद के साथ।

स्त्री सशक्तीकरण के नारे के साथ विगत चालीस सालों में हमने बहुत प्रगति की है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में स्त्रियों ने अपना सर्वोत्तम हासिल किया है। उन्होंने सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि दुनिया भर में शोहरत कमाई है। हिंदुस्तान के हर व्यक्ति को इन बेटियों पर गर्व है जिन्होंने यह साबित किया है कि अवसर मिलने पर वह इतिहास बदल सकती हैं। इतनी उपलब्धियों और सशक्तीकरण के तमाम प्रयासों के बावजूद भी सफल स्त्रियों की संख्या उँगलियों पर गिन दिए जाने भर है। यह भी एक कटु यथार्थ है कि सफल होती हुई स्त्री दोहरे दंश का शिकार है। उसने जितनी ऊँचाई हासिल की है, उसपर अपेक्षाओं की गठरी उतनी ही भारी लदी है। स्त्री सशक्तीकरण की यात्रा और लड़ाई अभी बहुत लम्बी है ... जिसके रास्ते पर स्त्री-पुरुष साहचर्य को गिरते, सँभलते, सीखते हुए एक साथ आगे बढ़ना है। इस सफ़र में यह पुस्तक अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराती है।

000

आधी दुनिया का पूरा सच

डॉ. बी. मदन मोहन

उपन्यास हमारे समय की लोकप्रिय साहित्यिक विधा है। एक सशक्त औज़ार की तरह यह सामाजिक विद्रूपताओं पर चोट करते हुए मानवीय जीवन के विभिन्न पहलुओं को सँवारने और निखारने का अहम कार्य करता है। 'आधी दुनिया पूरा आसमान' ब्रह्म दत्त शर्मा का ऐसा ही उपन्यास है, जो नारी जीवन के मुख्तलिफ़ आयामों से जुड़ी चिंताओं को न केवल रेखांकित करता है, अपितु इनका सुखद समाधान भी प्रस्तुत करता है।

इस कृति का महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि इसकी रचना प्रक्रिया सामाजिक यथार्थ की गहन पड़ताल के साथ कड़वे सच और प्रतिबद्ध सरोकारों का स्वाभाविक ताना-बाना बुनती है। पिछले दशक में कन्या-भ्रूण हत्या या चयनात्मक गर्भपात के जो आँकड़े पूरे देश से हमारे सामने आए वो निश्चित ही किसी भी संवेदनशील व्यक्ति को स्तंभित करने वाले रहे हैं। उत्तरी भारत के विकसित राज्यों ने इस संदर्भ की विकृत तस्वीर उभारी है। यही उपन्यासकार की चिंता और सरोकार है, जो पूरे उपन्यास में बड़ी ही गहनता से ने केवल चित्रित होते हैं, अपितु एक सार्थक और सशक्त समाधान खोजते हुए स्त्री शक्ति का शंखनाद भी करते हैं।

उपन्यास का प्रमुख बिंदु 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' की सोच और संघर्ष को केंद्र में रखकर चलता है और संपूर्ण ताना-बाना इसी कथा की समाज-साक्षेप बुनावट करता हुआ उपन्यासकार स्त्री समाज के प्रति सार्थक दृष्टिकोण को बेबाकी से प्रस्तुत करता है। किरण 'आधी दुनिया पूरा आसमान' की केंद्रीय पात्र है। समग्र घटनाक्रम, कथातंत्र और पात्र उसी के इर्द-गिर्द घटते-बढ़ते उपन्यास को नारी सशक्तिकरण के अंतिम लक्ष्य की ओर ले चलते हैं। यह तथ्य रेखांकित करने योग्य है कि रचनाकार आदि से अंत तक कथानक की रोचकता और पाठक की जिज्ञासा को कहीं भी स्खलित नहीं होने देता।

औपन्यासिक कथा फतेहगढ़ और महमूदपुर सरीखे दो मझौले गाँवों से आरंभ होकर महानगर की मायावी छाया को छूती अवश्य है, लेकिन उसका अंत उन्हीं गाँवों की परिधि में होता है, जो स्त्री के प्रति दोयम दर्जे की सोच के वाहक हैं। कहने की ज़रूरत नहीं है कि कथा रचना के धरातल पर लेखक ने व्यापक स्तर पर सूक्ष्मता से सावधानी बरती है। पहले माता-पिता द्वारा विदुषी पुत्री को मनोनुकूल अध्ययन से रोकना, फिर ससुराल में दो बेटियों को जन्म देने पर परंपरागत विकृत मानसिकता का शिकार बनना हमारे समाज की भोथरी सोच को उभारता है। किरण जब इस गटर से बाहर निकलना चाहती है तो ग्रामीण स्त्रियों के ताने उसे और जकड़ने लगते हैं। पूरे परिवेश से लड़ती किरण मायके पहुँचती है तो वहाँ का वातावरण भी प्रतिकूल मिलता है। अंतत: एक स्त्री ही स्त्री की सहायक बनकर आश्रय देती है। ब्रह्म दत्त ने किरण के विद्रोह और मनीषा के दृढ़ सहयोग को उपन्यास का मेरुदंड बनाकर प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास इस मिथ को तोड़ता है कि 'स्त्री ही स्त्री की शत्रु होती है', अपितु बड़े ही दृढ़ निश्चय के साथ उनकी यह कृति संदेश देती है कि सामाजिक परंपराएँ और स्थितियाँ यदि बदल जाएँ यानी नारी को परवाज का खुला अवसर दें तो वह आकाश की समस्त सीमाओं का वरण करने में सक्षम है। किरण आई. ए. एस. बनकर स्त्री शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। उसकी सफलता और साहस के समक्ष सभी परिवारजन और सामाजिक लोग न केवल किरण की जीजीविषा को स्वीकारते हैं, अपितु परंपरागत रीतियों की चौहद्दी से सिर उठाकर बाहर

झाँकते दिखाई देते हैं। भले ही यह सब सामाजिक दबाव का ही प्रतिफल हो।

प्रमुख कथा के साथ उपन्यासकार ने हमारे समाज में व्यापक अशालीन क्रियाओं और नीतियों को भी सूक्ष्मता से रेखांकित किया है। शिक्षा व्यवस्था की बुनियादी कमियाँ, स्वास्थ्य प्रणाली का लचर-लालची ढाँचा, बेरोज़गारी का अभिशाप, युवा शक्ति का दुर्बल अर्थतंत्र, अव्यवहारिक भर्ती-प्रक्रिया और ग्रामीण परिवेश में व्यापक सामाजिक विद्रूपताएँ उपन्यास के उद्देश्य को अत्यंत गंभीरता और व्यापकता के साथ पाठक तक संप्रेषित करते हैं।

वस्तुत: यह उपन्यास कन्या-भ्रूण हत्या के विरुद्ध नारी सशक्तिकरण का पक्षधर बन पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देता है। यह मात्र किरण के जीवन संघर्ष और सफलता की कहानी नहीं है, अपितु हमारे समाज में जहाँ-जहाँ भी इस तरह की पिछड़ी सोच और रूढ़िग्रस्त प्रथाएँ मौजूद हैं यह उपन्यास उन सब के लिए नई राह दिखाती मशाल का प्रतीक है। ममता का यह कथन कि 'एक अनुमान के अनुसार पिछले पच्चीस सालों में हमारे देश में कम से कम एक करोड़ लड़कियों को कोख में मारा गया है। हम हिटलर को साठ लाख यहूदियों के नरसंहार के लिए मानवता का सबसे बड़ा दुश्मन मानते हैं, लेकिन ख़ुद क्या हैं? अपनी ही करोड़ों बेटियों का क़त्ल कर चुके हैं। सोचती हूँ यदि इन सभी बेटियों के भ्रूण एक जगह इकट्ठे कर लिए जाएँ तो शायद हिमालय पर्वत जितना ऊँचा ढेर लग जाएगा। यदि हमारे पास बर्फ का सबसे ऊँचा पर्वत है तो बच्चियों के भ्रूण का उतना ही ऊँचा और शर्मसार करने वाला एक अदृश्य पर्वत भी है।' यह हमारी अभिशप्त मानसिकता को झकझोरता हुआ हमारे मनुष्य होने पर प्रश्न खड़ा करता है। 'आधी दुनिया पूरा आसमान' इस पीड़ा को बड़ी शिद्दत से महसूस करते हुए हमारे जज़्बात को झँझोड़ता है। उपन्यासकार ब्रह्म दत्त ने जिस मनोयोग तथा गहरी पैठ के साथ इस कथा का ताना-बाना बुना है वह पाठक के मन मस्तिष्क पर उतना ही व्यापक प्रभाव छोड़ती है। निश्चित ही यह कृति हमारे परंपरागत जड़ संस्कारों एवं पितृ सत्तात्मक सामंती सोच को बदलने का प्रभावशाली आह्वान है।

समग्र उपन्यास में भाषा का प्रवाह निरंतर बना रहता है। भावाभिव्यक्ति कौशल और शैली में ग़ज़ब का सामंजस्य दिखता है। संभवत: यही कारण है कि पाठक की अध्ययन यात्रा में कहीं कोई ठहराव बाधक नहीं बनता। रचनाकार ने जन भाषा में जन समस्याओं को इतनी सहजता से उकेरा है कि पाठक और रचनाकार के मध्य संप्रेषणीयता एक पुल बन गई है। उपन्यास में प्रयुक्त आप्त वाक्य कथा की गरिमा और उद्देश्य की प्रयोजनिता को नए आयाम देते चलते हैं। यथा- 'स्त्रियों की स्वतंत्रता शायद आसमान में उड़ती पतंग की भाँति होती है। जैसे ही कोई पति या पिता डोर खींच देता है वे धड़ाम से ज़मीन पर आ गिरती हैं।' इस तरह के कथन उपन्यासकार की मनैली बुनावटों को प्रभावी अर्थवत्ता देते हुए स्त्री जाति की स्वतंत्रता को स्थाई और आत्मनिर्भर आधार प्रदान करते हैं।

चरित्रों की संरचना में उपन्यासकार ने जिस सावधानी से सामाजिक परिवेश को घढ़ा है, वह प्रशंसनीय है। उनके सभी पात्र मनोवैज्ञानिक तथा स्वभावगत विशेषताओं के साकार प्रतिबिंब हैं। उपन्यास की कथा-यात्रा करते कभी भी यह एहसास नहीं होता कि यह हमारे आसपास की दुनिया से बाहर के जीव हैं। वास्तव में कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध एवं नारी सशक्तिकरण के पक्ष में 'आधी दुनिया पूरा आसमान' एक उपन्यास मात्र न होकर ऐसा दस्तावेज़ है जो हमें सोचने पर बाध्य करता है।

000

मुँह बोलती तस्वीर

जयपाल

'आधी दुनिया पूरा आसमान' हरियाणा के युवा कथाकार ब्रह्म दत्त शर्मा का इसी वर्ष 2024 में प्रकाशित चर्चित उपन्यास है। इसे शिवना प्रकाशन सीहोर (म.प्र.) ने प्रकाशित किया है। मूल रूप से यह उपन्यास पितृसत्तात्मक संस्कारों में जकड़े एक निम्न-मध्यवर्गीय -ग्रामीण किसान परिवार की सामाजिक त्रासदी पर आधारित है। त्रासदी इस रूप में कि आज भी हिंदोस्तान का ग्रामीण और शहरी मध्यवर्ग सामंती मानसिकता को नहीं छोड़ पा रहा है। सामंती मूल्य किसी भी समाज के विकास में सबसे बड़े अवरोधक हैं। विशेषकर ग्रामीण अंचल और छोटे क़स्बों में इसका स्वरूप बेहद डरावना है। स्त्री -शिक्षा, स्त्री-स्वास्थ्य, स्त्री-आज़ादी, सामाजिक भागेदारी, लैंगिक असमानता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, निर्णय लेने का अधिकार आदि महिलाओं के सवालों के प्रति सामंती सोच बहुत क्रूर है। मध्यकालीन, पिछड़ी हुई और प्रगति विरोधी है। सामंती अवशेषों को संस्कार, धर्म, संस्कृति और परम्पराएँ कह कर पवित्र बना दिया जाता है, जिस पर कोई सवाल नहीं उठा सकता। रामायण और महाभारत तक में ऐसे पात्र हैं जो महिलाओं को अपमानित/ प्रताड़ित/कलंकित करने के बाद भी पूजनीय बने हुए हैं, जिनकी कथाएँ/प्रवचन आम जनता को सुनाए जाते हैं, लेकिन कोई भी श्रोता उन पर सवाल नहीं उठा सकता। भले ही वे स्त्री को नर्क का द्वार या अपवित्र क्यों न बताएँ। इस उपन्यास में भी एक कथावाचक बाबा जी का महिमा मंडन है, जबकि ऐसे प्रवचन आम तौर पर पितृसत्ता को ही प्रतिष्ठित करते हैं।

सामंती सोच के अनुसार बेटा वंश चलाता है, संपत्ति को सुरक्षित रखता है, उसमें वृद्धि करता है। बुढ़ापे का सहारा बनता है। स्वर्ग में लेकर जाता है। गति करवाता है। धार्मिक - सामाजिक अनुष्ठान उससे ही पूरे होते हैं। माता-पिता को अग्नि भी वही देता है। अंतिम संस्कार के बाद रस्म-पगड़ी तक सारी रस्में वही पूरी करता है। पगड़ी भी उसी के सिर पर बाँधी जाती है। अगर हर कार्य में समाज का केंद्र बेटा ही है तो फिर समाज में हर कोई बेटा ही चाहेगा, बेटी को भला कोई क्यों चाहेगा ..?

भ्रूण हत्या अपने आप में कुछ नहीं है, उसकी जड़ में तो बेटा बैठा हुआ है। कैंची डाक्टर के हाथ में नहीं इस बेटे के हाथ में है, जो सारे परिवार की आँख का तारा है। विवाह के बाद पहली संतान बेटा होना चाहिए। अगर पहली लड़की हो गई तो फिर दूसरा तो सौ

प्रतिशत बेटा ही होना चाहिए, नहीं तो फिर अबॉर्शन पर अबॉर्शन, जब तक बेटा न हो जाए। यही मूल चिंता है, इस इस उपन्यास की।

'आधी दुनिया पूरा आसमान' की नायिका किरण को विवाह के बाद एक बेटी होती है। वह और बच्चा नहीं चाहती लेकिन परिवार के दबाव में उसे एक चांस लेना पड़ता है। परिवार और पति के दबाव के बावजूद वह लिंग परीक्षण नहीं करवाती। दूसरी बेटी होने पर पति और परिवार नाराज़ हो जाता है। घर में प्रति दिन क्लेश रहने लगता है। 'दो-दो बेटियाँ वाली' कहकर उसे घर में और गाँव में भी सार्वजनिक तौर पर अपमानित किया जाता है। अगली बार बेटा हो, इसके लिए साधुओं को खाना, गाय को तीन वक्त रोटी, चींटियों को प्रतिदिन आटा, पक्षियों को पानी आदि देने का उपदेश हर रोज सुनना पड़ता है। किरण को गोगा पीर की चौकी और माता के जागरण में ले जाया जाता है। नारियल-फलों का प्रसाद ऐसे दिया जाता है मानों इन्हीं फलों के बीच में बेटा बैठा हुआ है। उसे वहाँ घंटो बैठने के लिए विवश किया जाता है ताकि बेटे का आशीर्वाद मिल जाए। पति और ससुराल पक्ष द्वारा उसे तीसरा और चौथा चांस लेने के लिए मजबूर किया जाता है। तीसरी और चौथी बार भी टैस्ट के बाद बेटी का पता लगने पर ज़बरदस्ती उसका अबॉर्शन करवा दिया जाता है। इसे हम पारिवारिक गुंडागर्दी या ज़बरदस्ती भी कह सकते हैं। इसके बाद घर में क्लेश बढ़ते-बढ़ते बात मार पिटाई तक पहुँच जाती है। किरण का पति सुखबीर गाली देकर कहता है - "पाँव की जूती हो पाँव में ही रहो, सिर पर बैठने की कौशिश मत करो।" पिटाई और अपमान से तंग आकर किरण दोनों बेटियों को लेकर अपने मायके चली जाती है। मायके में भी बेटियों में कौन रखना चाहता है? वहाँ से उसे बंबई अपनी सहेली मनीषा के पास जाना पड़ता है। मुंबई में रहकर वह भारतीय प्रशासनिक सेवा की तैयारी करती है। अनेक दिक्कतों और मुसीबतों को सहती हुई अंतत: सफल रहती है। प्रशासनिक अधिकारी बनने पर उसे गाँव में वापिस बुलाया जाता है, और सम्मानित किया जाता है। सारा गाँव, पति और उसका परिवार गौरवान्वित महसूस करता है और उससे माफ़ी माँगता है। तलाक़ लेने जा रहा परिवार उसे फिर से अपने घर की बहू बना लेता है। यही इस उपन्यास की मुख्य कथा है। एक दुखांत, सुखांत में बदल जाता है। इसे एक आदर्शवादी अंत भी माना जा सकता है जैसा कि एक अरसे तक हिंदी फिल्मों में भी सुखांत फिल्में ही बनाई जाती थी। यहाँ सवाल दूसरा है-जो लड़कियाँ बड़ा ऑफ़िसर नहीं बन पाती, वे क्या करें, कहाँ जाएँ? क्या उन्हें सम्मान के साथ जीने का हक़ नहीं..? क्या उन्हें सम्मान तभी मिलेगा जब वे कोई बड़ा अफ़सर बन जाएँगी। यदि नहीं बन सकी तब समाज का रवैया क्या होगा। ऑफ़िसर बनने के बाद भी क्या बेटे का महत्त्व समाप्त हो जाता है...?? बिल्कुल नहीं । उपन्यास के अंत में ससुराल के गाँव की एक औरत गुलाबो, किरण के अफसर बनने पर उसे बधाई देती हुई कहती है कि बस एक कमी रह गई है....भगवान ने जहाँ इतना कुछ दिया है, बस एक बेटा भी देता.!

दूसरी महिला चंपा फट कहती है- अरी गुलाबो तू चिंता क्यों करती है, भगवान के घर देर है अंधेर नहीं।

'किरण के चेहरे पर गंभीरता और मायूसी छा गई....' यह उपन्यास की अंतिम पंक्ति है। कथा का अंत सुखांत होते हुए भी नायिका मायूस है....उसके लिए तो यह दुखांत ही है जबकि उपन्यास की पूरी कथा इस आदर्श पर चलती है कि बड़ा अफ़सर बनने पर उसके प्रति समाज की पितृसत्तात्मक दृष्टि बदल जाएगी पर ऐसा होता नहीं। जिसका स्पष्ट संदेश है कि समस्या इतनी आसान भी नहीं है, जितनी कि समझ ली गई है कि लड़कियाँ अगर ऊँचे-ऊँचे पदों पर पहुँच जाएँ तो बेटे का महत्त्व अपने आप कम हो जाएगा या दोनों को बराबर समझ लिया जाएगा... भ्रूण हत्या रुक जाएगी। किरण के आई. ए. एस. अफसर बनने पर भी जिस तरह बेटे की कमी का सवाल उठाया गया है, यह अप्रत्याशित नहीं है। बल्कि सामाजिक यथार्थ यही है। इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि शिक्षा प्राप्त करने से महिला का सम्मान बढ़ा है, भ्रूण हत्या भी कम हुई है; लेकिन महिलाओं के प्रति दुष्कर्म की घटनाएँ लगातार बढ़ रही हैं। महिलाओं के प्रति अत्याचार कम नहीं हो रहे हैं। आज भी वह दूसरे दर्जे की नागरिक समझी जाती है। पंचायत, विधानसभा और लोकसभा में उनकी उपस्थिति महिला के प्रतिनिधित्व की मुँह बोलती तस्वीर है। दुख की बात है कि हरियाणा के पढ़े-लिखे वर्ग में स्त्री का अनुपात कम है और कम पढ़े लिखे समाज में अधिक। किरण हैरान थी कि चंडीगढ़ और हरियाणा के दूसरे शहरों से मेवात जैसे पिछड़े इलाके का लड़कियों का लिंगानुपात बेहतर है। यही स्थिति देशभर के खुशहाल राज्य और पिछड़े राज्यों की भी है, लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यह सब कुछ शिक्षा के प्रसार या बढ़ती खुशहाली के कारण हो रहा है। इस कुरीति को व्यापक नज़रिये से देखना होगा।

दरअसल यह समस्या हमारे समाज के ताने-बाने में ही गुँथी हुई है। आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचा बेटे के इर्द-गिर्द घूमता है जबकि बेटी उस बेटे के इर्द-गिर्द घूमती है। ऐसे में समस्या तो बहुत जटिल और चुनौतीपूर्ण है। लेखक स्वयं कहता है 'स्त्री-पुरुष के बीच समानता आने में.. अभी सदियाँ लग जाएँगी।'

लेकिन हमें हतोत्साहित नहीं होना है और लेखक की तरह लगातार प्रयास करते रहना है। सामाजिक बदलाव को गति देनी होगी ताकि एक दिन स्त्री भी बराबरी का गरिमापूर्ण जीवन जी सके। उसे भी मनुष्य माना जाए। शायद यही इस उपन्यास का संदेश भी है।

उपन्यास की भाषा आम बोलचाल की मध्यवर्गीय भाषा है। संवाद उत्तरी हरियाणा के गाँवों के पात्रों के अनुकूल हैं। परिवेश भी वहीं का है। फतेहगढ़ और महमूदपुर नाम के कई गाँव इस इलाके में हैं। उपन्यास इन्हीं गाँवों से शुरू होकर इन्हीं गाँवों में समाप्त होता है। कहानी में स्त्री-पात्र अधिक हैं और कहानी भी स्त्री पात्रों के इर्द-गिर्द ही घूमती है। फ़्लैश-बैक शैली के कारण उत्सुकता बनी रहती है और रोचकता भी।

000

केंद्र में पुस्तक

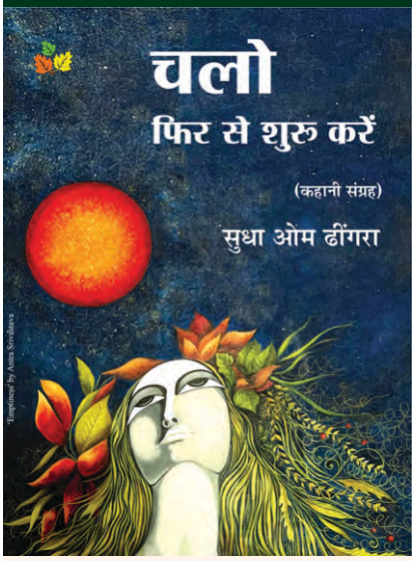

(कहानी संग्रह)

चलो फिर से शुरू करें

समीक्षक : दीपक गिरकर, ममता त्यागी, रेखा भाटिया

लेखक : सुधा ओम ढींगरा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016, मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

ममता त्यागी
ईमेल- mamta.t80@gmail.com

रेखा भाटिया
9305 लिंडन ट्री लेन, शार्लेट, नॉर्थ कैरोलाइना, यू एस ए-28277
मोबाइल-704-975-4898
ईमेल-rekhabhatia@hotmail.com

अलग रंग लिए हुए रोचक कहानियाँ

दीपक गिरकर

सुधा ओम ढींगरा ने प्रवासी साहित्यकार के रूप में अपनी महत्त्वपूर्ण जगह बनाई है। भारत के जालन्धर (पंजाब) में जन्मीं सुधा ओम ढींगरा अमेरिका में कई वर्षों से रह रही हैं। सुधा ओम ढींगरा अमेरिकी संस्कृति से अच्छी तरह से परिचित होने के बावजूद अपनी भारतीय संस्कृति तथा भारतीय रीति-रिवाजों को नहीं भूली हैं। सुधा जी के लेखन का सफ़र बहुत लंबा है। सुधा जी की प्रमुख रचनाओं में नक़्क़ाशीदार केबिनेट, दृश्य से अदृश्य का सफ़र (उपन्यास), सच कुछ और था, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, कमरा नंबर 103, कौन सी ज़मीन अपनी, खिड़कियों से झाँकती आँखें, चलो फिर से शुरू करें (कहानी संग्रह), सरकती परछाइयाँ, धूप से रूठी चाँदनी, (कविता संग्रह), विचार और समय (निबंध संग्रह), विमर्श - अकाल में उत्सव, विमर्श - जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था, विमर्श - रूदादे-सफ़र (आलोचना पुस्तक) और सार्थक व्यंग्य का यात्री : प्रेम जनमेजय, इत्यादि पुस्तकों का संपादन, एक सौ पचास से अधिक संग्रहों में भागीदारी शामिल है। लेखन में इतनी विविधता एक साथ कम देखने को मिलती है। देश-विदेश में सुधा जी के पाठकों का एक बड़ा वर्ग है। सुधा ओम ढींगरा समकालीन हिन्दी कहानी की महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। सुधा ओम ढींगरा की कई कहानियाँ चर्चित रही हैं। पाठक सुधा जी की कहानियों को पढ़ना प्रारम्भ करता है तो एक बैठक में उन्हें पढ़कर ही साँस लेता है। सुधा जी के कथा साहित्य में नारी मन, उनकी समस्याओं, नारी की अस्मिता और उनके संघर्ष का यथार्थ चित्रण स्पष्ट रूप से झलकता है। सुधा ओम ढींगरा का 'कौन सी ज़मीन अपनी' कहानी संग्रह तथा 'नक़्क़ाशीदार केबिनेट' और 'दृश्य से अदृश्य' का सफ़र उपन्यास बहुत अधिक चर्चित रहे थे। सुधा ओम ढींगरा के उपन्यास व कहानी लेखन की रोचक शैली है, जो पाठक के दिल को छू जाती है। इनके कथा साहित्य में शिल्पगत प्रयोग देखने को मिलते हैं। सुधा ओम ढींगरा का कहानी संग्रह 'चलो फिर से शुरू करें' बेहद रोचक है। भावनात्मक और संवेदनाओं के स्तर पर इन कहानियों में भारतीयता की झलक साफ-साफ परिलक्षित होती हैं।

'कभी देर नहीं होती' प्रस्तुत कहानी संग्रह की एक महत्त्वपूर्ण कहानी है। यह एक मनोविश्लेषणात्मक कहानी है। आत्मकथात्मक शैली में यह कहानी लिखी गई है। अतीत-

वर्तमान में आवाज़ाही करते हुए कहानी आगे बढ़ती चलती है। आनंद उर्फ़ नंदी पात्र के माध्यम से बिखरे परिवार को जोड़ने का संदेश देती कहानी है। बच्चों के नाना-नानी की चालाकी, नाना-नानी द्वारा बच्चों को उनके दादा-दादी के ख़िलाफ़ भड़काना, उन बच्चों को दादा-दादी के प्यार भरे माहौल से दूर रखने के षड्यंत्र के बावजूद बच्चों के पिताजी ने अपने बच्चों के भविष्य के लिए चुप्पी साध ली थी। यह एक पत्नी द्वारा अपने मायके वालों के सहयोग से अपने पति के उत्पीड़न की कहानी है। अमेरिका के एक शहर में ही काफी सालों से रह रहे आनंद को जब उसकी बुआ नंदी कहकर पुकारती है तो आनंद अपनेपन से भर उठता है। यह कहानी एक साथ दो देशों, दो संस्कृतियों, दो परिवेश में घटित होती है। कथाकार इस कथा में स्याह होती संवेदनाओं को उभार कर उनमें फिर से रंग भर देती हैं। 'वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र' कहानी हमें एक ऐसी घटना की जानकारी देती है जो हम कभी-कभी फ़िल्मों में देखते हैं। यह एक सामयिक और ज्वलंत विषय पर रोचक कहानी है। यह एक चीनी युवती को दो भारतीय पत्रकार युवतियों द्वारा बिना शोर मचाए बड़ी सावधानी से ड्रग माफ़िया से मुक्त कराने की कहानी है। हमारे देश में इतनी सतर्कता और सावधानी से इस तरह के काम नहीं होते हैं। ये अमेरिका और यूरोपीय देशों से सीखने लायक़ है।

'उदास बेनूर आँखें' कहानी में चर्च का पादरी अगाध सुंदरी ड्यू स्मिथ का बलात्कार करता है। चर्च का पादरी एचआईवी वायरस से ग्रसित था। ड्यू स्मिथ भी एचआई वी वायरस से ग्रसित हो जाती है इसलिए वह गौरव से शादी नहीं करना चाहती है। चर्च के पादरी को एड्स हो जाता है और वह इस बीमारी से मर जाता है। यह ड्यू स्मिथ और गौरव की आत्मीय प्रेम की कहानी है। यह कहानी कथा नायिका ड्यू स्मिथ उर्फ़ शबनम के अंतर्द्वंद्व की कहानी है। जिस मानसिक स्थिति से ड्यू स्मिथ उर्फ़ शबनम गुज़र रही है उसे अपनी लेखनी की ख़ूबी के माध्यम से जिस कलात्मकता के साथ लेखिका ने उकेरा है वह काबिले-तारीफ़ है। इस कहानी में वह बेचैनी, वह छटपटाहट पूरी शिद्दत के साथ महसूस की जा सकती है जो लेखिका के साथ साथ पूरे समाज के चिंता का विषय है। 'इस पार से उस पार' कुछ लोगों को भविष्य में होने वाली घटनाओं की अनुभूति पूर्व में ही हो जाती है। भविष्य में होने वाली घटना का पहले से संकेत मिलना ही पूर्वाभास है। कुछ लोगों में यह अतीन्द्रिय ज्ञान काफी विकसित होता है। सामान्यत: हम पाँच ज्ञानेन्द्रियों के जरिए वस्तु या दृश्यों का विवेचन कर पाते हैं, परंतु कभी-कभी या किसी में बहुधा छठी इन्द्रिय जागृत हो जाती है। साँची को इस तरह की अनुभूतियाँ बचपन से ही होने लगी थीं। उसने अपने परिवार के लोगों को और पड़ोसियों को घटना घटने के पूर्व ही बता दिया था लेकिन साँची के परिवार के लोगों ने और पड़ोसियों ने साँची की बातों पर ध्यान नहीं दिया। एक दिन वह अपने घर पर अपने पिताजी को कहती है कि कल आपके क्लिनिक में आपके मित्र मोदी अंकल आएँगे और आपसे किसी काग़ज़ पर साइन करने को कहें तो आप साइन मत करना। मैंने घर पर पुलिस को आते देखा है, सब बहुत रो रहे हैं। साँची को परिवार के सभी लोग डाँट देते हैं। अगले दिन साँची के पिताजी मोदी अंकल के पेपर्स पर बिना पढ़े हस्ताक्षर कर देते हैं। साँची के पिताजी के मित्र प्रदीप मोदी ने बैंक से लोन लिया था और ग्यारंटी के पेपर्स पर साँची के पिताजी के हस्ताक्षर लिए थे। प्रदीप मोदी बैंक से लोन लेकर ग़ायब हो गया था। बैंक ने कोर्ट में केस दायर कर दिया था। एक दिन पुलिस साँची के पिताजी के नाम का सम्मन लेकर आती है। हर बार कोर्ट की तारीख़ लगती है और साँची के पिताजी अपना क्लिनिक छोड़कर बटाला शहर में प्रकरण की तारीख़ पर कोर्ट में उपस्थित होने के लिए बस से जाते हैं। एक दिन जब साँची के पिताजी बटाला के कोर्ट में जाने को घर से निकलते हैं तब साँची अपने पिताजी से कहती है कि आज आपको कोई मिलेगा, जिससे आप अपना केस जीत जाएँगे। साँची के पिताजी डॉक्टर पॉल बस में बैठते हैं तो उन्हें बस में एक व्यक्ति मिलते है। उनसे बातचीत में डॉक्टर पॉल अपने साथ हुए विश्वासघात की और कोर्ट के सम्मन की पूरी बात बताते हैं। जब डॉक्टर पॉल कोर्ट में पहुँचते हैं तो वही बस वाला व्यक्ति कोर्ट में जज की कुर्सी पर बैठा हुआ दिखता है। डॉक्टर पॉल के वकील डॉक्टर पॉल से कहते हैं इस जज ने आज ही इस कोर्ट में ज्वाइन किया है और यह जज बहुत सख्त है। जज ने दस मिनट के अंदर ही केस ख़ारिज कर दिया। जज ने कहा पहले प्रमोद मोदी के घर, ज़मीनों और दुकानों की कुर्की की जाए। उससे लेनदार पार्टी अपना पैसा वसूल करे। प्रमोद मोदी को ढूँढ़ा जाए। दो साल से एक शरीफ़ आदमी को तंग किया जा रहा है। साँची के पिताजी केस जीत गए।

'चलो फिर से शुरू करें' पारिवारिक संबंधों पर आधारित कहानी है। इस कहानी में पुरुष उत्पीड़न की दास्तान है। बहू मार्था, सास ससुर को हमेशा डाँटती रहती है। सास-ससुर बहू से हमेशा माफ़ी माँगते रहते हैं। वह अपने पति कुशल को भी अपमानित करती रहती है। वह अपने पति कुशल को क़र्ज़दार बनाकर, सारी ज्वेलरी समेटकर, बच्चों को कुशल के पास छोड़कर चली जाती है और कुशल से तलाक़ ले लेती है। कुशल अपने बच्चों को लेकर अपने माता-पिता के पास आ जाता है और वह अपने माता-पिता से कहता है कि आप इन बच्चों को वैसा ही सँभालें जैसे मुझे सँभाला था। यह कहानी सन्देश देती है कि उम्र के किसी भी पड़ाव में समस्याएँ आ जाएँ तब भी उन समस्याओं का सामना करना चाहिए। 'वह ज़िन्दा है' गर्भवती कविता से हॉस्पिटल की उल्ट्रासाउंड करने वाली नर्स कीमर्ली साफ-साफ शब्दों में कह देती है कि मिसेज सिंह युअर बेबी इज डेड। यह सुनकर कविता को बहुत बड़ा आघात लगता है और वह बेहोश हो जाती है। कविता दो बच्चे गर्भ में पहले ही खो चुकी थी। गर्भ में यह तीसरा बच्चा था। कविता का पति हॉस्पिटल के पार्किंग लॉट में अपनी कार पार्क करके आता है तब तक यह घटना घट चुकी होती है। डॉ. क्लार्क राइस, गायनोकोलॉजिस्ट आती है और नर्स कीमर्ली से पूछती है कि तुमने मिसेज सिंह से क्या बोला था कीमर्ली ने कहा मैंने कविता से

कहा था मिसेज सिंह युअर बेबी इज डेड। मैंने अपना फ़र्ज़ निभाया। इस आघात से कविता मनोरोगी बन जाती है। कविता का पति अस्पताल के मैनेजमेंट से इस बात की लड़ाई लड़ रहा है कि वह सच बोलने के ख़िलाफ़ नहीं है पर सच को बोला कैसे जाए ! अस्पतालों में इसे अनिवार्य रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए। जिससे रोगी को घातक क्षति से बचाया जा सके।

'भूल-भुलैया' कहानी सोशल मीडिया में चल रहे और फॉरवर्ड हो रहे संदेशों को लेकर है। सोशल मीडिया में कई तरह के संदेश फॉरवर्ड होते हैं। कुछ दिनों से सोशल मीडिया पर लगातार संदेश चल रहे थे कि एशियाई लोगों को अकेले देखकर उनका अपहरण कर लिया जाता है और अपहरण करके उन लोगों को ट्रकों से दूसरे स्थानों पर ले जाते है और उनके अंग निकालकर बेच देते हैं। एक दिन सुबह जब सुरभि जॉगिंग कर रही थी तब उसके पीछे एक युवक और एक युवती उसके आ रहे थे। सुरभि के दिमाग़ में सोशल मीडिया में फैली हुई वही बात चल रही थी कि ये दोनों मेरे पीछे मेरा अपहरण करने आ रहे हैं। वह पुलिस को फ़ोन कर देती है। पुलिस बताती है कि वे दोनों तो तुम्हें सुरक्षा देने के लिए तुम्हारे पीछे लगे हुए थे। उस देश में स्वयंसेवी संस्थाएँ भी लोगों की सुरक्षा करती हैं। 'कंटीली झाड़ी' कहानी को लेखिका ने काफी संवेदनात्मक सघनता के साथ प्रस्तुत किया है। इस कहानी का शीर्षक प्रतीकात्मक है। कहानी का सृजन बेहतरीन तरीक़े से किया है। नेहा की संवेदनाओं को लेखिका ने जिस तरह से इस कहानी में संप्रेषित किया है वह काबिले-तारीफ़ है। इस कथा में अनुभूतियों की मधुरता है, यह कहानी सुधा जी के सामर्थ्य से परिचित कराती है। कहानी में अनुभा जो कि डिप्टी कमिश्नर की बेटी है इसलिए उसे बहुत घमंड है। वह कॉलेज में अपने पिताजी के पद के कारण सभी पर रौब जमाए रखती है। लेकिन उसका रौब नेहा पर नहीं चलता है। नेहा सुन्दर भी है और उससे योग्य भी है। तब अनुभा नेहा को बदनाम करने की कोशिश करती है। नेहा की शादी के बाद भी वह उसके ससुराल में नेहा के ड्राइवर के साथ भाग जाने की झूठी ख़बर फैलाकर नेहा को बदनाम करती है तब नेहा सभी को बताती है कि ड्राइवर के साथ मैं नहीं अनुभा भागी थी।

'अबूझ पहेली' कहानी की नायिका मुक्ता को वर्ल्ड ट्रेड सेंटर 9/11 हादसे के दृश्य कुछ दिन पहले ही दिखने लग जाते हैं। उसे घटना घटित होने के पहले ही आभास हो जाता है कि कुछ अनहोनी होने वाली है। इस वजह से वह उदास रहने लगती है, उसके हाथों-पैरों में शक्ति नहीं रहती है और वह निर्जीव-सी हो जाती है। वह इस दृश्य की चर्चा अपने बेटे और अपने पति से कर लेती है। वे दोनों इस पर विश्वास नहीं करते हैं और उनको लगता हैं कि मुक्ता बीमार है। मुक्ता पेशे से साइकोलॉजिस्ट है। मुक्ता के पति को 9/11 को ही व्हाया न्यूयॉर्क यूके एक मीटिंग के लिए जाना था लेकिन जिस हवाई जहाज़ से वे जाने वाले थे उसका दरवाज़ा ख़राब हो गया था और वह फ़्लाइट कैंसल हो गई थी और फिर 9/11 की घटना घटित हो गई थी। 'कल हम कहाँ तुम कहाँ' दीपक और पूजा के आत्मीय प्रेम की उत्कृष्ट कोटि की अनूठी कहानी है जो कथ्य और अभिव्यक्ति दोनों ही दृष्टि से पाठकीय चेतना पर अमिट प्रभाव छोड़ती है। इस कहानी में दीपक और पूजा के कॉलेज की खट्टी-मीठी स्मृतियाँ हैं। कथाकार ने इस कहानी को इतने बेहतरीन तरीक़े से लिखा है कि पूजा के कॉलेज का जीवन्त चल चित्र पाठक के सामने चलता है।

इस कहानी संग्रह की कहानियों में कथाकार ने असंवेदना, अमानवीयता, पारिवारिक स्नेह-सौहार्द, मनोविज्ञान, रिश्तेदारों की संवेदनहीनता, पारिवारिक रिश्तों का विद्रूप चेहरा, वृद्ध विमर्श, पुरुष उत्पीड़न, बलात्कारी धर्मगुरु, सौतेले पिता की असंवेदना, ड्रग तस्कर, विजिलेंट सिस्टम, आत्मिक प्रेम, पूर्वाभास इन सब आयामों को विश्लेषित किया है। इन कहानियों में कुछ ऐसे चरित्र हैं जो अपनी बौद्धिकता और पुस्तक पढ़ने की आदत के कारण सदैव याद किए जाते रहेंगे। इनमें प्रमुख हैं 'वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र' की शिल्पा और पूजा, 'इस पार से उस पार' के डॉ. पॉल और सहयात्री जज, 'भूल भुलैया' की सुरभि, 'कल हम कहाँ तुम कहाँ' के दीपक और पूजा।

'इस पार से उस पार' और 'अबूझ पहेली' कहानियों में कहानियों के मुख्य किरदार को भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास हो जाता है। अमेरिका में नस्लवाद की जड़ें बहुत गहरी हैं। 'उदास बेनूर आँखें' और 'चलो फिर से शुरू करें' कहानियों में रंगभेद का अंकन है। 'वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र', 'इस पार से उस पार' और 'भूल भुलैया' कहानियों के पात्र पढ़ने में रुचि रखते हैं। लेखिका की सामाजिक सरोकारों के प्रति सजगता को 'भूल-भुलैया', 'वह ज़िन्दा है' में साफ देखा जा सकता है।

सुधा जी जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों को लेकर कुशलता से कहानियाँ रचकर अपनी सर्जनात्मक शक्ति का परिचय देती हैं। कथाकार की विशेषता है कि वे गूढ़ बातों को सहज और सरल शब्दों में कह देती हैं। सुधा जी की कहानियों में सिर्फ पात्र ही नहीं समूचा परिवेश पाठक से मुखरित होता है। स्थान और प्रकृति को बहुत ही निकट से परिचित होकर कथाकार इनका वर्णन रोचकता से करती हैं, इसी वजह से कहानियाँ पाठक को बहुत अधिक प्रभावित करती है। कथाकार ने कहानियों के चरित्रों को परिवेश और परिस्थितियों के अनुसार ही प्रस्तुत किया हैं। कथाकार ने पात्रों का चरित्रांकन स्वाभाविक रूप से किया है। कथाकार ने किरदारों को पूर्ण स्वतंत्रता दी है। इनकी कहानियों के पात्र ज़ेहन में हमेशा के लिए बस जाते हैं। सहज और स्पष्ट संवाद, घटनाओं, पात्रों और परिवेश का सजीव चित्रण इस संग्रह की कहानियों में दिखाई देता हैं। इन कहानियों में विद्रोह के लिये कहीं कोई शोर शराबा नहीं है। कहानियाँ बिल्कुल सीधे और सहज तरीके से रची गई है। लेखिका ने पात्रों के विभिन्न भावों को मार्मिकता, सहजता और सकारात्मक रूप से अपनी इन कहानियों में अभिव्यक्त किया हैं। भाषा में चित्रात्मकता है। इस संग्रह की कहानियाँ पाठक के जेहन में अविस्मरणीय छाप छोड़ जाती हैं। सुधा ओम ढींगरा के कथा

साहित्य में रोचकता तथा सकारात्मकता पाठकों को आकर्षित करती है। इस कहानी संग्रह का नाम 'चलो फिर से शुरू करें' बहुत सार्थक है क्योंकि अधिकाँश कहानियाँ इसी तरह की हैं कि जीवन में अभी तक जो घटित हो गया है उन सब को छोड़कर जीवन में सकारात्मक रूप से आगे बढ़ना है। इनकी कहानियाँ कथानक और घटनाओं की दृष्टि के साथ-साथ भावनात्मक धरातल पर कुछ अलग रंग लिए हुए है। सुधा ओम ढींगरा सशक्त और रोचक कहानियाँ रचने के लिए बधाई की पात्र हैं। बेशक 'चलो फिर से शुरू करें' एक पठनीय और संग्रहणीय कृति है।

000

जीवन में नवरस का संचार

ममता त्यागी

सुप्रसिद्ध प्रवासी साहित्यकार सुधा ओम ढींगरा जी के सद्य प्रकाशित कहानी संग्रह 'चलो फिर से शुरू करें' पर अपने कुछ विचार रखना चाहूँगी। जब इस पुस्तक को मैंने पहली बार देखा तो शीर्षक पढ़ते ही उत्सुकता हुई आख़िर क्या शुरू करने की बात कि जा रही है, और जानने की जिज्ञासा ने जीवन के विविध रंगों से सजा पूरा कहानी संग्रह दो दिनों में ही पढ़वा दिया। सुधा जी के लेखन की यह ख़ास विशेषता है कि उनकी कहानियाँ एक साथ कई भावों को समाहित किए हुए होती हैं। उन्हें पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है मानों जीवन में नव रस का संचार हो रहा हो। इनकी कहानियों में इनके सुदीर्घ अनुभव और एक लंबे प्रवासी जीवन की छाप स्पष्ट दिखायी देती है। अमेरिका और भारत दोनों ही देशों की संस्कृतियों और परंपराओं को साथ लेकर चलना इनकी विशेषता है। चाहे वह व्यक्तिगत जीवन में हो या फिर इनके लेखन में। बड़ी सहजता से ये अपने लेखन में तथ्यों के साथ भावों का सम्मिश्रण कर पाठकों को बाँध लेती हैं। इनका यह कहानी संग्रह भी विभिन्न भावों एवं जीवन के अनेक रसों से सुसज्जित एक मनोरम पुष्प गुच्छ है। मेरा मानना है कि इन कहानियों के बारे में पढ़ते समय आप सभी जीवन के विविध रंगों में डूब कर नवरसों का आस्वादन करेंगे।

तो आइए सबसे पहले बात करते हैं इस संग्रह की पहली कहानी 'कभी देर नहीं होती है' की, जो विदेशी पृष्ठभूमि में रची होने पर भी भारतीय संस्कारों में रची बसी है। इस कहानी में रक्त संबंधों की गरिमा लिए ममत्व, द्वेष, लालच, संशय, दृढ़ता जैसे कितने ही भावों का समावेश दृष्टिगोचर होता है। नंदी से आनंद और आनंद से फिर नंदी बन जाने की कथा समाज के कई मार्मिक सत्य उद्घाटित करती चलती है। इनकी अगली कहानी एक सर्वथा अलग-सा और रोचक शीर्षक लिए हुए है 'वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र'। इस कहानी में, सुधा जी बड़ी ही सरलता से भारत और अमेरिका की रेल के सफ़र का तुलनात्मक विवेचन करती हुईं कथानक में विस्मय, उत्तेजना, भय और शंका की पृष्ठभूमि तैयार करती हैं और तस्करी जैसी गंभीर समस्या को पाठकों तक ले आती हैं। कहानी के मुख्य पात्र दोनों पत्रकारों द्वारा सूक्ष्मता से परिस्थिति का अवलोकन, अमेरिका की पुलिस की आधुनिक तकनीक का प्रयोग करती त्वरित कार्यप्रणाली और कठिन परिस्थिति में भी रेल में बैठे लोगों का संयमित व्यवहार, (भारत के रेल यात्रियों से एकदम विपरीत) यह सब कथानक को बहुत मज़बूत बनाता है। ऐसा प्रतीत होता लेखिका ने अत्यंत शोध के उपरांत ही इन घटनाओं को रोचक ढंग से कथानक में पिरोया है और इसमें वह सफल भी हुई हैं।

इसी तरह 'वह ज़िन्दा है' कहानी में उन्होंने स्त्री मनोविज्ञान की गहराइयों से परिचित करवाया है। एक स्त्री के लिए माँ बनना उसके जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता होती है यदि किसी कारणवश उसकी अपनी संतान अजन्मी रह जाती है और तब वह जिस त्रासदी से गुज़रती है यह कल्पना से परे है। साथ ही उन्होंने दर्शाया है कि अस्पताल में काम करने वाली कतिपय नर्सों के लिए मानवता से परे उनका प्रोटोकॉल महत्त्वपूर्ण होता है इंसान की ज़िंदगी नहीं। यह एक बहुत बड़ी विडंबना है, भारत में तो अक्सर ऐसा देखा गया कि बहुत से डॉक्टर और नर्स मानवीय संवेदनाओं को भूल कर केवल मशीन की तरह कार्यरत हैं, परंतु अमेरिका जैसे देश में भी ऐसा संभव है यही लेखिका ने अत्यंत मार्मिक ढंग से दर्शाया है। लेखिका ने जीवन की कई त्रासदियों और समस्याओं को बड़ी सहजता से अपनी कहानियों में पिरो कर समाज की आँखें खोलने का प्रयास ही नहीं किया अपितु सकारात्मक सोच का परिचय देते हुए समाधान भी निकालने का प्रयास किया है।

'उदास बेनूर आँखें' की नायिका ड्यू जिसे नायक शबनम कहता है, समाज की अनगिनत लड़कियों की तरह व्यभिचार का शिकार हो जीवन भर अपनी ग़लती न होते हुए भी सज़ा भोगती रहती है। समाज उन्हें ही दोषी ठहरा देता है और यदि यह व्यभिचार किसी तथाकथित धर्मगुरु ने किया हो तो उस पर दोष लगाने का कोई साहस नहीं जुटाता अपितु लड़की को ही दबा दिया जाता है। आख़िर उस लड़की का क्या दोष है जो उसे सज़ा भुगतनी पड़ती है, शबनम के माध्यम से लेखिका ने समाज की आँखों पर पड़ा पर्दा हटाने का प्रयास किया है। इस कहानी संग्रह में जीवन के विविध रंग दृष्टिगोचर हो रहे हैं। लेखिका जीवन के कई अनछुए पहलूओं को अपनी कहानियों के माध्यम से अत्यंत रोचक ढंग से पाठकों के सम्मुख लाने में सफल हुई हैं।

जीवन में अनेक बार कुछ ऐसा घटित हो जाता है जिसे तर्क की कसौटी पर नहीं परखा जा सकता और विज्ञान के पास भी इन जटिल प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं होता। सुधा जी ने एक कुशल मनोवैज्ञानिक की पारखी दृष्टि से ऐसी ही कुछ घटनाओं को रोचक ताने बाने में बुनकर कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। 'अबूझ पहेली' कहानी की नायिका ऐसी ही पारलौकिक शक्तियों से रूबरू होती दिखायी देती है जिसके माध्यम से अमेरिका में नाइन इलेवन के हुए महाविनाश को लेखिका सामने लायी हैं। इसी तरह 'इस पार से उस पार' कहानी में भी नायिका साँची को पूर्वाभास होते हैं और वह इसके माध्यम से कई जीवन बचाने में सफल होती है। हालाँकि उसकी इस अलौकिक शक्ति को उसका परिवार और समाज आसानी से स्वीकार नहीं करता परंतु अंतत: जब साँची की कही बातें सत्य प्रमाणित

होती हैं तो सबके सामने स्वीकारने के अलावा कोई और विकल्प ही नहीं बचता। इस तरह की कहानियाँ बहुत कुछ कह जाती हैं और पाठकों को सोचने पर विवश भी कर जाती है।

'कँटीली झाड़ी' कहानी में सुधा जी ने एक ऐसी सामाजिक समस्या को उठाया है जो भारतीय समाज में अपने पैर पसारे हुए है। पिता का उच्च पद पर होना कई बार बच्चों को अनावश्यक रूप से अहंकारी बना देता है। जिसमें वह अपना विवेक खो कर दूसरों की ज़िंदगी में हस्तक्षेप करते हुए उनका जीवन जीना दूभर कर देते हैं। अहंकार दीप्त अनुभा शहर के डिप्टी कमिश्नर की बेटी है, इसी ग़ुरूर में वह नेहा पर अनेक दोषारोपण कर उसकी ज़िंदगी तबाह करना चाहती है। परंतु सत्य को कभी न कभी सामने आना ही होता है और तब सबको अनुभा की असलियत पता चल जाती है। परिणामस्वरूप अनुभा का अपना जीवन एक कँटीली झाड़ी के समान बन कर रह जाता है।

वर्तमान में डिजिटल मीडिया आज हमारे जीवन में हावी हो गया है इससे कोई भी अछूता नहीं रहा। लेखिका ने 'भूल भुलैया' कहानी के माध्यम से इसी समस्या पर अत्यंत रोचक ढंग से गहरा कटाक्ष किया है। किस तरह भ्रामक संदेशों के जाल में फँसकर हम अपने विवेक को प्रयोग में नहीं लाते और अफ़वाहों पर सहजता से विश्वास कर लेते हैं।

और अंत में बात करूँगी एक सहज कोमल भावना की जिसे प्रेम कहते हैं। प्रेम की भावना एक ऐसी भावना है जिसका जीवन में प्रादुर्भाव कब कहाँ कैसे हो जाए कोई नहीं जानता और फिर प्रेम मिले या ना मिले यह भावना जीवन के हर मोड़ पर साथ रहती है। कभी भी किसी भी पल दस्तक देने चली ही आती है। एक ऐसे ही निश्चल प्रेम से सराबोर कहानी है 'कल हम कहाँ तुम कहाँ'। इस कहानी में कॉलेज के साथियों की नोक झोंक और उन सबके बीच प्रस्फुटित होती प्रेम की भावना को सुधा जी ने बहुत ही ख़ूबसूरत अन्दाज़ में प्रस्तुत किया है। बड़ी ही कोमलता से वे जैसे हाथ पकड़कर हमें भी अतीत की गहराइयों में ले गईं जहाँ शायद ऐसे ही किसी प्रेम की भावना ने कभी मन में घर किया था और वह भावना आज भी साथ चल रही है। सुधा जी इतनी ख़ूबसूरत कहानियों को इस संग्रह के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाने के लिए हार्दिक बधाई। आशा करती हूँ भविष्य में भी आप अपने लेखन के माध्यम से पाठकों के जीवन में नवरस का संचार करते हुए आप्लावित करती रहेंगी।

000

सरोकारों से प्रेरित कहानियाँ

रेखा भाटिया

हिन्दी की वरिष्ठ लेखक सुधा ओम ढींगरा का शिवना प्रकाशन से प्रकाशित नया कहानी संग्रह 'चलो फिर से शुरू करें' मैंने पढ़ा। क़िताब हाथ में आते ही उसका सुंदर कवर ध्यान खींचता है। एक सुंदर स्त्री मानें या स्त्री रूप में सृष्टि जिसकी आँखों में एक अजीब सी कशिश है और एक कसक भी, रहस्यमयी भाव हैं, कुछ स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट और वह आसमान में दूर ताक रही है, एक गहन शांति के साथ कवर रोमांचित करता है।

पहली कहानी 'कभी देर नहीं होती' की शुरूआत रोचक है और पहले पल ही पाठक समझ जाता है कहानी विदेशी पृष्ठभूमि पर शुरू हुई है। मुख्य पात्र आनंद यानी नंदी के मन के अंतर्द्वंद्व के साथ शुरू होती है, जो अपने गंतव्य को खोजता रास्ते के सही दिशा भान से अपने गंतव्य तक पहुँचना चाहता है। नंदी आज आनंद से नंदी बनने की ख़्वाहिश में यादों और सोचों के मंज़र में भटक रहा है, शुरूआत रोचक होने के साथ ही कहानी में सार्थक संदेश समाहित है। एक औरत घर को स्वर्ग बनाती है और एक औरत ही घर को नर्क बना सकती है। ज़माना कितना भी आधुनिक हो जाए लेकिन जब तक स्त्री और पुरुष के बीच शादी नामक संस्था क़ायम है, परिवार की बागडोर स्त्री और पुरुष दोनों के हाथों में होती है। आमतौर स्त्रियाँ अधिक विवेकशील, सहनशील होती हैं और परिवार को बाँधकर रखने के लिए औरत सारे समझौते करती है। यह कहानी नंदी की माँ और उसके लालची परिवार के लोभ, चालाकी और षड्यंत्र का भंडाफोड़ करती है। विषम परिस्थितियों के बावजूद कोमल हृदय के स्वामी नंदी के पिता सारे समझौते कर बच्चों को उचित संस्कार देते हैं जो उन्हें उनके माता-पिता से विरासत में मिले हैं। नंदी उन्हीं संस्कारों को आगे बढ़ाता है, 'जिस वृक्ष की जड़ें मज़बूत होती हैं, उसका तना कभी नहीं सूखता, ख़ूब मज़बूत रहता है।' यह भावुक कहानी गहरा प्रभाव छोड़ती आगे बढ़ती है।

'वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र' इस कहानी का विषय बड़ा संवेदनशील और ज्वलंत है। अच्छाई और बुराई दोनों से दुनिया का कोई भी देश, कोई भी समाज अछूता नहीं है। वेश्यावृत्ति के लिए मानव तस्करी और ड्रग्स के लिए तस्करी के विभिन्न हथकंडे आपराधिक तत्व हमेशा से अपनाते रहते हैं। ड्रग्स के कथानक पर शुरू से लेकर अंत तक बहुत नाटकीय अंदाज़ में कहानी को बहुत रोचक तरीके से लेखक ने लिखा है। कहानी के दो पात्र पत्रकारिता जगत् से हैं और मूलत: भारत से हैं। उनके नज़रिये से, बातचीत से, उनकी जागरूकता से और यात्रा से पूरी कहानी में भारत के रेलवे स्टेशन से लेकर अमेरिका के रेलवे स्टेशन की तुलना, दो संस्कृतियों की समझ, मानव तस्करी, एक अच्छे नागरिक के कर्त्तव्य, ऑफ़िसरों का पूर्ण मुस्तैदी से अपराधियों को पकड़ना और अंत में कहानी को उसके लक्ष्य तक पहुँचाना बहुत सजीव बन पड़ा है। कहानी पाठक को गहरा बाँधकर रखने में पूर्ण सक्षम है। पात्रों और परिस्थितियों को बहुत सुघड़ता से गढ़ा गया है।

शुरू से झुंडों में रहते आए मानवों की सभ्यता के विकास के साथ ही समाज ने जन्म लिया। समाज यानी मानवों का समूह जिसमें रहकर मानव कुछ नियमों का पालन करेंगे, जिससे अराजकता पर अंकुश लग सके और इंसानों और जानवरों की जीवन शैली और मानसिकता में अंतर हो! सभ्य, मानव सभ्यता में फिर धर्म ने जन्म लिया। एक सुगठित, संस्कारी, धार्मिक समाज की उत्पत्ति के साथ ही इंसान और जानवर दो अलग-अलग प्राणी हो गए। इंसानों का बौद्धिक स्तर अन्य प्राणियों की तुलना में उच्च स्तर का होता है, इंसान

अधिक संवेदनशील और सभ्य होते हैं। लेकिन आए दिन धार्मिक स्थलों पर यौन उत्पीड़न के समाचार आते रहते हैं। 'उदास बेनूर आँखें' इस कहानी की प्रस्तुति बहुत मौलिक है। अमेरिका की पृष्ठभूमि पर सामाजिक सरोकारों को उजागर करती कहानी का कथानक दिल को छू लेता है, एक ऐसे अछूते कोने से लेखक ने कहानी को लिखा है, जिस पर समाज में आज भी पर्दा डाला जाता है। साथ ही एच.आई.वी. की बीमारी के प्रति एक नए दृष्टिकोण की ओर सचेत करता है। यहाँ एक बात ज़रूर ग़ौर करनी चाहिए सुधा ओम ढींगरा अपनी सभी रचनाओं में चाहे वह कहानी हो या उपन्यास, पूरा शोध करने के बाद ही वे ठोस तत्थों को समाहित करती हैं।

'इस पार से उस पार' एक बहुत सरल और आत्मिक कहानी है, जिसका विषय असाधारण है। जीवन में ऐसा कई बार अनुभव होता है जब कोई अनुभूति होने लगती है और बाद में सचमुच में वैसा ही होता है। कई बार भीतर से हो रहा इन्ट्यूशन नज़रअंदाज़ हो जाता है लेकिन बाद में घटित होने के बाद ध्यान जाता है। कई बातें संसार में ऐसी ही हैं जिनका वैज्ञानिक स्पष्टीकरण नहीं होता लेकिन वह संसार में विद्यमान हैं। इस कहानी को बहुत निपुणता से लेखक ने निभाया है।

'चलो फिर से शुरू करें' कहानी की शुरूआत में सागर, लहरें, रेत और हवा के साथ मुख्य पात्रों के मन के संवेगों का चित्रण बहुत सुंदर है। बेटे की गृहस्थी की उलझनों से उपजी हुई एक दंपति के मन की उहापोह, दर्द, पीड़ा का बख़ूबी वर्णन है। इस कहानी में दो संस्कृतियों और सभ्यताओं का भेद वर्णित करने में लेखक बहुत सफ़ल रही हैं। सुधा ओम ढींगरा के लेखन की यह ख़ासियत रही है वे नॉस्टेल्जिया के वेग में बहे बिना दो धरातलों के फ़र्क को बख़ूबी अपने लेखन से तराश एक मूर्त रूप देती हैं। उनके लेखन में हमेशा एक संतुलन रहता है। गंभीर और ज्वलंत विषयों पर भी निष्पक्ष लिखना उनके लेखन की सार्थकता है।

लेखक ने इस संकलन में भाषा सरल और सहज रखी है लेकिन कहानियों में सामाजिक सरोकारों के विषयों को प्राथमिकता दी गई है, जिससे वह पाठकों के दिल में सहज स्थान बनाने में सफ़ल रही हैं।

'चलो फिर से शुरू करें' कहानी का शीर्षक ही क़िताब का शीर्षक है, इस कहानी की विशेषता ही यह है वह एक आशा देती है, एक सुखद सन्देश देती है, 'समस्याएँ कितनी भी बड़ी हों हर उम्र में जीवन जीना फिर से शुरू किया जा सकता है।' एक तरफ एक माँ रंगभेद और नस्लभेद की उसकी संकीर्ण मानसिकता के कारण बेटी को उसकी गृहस्थी तोड़, बच्चों को छोड़कर परिवार से नफ़रत करने और धोखा देने पर उकसाती है, विवश करती है। दूसरी ओर एक भारतीय दंपति अपनी अमेरिकन बहू को खुले दिल से अपनाते हैं। सारे समझौते करते हैं और बेटे का सम्बल बनते हैं। कई बार छोटे-छोटे कारणों के पीछे मंशा कितनी भयानक होती है, जिन्हें हम साधारण समझ नज़रअंदाज़ करते जाते हैं, यह कहानी इस तथ्य का बहुत सुंदर उदाहरण है।

'वह ज़िन्दा है...', सच और झूठ, सही और ग़लत का द्वंद्व उसके भीतर चलता है, शायद वह उस द्वंद्व से निजात पा जाए अगर .....',

'जो मज़बूत इरादे के होते हैं वह सच स्वयं सुनना चाहते हैं, उसकी बहस, उसके तर्क बस यही हैं, वह सच बोलने के ख़िलाफ़ नहीं पर सच बोला कैसे जाए !' यह कहानी नि:शब्द कर गई। शायद ही एक औरत, एक आदमी, एक इंसान ऐसा होगा जो इस कहानी को पढ़ कर रोया न हो ? मन का एक कोना पिघला देती है यह कहानी.....

एक जन्मे या अजन्मे बच्चे के पैदा होने के पहले ही भ्रूण के गर्भ में आते ही एक स्त्री माँ बन जाती है, हर जीव प्राणी मादा एक माँ बन जाती है और यह सृष्टि का परम सत्य है। एक माँ के लिए उसके बच्चे की मृत्यु घोर भीषण त्रासदी है। उस दु:ख से उभरना एक माँ के लिए असंभव होता है। संसार भूल जाए, एक माँ हमेशा अपने बच्चे को याद कर रोती है। अस्पतालों में मरीज़ों को सच कैसे परोसा जाता है और कैसे परोसना चाहिए एक गंभीर नैतिक प्रश्न उठाती है यह कहानी।

आज के युग में ख़बरें हवा, ध्वनि, प्रकाश, बिजली से भी तेज़ रफ़्तार से सोशल मीडिया से चारों ओर फ़ैल जाती हैं। लेकिन सोशल मीडिया का एक अँधेरा पहलू भी है। यह ख़बरें कितनी सच्ची होती हैं या झूठी होती हैं, इसकी पड़ताल कोई भी नहीं करता। सोशल मीडिया पर आए दिनों कई चेतावनियाँ आ जाती हैं, यह कितनी तर्कविहीन हैं या तर्क संगत उसकी जाँच किए बिना, बिना सोचे समझे अक्सर ज़्यादातर उसे विभिन्न ग्रूपों में फॉरवर्ड कर देते हैं। यह कितनी ग़लतफ़हमियाँ पैदा कर सकता है और जिसके परिणाम कितने भयंकर हो सकते हैं ! यह वर्तमान युग की एक समस्या भी बन चुका है। इसी समस्या पर एक करारा प्रहार करती है कहानी 'भूल-भुलैया' ! एक बात यह भी सच भी है, अमेरिका में एक वक़्त ऐसा भी आया था जब एशियन्स पर बहुत हमले हो रहे थे, उस वक़्त प्रशासन अपना काम कर रहा था, पुलिस अपना कार्य कर रही थी लेकिन सोशल मीडिया पर ऐसी सच्ची-झूठी चेतावनियों ने जंगल की आग में तेज़ हवा का, आग में घी का काम किया था, तब एशियन्स कहीं भी जाने में असुरक्षित महसूस करते थे। कहानी अवश्य ही पठनीय है।

'कँटीली झाड़ी' एक बहुत अर्थपूर्ण और संदेशवाहक कहानी है। किसी के भीतर ईर्ष्या और झूठे अहम् की तुष्टि के लिए कहानी की एक पात्र अनुभा का चरित्र एक कँटीली झाड़ी के समान हो जाता है, जिसके पास से गुज़र जाने के बाद दूसरे का मन ज़ख्मी हो जाता है और इज़्ज़त तार-तार क्योंकि एक कँटीली झाड़ी दंश मारने का उसका स्वभाव कभी नहीं छोड़ती चाहे उसे उपवन के सबसे सुंदर गमले में रोप दो। नेहा की समझदारी से वह उस दंश से बच तो गई लेकिन हमारे आसपास के वातावरण में ऐसे कई इंसान मौजूद रहते हैं जिनसे अत्यंत सावधानी रखने की ज़रूरत होती है। कहानी का एक-एक पात्र बहुत निखर कर सामने आया है, कई भागों में कहानी कभी वर्तमान में कभी अतीत में जाती

है लेकिन एक सूत्र में पिरोई गई यह कहानी कहीं भी खंडित नहीं होती और इसका रोचक और चौंकाने वाला प्रवाह बना रहता है। जटिल कथानक को लेखन सुगमता से एक धारा प्रवाह में बहाने में अत्यंत सफ़ल रही हैं। यह लेखक के लेखन का कमाल है, एक गूढ़ बात को सरलता और सहजता से अपनी कहानियों में कह जाना सुधा ओम ढींगरा की विशेष योग्यता है।

सन् 2001 के सितंबर माह में न्यूयॉर्क के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हुए आतंकवादी हवाई हमलों में जिनमें हज़ारों लोगों की जानें चली गई थीं। जिसके दुष्प्रभाव से अमेरिका में जीवन, अर्थ व्यवस्था कई सालों तक अस्त-व्यस्त रही। कई वर्षों तक हवाई यात्राओं में असुरक्षा की स्थिति बनी रही, इसका असर आज भी दिखाई देता है। उस त्रासदी की किरचें आज भी लोगों के मन में भय और पीड़ा उत्पन्न करती हैं। 'अबूझ पहेली' एक बहुत मार्मिक कहानी है। मुक्ता धीर की भीतरी अनुभूति से उसे भविष्य में घटित होने वाली त्रासदी के दृश्य त्रासदी से पहले से दिखाई देने लगते हैं और उसे आभास हो जाता है कुछ अनहोना घटित होने वाला है। वह उस अनहोनी के होने के अंदेशे में पीड़ा और भय से गुज़रती है लेकिन समझती है वह विषाद में जा रही है। जीवन के ऐसे कई क्षण होते हैं जब बैठे-बैठे मन अचानक उदास होने लगता है या कहीं कोई अंदेशे के होने का भाव उत्पन्न हो जाता है। यह एक सामान्य प्रक्रिया है जिसे धरती पर बहुत से जीव प्राणी अनुभव करते हैं। विज्ञान में इसका बहुत विस्तार से स्पष्टीकरण नहीं है लेकिन मानव मनोविज्ञान इसे मानता है। यह कहानी मानव मन की कई अबूझ पहेलियों को सुलझाने में मददगार है। कहानी का विषय अनूठा है और लेखन शैली बहुत अनूठी है, यह एक अनुभव है, पाठक स्वयं भी वह सब महसूसता है, जिसे लेखक ने लिखते समय महसूस किया होगा!

'कल हम कहाँ तुम कहाँ' दोस्ती और एकतरफ़ा प्रेम की अनूठी कहानी है, जिसका अंत बहुत सुखद बन पड़ा है। यह कहानी गुदगुदाती है-

'उम्र का एक दौर ऐसा होता है जब आदर्शवाद पूरे जीवन पर हावी होता है और व्यवहारिकता का कोई ज्ञान नहीं होता....'

'उसे मना भी लेता तो जीते जी मार देता'

'प्यार के भी भिन्न-भिन्न रंग और पुष्प होते हैं।' कहानी में प्रेम की एक अनूठी परिभाषा दी गई है, इसे समझौता कहें, समर्पण या गहरा सच्चा प्रेम! यह बहुत उम्दा रचना है लेखक की।

कहानी संग्रह 'चलो फिर से शुरू करें' वर्तमान हिन्दी साहित्य में एक ठंडे, ख़ुशबूदार, प्राणवायु से भरे मीठे हवा के झोंके के समान है जिसे पढ़कर पाठकों को तपती धरा पर राहत महसूस होगी। यह कहानी संग्रह आम जीवन के यथार्थ, कटु, खट्टे-मीठे अनुभवों पर आधारित सामाजिक सरोकारों से प्रेरित एक सामाजिक कहानी संग्रह है जैसे कहानियों के पात्र और घटनाएँ जीवन के आसपास में ही विचरण कर रहे हों। कई कहानियाँ में सामाजिक सरोकारों से संबंधित ज्वलंत विषयों पर लेखक ने चुपचाप से बिना तामझाम के गहरे स्वर उठाएँ हैं और जागरूकता फ़ैलाई है। कहानियाँ गहरा प्रभाव छोड़ती हैं, भाषा, शिल्प बहुत प्रभावी है और प्रत्येक कहानी का कथानक शुरू से अंत तक बहुत प्रभावशाली है। लेखक का लेखन गरिमामय और गौरवशाली है, सटीक और सहज है। कहानियाँ कसी हुई हैं, कोई दोहराव नहीं है और अपने उद्देश्य को पाने में सफ़ल हैं। ऐसा लगता है मानों आसपास ही घटी घटनाओं और पात्रों से प्रेरित होकर लेखक ने जीवन की अमूल्य झलकियों की झाँकी प्रस्तुत की हो। कहानियाँ पाठकों के हृदय पर गहरी छाप छोड़ती हैं। 'वह ज़िन्दा है ' कहानी ने एक माँ के हृदय की चीख-पुकार को बहुत उम्दा तरीके से चित्रित किया है, वहीं कहानी 'कँटीली झाड़ी' एक औरत के विक्षिप्त, विकृत रूप को चित्रित करने में बेहद सफ़ल रही है। यह एक पठनीय रोचक, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक कहानी संग्रह है जो भारी शब्दों में ज्ञान बाचने की बजाए मनोरंजक और संदेशवाहक के रूप में असर करता है।

000

फार्म IV

समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण (देखें नियम 8)।

पत्रिका का नाम : शिवना साहित्यिकी

1. प्रकाशन का स्थान : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

2. प्रकाशन की अवधि : त्रैमासिक

3. मुद्रक का नाम : ज़ुबैर शेख़।
पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित।
पता : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर।
पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम : पंकज कुमार पुरोहित। पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

दिनांक 11 मार्च 2024

हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

केंद्र में पुस्तक

(कहानी संग्रह)

डोर अंजानी सी

समीक्षक : संदीप तोमर, रेखा भाटिया

लेखक : ममता त्यागी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

संदीप तोमर
डी 2/1 जीवन पार्क, उत्तम नगर, नई दिल्ली 110059
मोबाइल- 8377875009
ईमेल- gangdhari.sandy@gmail.com

रेखा भाटिया
9305 लिंडन ट्री लेन, शार्लेट, नॉर्थ कैरोलाइना, यू एस ए-28277
मोबाइल-704-975-4898
ईमेल-rekhabhatia@hotmail.com

रिश्तों की डोर में बाँधती कहानियाँ

संदीप तोमर

लेखिका ममता त्यागी नए ज़माने की विशिष्ट कथाकार हैं। 'डोर अनजानी सी' ममता त्यागी के सद्य प्रकाशित दूसरे कहानी संग्रह का नाम है। इस संकलन को पढ़ने के पश्चात् मेरे मस्तिष्क में रिश्तों को लेकर अजीब सी हलचल होती रही। ममता त्यागी परंपरागत मध्यवर्गीय परिवारों के अंतर्द्वंद्व, अप्रवासी परिवारों की जटिलताओं और आसपास जिये जीवन-जगत् की तकलीफ़ों को संवेदनशीलता की महीन परतों से बुनती हैं उनके लेखन में 'विषय' और 'शिल्प' दोनों ही में नयापन है। इन कहानियों को पढ़ते हुए बदलते संबंधों की जटिलता का अहसास होता है। नई पीढ़ी के कलमकारों में ममता त्यागी का नाम शामिल हुआ है यह एक अच्छा संकेत है, लगातार पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ प्रकाशित हो रही हैं, सम्भवत: इस संकलन की कहानियाँ भी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। उनके पास अच्छी भाषा है और पुराने संदर्भ भी नए समय की नब्ज़ पकड़ पाते हैं। ममता की कहानियों में एक नए प्रकार की रचनात्मकता का संचार प्रतीत होता है। उनकी कहानियों के पात्र अपनी संवेदनशीलता के कारण हमारे मन के हर कोने में अपनी जगह लंबे समय तक बनाए रखते हैं। एक सफल रचनाकार की सारी विशेषताएँ इनकी कहानियों में मौजूद हैं।

अपने समय की शिनाख्त करती इस संकलन की कहानियाँ अद्भुत हैं, ये कहानियाँ न तो कलावादी शिल्पकारी से निर्मित होती हैं और न ही कथ्य की सपाट प्रस्तुति से। सधी हुई संप्रेषणीय भाषा और बेहद कसे हुए महीन शिल्प के सहारे वह विषय के इर्द-गिर्द एक ऐसा ताना-बाना रचती हैं जो पाठक को न केवल अंतिम पन्ने तक बाँधे रखता है बल्कि उनके साथ अपने समय और समाज की यात्रा कराते हुए उस पूरी विडंबना से रूबरू कराता है। कहा जा सकता है कि अपने समय पर लेखिका की अच्छी-ख़ासी पकड़ है, लेखिका अपनी पैनी और महीन नज़र से सामाजिक परिस्तिथियों से कथानक उठाती हैं और अपनी शैली से उन पात्रों को विशिष्ट बना देती हैं, जिनके इर्द-गिर्द ये कहानियाँ बुनी गई हैं।

'शिवना प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित इस कहानी संग्रह 'डोर अनजानी सी' में संकलित छोटी-बड़ी कुल दस कहानियों के माध्यम से लेखिका अपने समय के विभिन्न आयामों के साथ उपस्थित हुई हैं। इन कहानियों में से अधिकांश में प्रेम को अलग-अलग कथानकों के साथ प्रस्तुत किया गया है, पाठक इन कहानियों में प्रेम के दर्द को साफ-साफ देखता और महसूस करता है। लेखिका की इन कहानियों के पात्रों का केन्द्रीय भाव भी यही है। इन कहानियों की एक विशेषता यह है कि यहाँ वास्तविक चरित्र कहानी का हिस्सा बन जाते हैं, ये पात्र हमारे आस-पास से निकलते हुए प्रतीत होते हैं जिनसे हमारा रोज़ साबका पड़ता है।

स्टील का कप, खूँटी पर टँगा ओवर कोट, पारिजात की महक कुछ ऐसे शीर्षक हैं जो कुछ साधारण से अतिसाधरण के रूप में कहानियों पर एक अलग दृष्टि डालते हैं, विशिष्ट शैली में मनोविज्ञान का भरपूर इस्तेमाल और चिंतन के सकारात्मक सामंजस्य के साथ लेखिका अपने सम्पूर्ण जीवनानुभव का भरपूर इस्तेमाल करती हैं। ये कहानियाँ केवल प्रश्न ही नहीं बुनती, वरन पाठकों के बीच समाधान भी उपस्थित करती हैं। लेखिका विचारों में चेतना के अंकुर बोने का ऐसा कार्य करती हैं कि पाठक आगे पढ़ना भी चाहता है और कुछ-कुछ जगहों पर थोड़ा ठहरकर स्वयं चिंतन को आतुर हो उठता है। संग्रह की पहली कहानी में ऑटिज़्म से ग्रसित बच्चे की माँ की चिंताओं को रेखांकित किया गया है, ऑटिज़्म जैसी बीमारी को केंद्र के रखकर बहुत कम कहानियाँ मिलती हैं, यहाँ लेखिका दर्शाती है कि ऑटिज़्म से पीड़ित बच्चे का भाई अपनी सबसे नजदीकी दोस्त को अपने भाई की बीमारी के बारे में बताने में भी शर्मिंदगी महसूस करता है, यह कहानी संवेदना के स्तर को बहुत ऊँचाई तक ले जाती है, कथानक और कथ्य दोनों ही स्तर पर कहानी पाठकों के जेहन को झकझोरती है।

'स्टील का कप' एक जाति-भेद को दर्शाती कहानी है, कहानी पढ़कर समझ आता है कि

मानवीय संवेदनाओं के आधुनिक दौर में भी जाती-भेद से उपजे प्रश्न भी स्वत: ही मिल सकते हैं, जातीय-नफ़रत से भरे लोगों की लम्बी जमात आज भी हर जगह मिल सकती है। यह रोग केवल अनपढ़ या ग्रामीण समाज में न होकर पढ़े-लिखे अभिजात वर्ग में भी है और मध्यम वर्ग में भी। कप के माध्यम से जाति-भेद की शिकार 'दिया' अपनी मेहनत से कलक्टर बनकर भी सादगी पसंद है, वह अपनी सहेली की घमंडी माँ को अपमानित नहीं करती अपितु बेइज़्ज़ती का अहसास दिलाने का भेद शानदार तरीक़ा अपनाते हुए कहती है- 'आंटी, आप इस कप में चाय पी लेंगी न, ...मेरे पास स्टील का कप नहीं है... कहानी हमें बताती है कि अपमान का दंश भी बहुत बार तरक्की के लिए आत्मविश्वास पैदा करता है। 'एक मुट्ठी ज़िंदगी' कहानी का विषय बहुत पुराना है, मसलन- अभिनेत्री बनने आई लड़की कास्टिंग काउच का शिकार, पैसे देकर भी दैहिक सम्पर्क न करना भी कोई नई बात नहीं है, एक सामान्य-सी कहानी जिसमें कुछ भी नया नहीं है लेकिन इसका अंत हमें चौंकाता है- नायक जब तय रुपयों का लिफ़ाफ़ा लड़की को थमाता है तो लड़की इसे लेने से इनकार करते हुए कहती है- 'नहीं, यह मैं आज नहीं रख सकती, आज तुम्हारे साथ गुज़ारी इस शाम में मैंने एक मुट्ठी ज़िंदगी को जी लिया। अहसास हुआ कि मैं भी एक इंसान हूँ मशीन नहीं।'

'पारिजात की महक' कहानी थर्ड जेंडर के संवेदनशील हृदय की गाथा कहती है, जहाँ उन्हें आज भी समाज हिकारत की दृष्टि से देखता हैं वहीं लेखिका जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को कहानी में पिरोकर इसे भावुकता से ओत-प्रोत कर देती हैं, इस कहानी के कुछ वाक्य अवश्य ही प्रभावित करते हैं... मैं नहीं होती तो कोई और आ जाता मदद के लिए... आप मेरी लाई चाय पी लेंगी न?... ईश्वर हमें गढ़ते हुए थोड़ा सा छल कर गया और एक नारकीय जीवन जीने को भेज दिया इस धरती पर। ... जिन्हें यह पता ही नहीं हो कि उनके पापा कौन हैं, वे क्या करें?... कहीं भी जाओ, सब हमें अजीब सी नज़रों से देखते हैं। हमें लोगों की निगाहों का सामना करना बड़ा मुश्किल हो जाता है। इस कहानी का कथानक अत्यधिक भावुकतापूर्ण है और उसी के अनुसार कथा को विस्तार दिया गया है।

ममता की कहानियों में अन्य प्रवासी भारतीय लेखकों की तरह ही अमेरिका है, भारत है, अस्पताल है, डॉक्टर हैं, डॉक्टरी पेशा है। उनकी कहानियों में अंग्रेज़ी शब्दों की भरमार है। 'डोर अनजानी सी' जो कि पुस्तक की प्रतिनिधि कहानी भी है, अंग्रेज़ी शब्दों से अटी पड़ी है, कहना न होगा कि अगर इससे अंग्रेज़ी शब्दों को हटा दिया जाए तो कहानी का आकार ही सिकुड़ जाए। यह कहानी मध्यमवर्गीय महत्वाकांक्षा की कहानी है। कहानी इस बात की तरफ़ निर्देशित है कि कॅरियर के लिए इंसान का कैसे चरित्र बदल जाता है? कहानी यह भी बताती है कि अमेरिका में रहने मात्र से सुसंस्कृत लड़की के संस्कार नहीं बदल जाते। यहाँ दो संस्कृतियों का अंतर बहुत मायने नहीं रखता। कहानी हमें पुरातन संस्कारों से आधुनिकता की तरफ ले जाती है जब कहानी की नायिका कहती है- ...मैं एक बच्चा गोद अवश्य लूँगी... एक बार मुझे अपनी कोख में पलती ज़िंदगी के सुखद एहसास को जीकर पूर्णता पाना है।

भारतीय लेखिका कहानी में भी अपने अदरक की चाय के मोह को नहीं छोड़ पाती- 'मैं बढ़िया सी अदरक वाली चाय बनाकर लाती हूँ सबके लिए।' यह सकारात्मक सोच की एक अच्छी कहानी कही जा सकती है।

ममता की कहानियों में सामाजिक मुद्दों की पड़ताल बार-बार की गई है, उनके स्त्री पात्र संस्कारवान हैं तो दूसरी तरफ आधुनिक भी। 'अजन्मी बच्ची करे पुकार' एक शाश्वत प्रश्न खड़ा करती है – अगर इस बार भी बेटी हो गई तो...। लिंग निर्धारण स्त्री के हाथ में नहीं होता, विज्ञान भी इस बात को प्रमाणित कर चुका है लेकिन समाज अभी भी स्त्री के मत्थे सारे दोष मढ़ देता है। क्या आज भी वाकई लड़की होना ही अभिशाप है? कहानी में बच्ची जन्म लेती है लेकिन उसे माँ से विमुख किया दिखाया गया है, कहानी का अंत फ़िल्मी अंदाज़ में लिखा गया है जहाँ बच्ची बड़ी होकर जज की कुर्सी पर है, यहाँ लेखिका से यहाँ चूक हुई है, जहाँ जज की आयु 22 वर्ष लिखी गई है जबकि जज बनने की न्यूनतम आयु 25 वर्ष है।

'खूँटी पर टँगा ओवरकोट' कहानी कश्मीर की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर लिखी गई है, लेखिका कश्मीर जैसे मुद्दे पर बहुत संवेदनशील और सजग होकर लिखती हैं, यह एक भावुक कर देने वाली कहानी है, पढ़कर पाठकों को लगेगा कि कोई चलचित्र आँखों के सामने चल रहा है। 'उजाले की ओर बढ़ता क़दम' एकाकी जीवन जी रहे पेरेंट्स के लिए पार्टनर खोजने, उनका विवाह करने की कहानी कहती है, कहानी का कथानक वक़्त की माँग के हिसाब से चुना गया है, कहानी बताती है कि- 'समाज क्या कहेगा, हमारे घरवाले क्या सोचेंगे?' जैसे प्रश्नों से अब किनारा करने का समय है। यह कहानी भी हमें एक सुखद अंत की ओर ले जाती है।

'वह फिर चूक गया' एक लंबी कहानी है, यह कहानी लेखिका के काव्यात्मक पक्ष के दर्शन कराती है, कहानी के माध्यम से लेखिका ने प्रेम की विस्तृत व्याख्या करने का प्रयास किया है, इसका कथानक पर्वतीय क्षेत्र में आए पर्यटकों के समय बिताने से मिलने-बिछुड़ने की गाथा से ओतप्रोत है, कहानी के कुछ अंश अवश्य ही प्रभावित करते हैं- फिर हवा के परों पर तैरता संगीत उसके कानों से टकराया। ... जीवन भी तो दुरूह पगडंडियों का जाल ही होता है। कभी-कभी तय करना मुश्किल होता है कि कौन सा रास्ता चुना जाए?... प्रेम एक विशुद्ध भावना है इसमें दिल मिलते हैं शरीर महत्त्व नहीं रखता। देह से परे भी प्रेम होता है अलौकिक प्रेम, मैंने तुम्हारे अंदर एक अलौकिक छवि देखी थी। मेरे लिए तुम मायने रखती हो, तुम्हारा प्रेम मायने रखता है रत्ना, तुम्हारी देह नहीं।.. यह कहानी हुनर, शौक इत्यादि की बात करती है, पारिवारिक कलह की बात करती है, स्नेह, प्रेम, विछोह की बात करती है... माँएँ बच्चों के परिवार बचाने के हर सम्भव प्रयास करती हैं, बानगी देखिए- ...अगर अलग रहकर तुम सुखी हो सकते हो तो बहू को लेकर अलग हो जाओ।

... पश्चिमी उत्तर प्रदेश की रिवायत ही अलग है... बेटा कहता है- किससे अलग हो जाऊँ मैं? आपसे, पापा से? जिन्होंने जन्म दिया पाल-पोस कर बड़ा किया उनसे अलग हो जाऊँ? माँ! तुम्हारे बिना मेरा कोई अस्तित्व नहीं है, याद रखना। यह मान्यता पुख्ता होती है- बेटे कब माँओं से अलग होना चाहते हैं... इस कहानी में लेखिका ने पत्र का प्रयोग बड़े सलीके से किया है। कहानी को पढ़ते हुए 'सत्यम शिवन सुन्दरम' फिल्म की याद तरोताज़ा हो जाती है।

ममता की कहानियों की एक विशेषता यह है कि वे कितनी ही बार फ़्लैशबेक का सहारा लेती हैं। 'मन पाखी बन काहे धीर धरे' भी इसी तरह की कहानी है, उनकी कहानियों में यादें हैं, शिकायते हैं, स्वयं से शिकायत, जीवन से शिकायत, ...उस दिन भी तो यही हुआ था. उन्होंने बस अपना निर्णय सुना दिया था... पिता बस निर्णय ही सुनाते हैं- 'तुमने किसी लायक़ नहीं छोड़ा हमें।'... ममता मानों शिकायत करती हैं कि- शादी जिसकी हो उसका निर्णय सर्वमान्य क्यों नहीं होता? इस कहानी का अंत भी वे सुखांत ही करती हैं, जब बेटे की मृत्यु के बाद माँ-पिता बहू की विदाई करते हैं, यह कहानी आश्वस्त भी करती है कि बदलाव की बयार आ रही है, इसे परम्परा का रूप देने में भले ही वक़्त लगे। इस कहानी में लेखिका बड़े अच्छे तरीके से अपनी भाषा की वकालत करती हैं- कहीं भी इंसान चला जाए पर दु:ख और परेशानी की घड़ी में अपनी भाषा संबल सा बन कर खड़ी हो जाती है।

कहना होगा कि ममता द्वारा चुने गए कुछ विषय और कथानक उपन्यास की ज़मीन लिए हैं, जिन्हें कहानियों में पिरोने का प्रयास किया गया है। वर्तमान पीढ़ी की महिला रचनाकार नारीवादी लेखन के मोह में पड़ लेखन में कृत्रिमता पैदा कर देती हैं लेकिन ममता स्त्री के मन की बात लिखती ज़रूर हैं, वे पुरुषों को विलेन की तरह पेश नहीं करती।

सभी कहानियों के कथानकों की विविधता, लेखिका के अनुभव, संवेदना व उनके सामाजिक ज्ञान का परिचय देती है। ममता अपनी कहानियों में किसी विशेष शिल्प को नहीं अपनाती हैं। उनका कहन का तरीक़ा सरल और सहज है। उनके पात्र सहज-सरल शब्दों में संवाद करते हैं। लेखिका जो भी जैसा भी घटते हुए देखती है, उसे बड़ी आसानी से कथा में बुनती है। वाक्य विन्यास एकदम सहज है और संवाद कथा की माँग के हिसाब से ही प्रयुक्त किये गए हैं, कुल मिलाकर कहानियाँ पठनीय है।

एक बात जो लेखिका को ध्यान रखनी होगी वो यह कि किसी विशेष कथानक को बुनते हुए पात्रों, उनके व्यवसाय इत्यादि की गहन पड़ताल करें ताकि पाठक भ्रमित न हो। दूसरा अंग्रेज़ी शब्दों की भरमार से बचना चाहिए। संवाद पात्रानुकूल होना अच्छी योजना है लेकिन लेखक को विवरण देते समय अधिक संजीदा होने की ज़रूरत है। हमें माँ की दूसरी शादी के बारे में सोचना चाहिए। यहाँ तकनीकी रूप से दोबारा शादी होना चाहिए। ... पढ़े-लिखे होकर ऐसी बातों पर विश्वास करना बेवकूफ़ी नहीं तो और क्या है? लेखिका से सवाल किया जा सकता है- मतलब अनपढ़ करे, तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। 'डोर अनजानी सी' कहानी संग्रह से साहित्य जगत् में लेखिका ने जो एंट्री की है, निश्चित रूप से साहित्य में उनका यह प्रयास मील का पत्थर साबित होगा, निश्चय ही यह कथा संग्रह साहित्य की अनमोल निधि के रूप में याद किया जाएगा।

एक सुझाव कि इन्हें अभी बहुत सुदूर आकाश तलाशने के लिए कहन के अपने अंदाज़ को और निखारकर नई ज़मीन खोजनी होगी, जहाँ एक नई इबारत लिखने के लिए नए कथ्य में कहन के नए अंदाज़ और संवेदनशीलता की चीरफाड़ करनी होगी, संवेदना के उत्स तक पहुँच कर सामाजिक-आर्थिक व व्यवस्था की विडंबनाओं को चीन्हते हुए खुरदुरे यथार्थ तक पहुँचना होगा, जहाँ वे नए नज़रिए से सच का नया झरोखा निडरता से खोल सकेंगी, मेरी शुभकामनाएँ हैं कि आगामी समय में वे पूरी तटस्थता व संलग्नता से जल्दी कोई नायाब उपन्यास रच पाएँ।

000

ग़ज़ब किस्सागोई

रेखा भाटिया

तेज़ी से उभरीं और थोड़े ही समय में स्थापित हो चुकीं लेखिका ममता त्यागी का दूसरा कहानी संग्रह 'डोर अंजानी सी' इसी वर्ष 2024 में दिल्ली पुस्तक मेले में शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस पुस्तक मेले में कई दिग्गज लेखकों की नई पुस्तकें बाज़ार में आती हैं और पाठकों में जिज्ञासा जगाती है। अच्छी पुस्तकें पाठकों को आकर्षित करती हैं और चर्चा में आ जाती हैं। 'डोर अंजानी सी' कहानी संग्रह ने पाठकों के साथ साहित्य जगत् का ध्यान भी अपनी ओर खींचा है। यहाँ यह बताना तर्क संगत होगा कि प्रतिभावान लेखकों का लेखन वक़्त के साथ परिपक्व होते-होते निखरता है लेकिन वक़्त ने ममता त्यागी को अल्प समय में ही ख़ूब तराश दिया। ममता जी ने दूसरे कहानी संग्रह में ही एक ऊँची छलाँग मारी है और उनके लेखन में अविस्मरणीय विकास हुआ है।

पहली कहानी 'लव यू दादा', इस कहानी का कथानक एक निर्मल नदी की तरह है। कहानी बहुत भावुक कर जाती है, कहानी का विषय बड़ा मार्मिक है। जन्म के साथ ही कोई बीमारी, कोई शारीरिक कमज़ोरी या शारीरिक विकृति पर उससे पीड़ित व्यक्ति या उसके परिवार का न कोई वश होता है, न ही कोई क़सूर होता है। पीड़ित व्यक्ति स्वयं के सामान्य दैनिक कार्य भी ख़ुद न कर सकता हो, पूरी तरह से दूसरों पर निर्भर हो तब उसके परिवार का जीवन भी सामान्य नहीं रह जाता है। उस व्यक्ति की देखभाल में परिवार को बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं। कई बार समाज में उस परिवार की मजबूरियों को समझने की बजाय असामान्य दृष्टि से देखा जाता है। कहानी के मुख्य पात्र सात्विक को हमेशा यह डर सताता है कि उसके ऑटिस्टिक भाई रितिक के बारे में जब उसके दोस्तों को, ख़ासकर नेहा को पता चलेगा तब वे उसका मज़ाक बनाएँगे और उसे छोड़कर चले जाएँगे। लेकिन कहानी का अंत नाटकीयता से परे करुणा से भरपूर बड़ा सुखद है। कॉलेज का माहौल, दोस्तों की प्रगाढ़ता का सुन्दर

चित्रण करने में लेखक बेहद सफल रही हैं। भाषा सरल और स्पष्ट है जिससे कहानी की गति में कोई रूकावट नहीं है। इस विषय पर कई कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं लेकिन अपने सहज लेखन से लेखक पाठकों में मस्तिष्क में गहरी छाप छोड़ते हुए ऑटिज़्म के प्रति सहानुभूति जगाने में सफल रही हैं।

'स्टील का कप' एक प्रेरणादायक कहानी है। दिया की बुद्धिमता, संघर्ष और सफलता की कहानी है। कहानी का विषय रोचक है। अमीरी के मद में रश्मि की माँ दिया को स्टील के कप में चाय देती है जिससे दिया असहज हो जाती है। दिया के मस्तिष्क के द्वंद्व, संघर्षों और सफलता तक की यात्रा का बहुत प्रभावी चित्रण है। सहेलियों का वार्तालाप, अमीरी-ग़रीबी का फ़र्क, संस्कारों और मानसिकता का फ़र्क कथानक में शुरू से अंत तक प्रभावशाली है जो कहानी को प्रबलता और गहनता प्रदान करता है। दिया का विकास और आत्मबल कहानी की आत्मा है। कहानी का शीर्षक जिज्ञासा जगाता है।

'एक मुट्ठी ज़िंदगी' एक अति सरल कहानी है लेकिन यह कई सच उजागर करती है। कोरोना काल में हर कोई अकेलेपन से जूझ रहा था। डर, दहशत, अनिश्चितता के साथ बोरियत, अकेलापन एक दूसरी महामारी-सा लोगों के मस्तिष्क पर छा कर मानसिकता को कुंद कर रहा था। उस समय काल को लेकर एक ख़ूबसूरत और मन को छू लेने वाली कहानी बन पड़ी है यह। फ़िल्म लाइन में सैकड़ों कड़वे अनुभवों में से गुज़रते युवाओं में से एक युवती की ज़िंदगी की एक शाम की संक्षिप्त कहानी है यह।

किन्नर जिन्हें भारतीय समाज में एक अलग अजीब दृष्टि से देखा जाता है, एक अलग तीसरा लिंग माना जाता है। समाज के सामान्य सामाजिक जीवन में जिन्हें स्वीकार नहीं किया है, उनकी एक अलग दुनिया होती है भारत में। वह घरों में शादी-ब्याह और नवजात शिशु के जन्म आदि पर नाच-गाकर रोज़ी-रोटी कमाते हैं। यह कहना ग़लत न होगा आज भी समाज में उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। किन्नर भी इंसान होते हैं, उनके भीतर भी प्रेम, करुणा, दया का भाव कूट-कूट कर भरा होता है, मुसीबत के समय किसी की सहायता करने से भी वे नहीं चूकते। 'पारिजात की महक' किन्नरों का इंसानियत से भरा उजला पक्ष दिखाने में पूर्ण रूप से सक्षम कहानी बन पड़ी है। कहानी बहुत मज़बूत है और लेखक बधाई की पात्र हैं। उन्होंने बहुत रोचक और भिन्न विषय कहानियों के लिए चुने हैं।

'डोर अंजानी सी' कहानी के शीर्षक पर इस कहानी संग्रह का नाम रखा गया है। यह एक बहुत सशक्त कहानी है। ऐसा बहुतायत होता है इंडिया से आए युवा अक्सर ग्रीन कार्ड के चक्कर में यहाँ के किसी स्थानीय भारतीय-अमेरिकी से शादी कर ग्रीन कार्ड पा जाते हैं फिर बाद में उसे छोड़ देते हैं, ऐसे सैकड़ों केस देखने को मिलते हैं। उसी विषय को लेकर यह कहानी लिखी गई है लेकिन यह कहानी लकीर से एकदम हटकर है। कहानी की नायिका एक अद्‌भुत निर्णय लेती है और उसका निर्णय भारत से वर्षों पहले अमेरिका आए उसके माता-पिता को उनकी उस भारतीय सोच को जिसे वे वर्षों से पाले हुए थे, बदलने पर बाध्य करती है। यह एक युवती के साहस, बुद्धि और शक्ति की अद्‌भुत प्रेरणादायक कहानी है। केवल पुरुष का जीवन में होना ही जीवन को सार्थक नहीं बनाता है अपितु औरत अपने आप में ही पूर्ण सक्षम है और एक पुरुष के बिना भी एक सम्पूर्ण जीवन जी सकती है।

'आज तक मैं अपनी अजन्मी बच्ची की पुकार को अनसुना कर दर्द में जीती रही थी।', कहानी 'अजन्मी बच्ची करे पुकार' कन्या भ्रूण हत्या पर आधारित है। संग्रह की अन्य कहानियाँ भी विविध विषयों पर आधारित हैं।

'खूँटी पर टँगा ओवरकोट' यह कहानी विस्थापित हुए एक कश्मीरी पंडित परिवार की है। इस विषय पर कई कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं लेकिन हर कहानी एक परिवार के सम्पूर्ण जीवन की डोर होती है। कभी उसके टूटने से पूरा परिवार टूटकर बिखर जाता है, कभी वह डोर ढीली पड़ जाती है, कभी अधिक कस जाती है, कभी उसमें गाँठें पड़ जाती हैं, कभी वह खूँटे से उखड़ जाती है जिस खूँटे से वह डोर बँधी है। लेकिन उसका सहारा वह खूँटा ही टूट जाए तब क्या ? कश्मीर से हिन्दुओं का विस्थापन ऐसा ही है मानों जीवन की डोर से खूँटा उखड़ गया हो। यह एक मार्मिक कहानी है। कौल साहब का एक साधारण, ख़ुशहाल परिवार आसपास के मुस्लिम परिवारों के साथ अरसे से हिल-मिल कर रहता है। वह एक अनाथ मुस्लिम लड़की को बेटी की तरह घर में रखता है। दिक्कत तब आती है जब कट्टरपंथियों की अराजकता के कारण कश्मीर में भय और अशांति फैलने लगती है। आए दिन हमले और लूटपाट शुरू हो जाती है। रातों रात कौल साहब के परिवार को कश्मीर से जान बचाकर भागना पड़ता है, उस मुस्लिम लड़की को साथ कैसे ले जाएँ, उसका अंत में क्या होता है, कौल साहब के परिवार का क्या होता है, यह जानने के लिए कहानी को पढ़ना अनिवार्य है। कौल साहब के परिवार की पीड़ा को बहुत बारीकी से लेखक ने उभारा है। कहानी कहीं बिखरती नहीं है, लेखक ने इस बात का ख़ास ख्याल रखा है कहानी कहीं भी दोहराव का शिकार नहीं हुई है, कहानी अपने आप में अनूठी है। कहानी में ओवरकोट का बहुत ख़ूबसूरत प्रयोग किया गया है।

'उजाले की ओर बढ़ता कदम', 'मन पाखी न काहे धीर धरे' दोनों कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। 'वह फिर चूक गया' कहानी एक रहस्य जगती है, रोमांचित करती अद्‌भुत प्रेम कहानी है। इसमें प्रकृति का बहुत सुन्दर संगम है, रहस्यमय होकर भी कहानी में कई घटनाएँ एक साथ जुड़ी हुए एक क्रम में आगे बढ़ती हैं, यह बात सराहनीय है। एक बात खटकी कि बहन सपना वाली कढ़ी कुछ अधूरी-सी लगी वरन इस संग्रह की यह सबसे श्रेष्ठ कहानी बन जाती। अन्य कई कहानियों में कसाव की कमी लगी जिस पर ध्यान दिया जा सकता था।

कुल मिलकर ममता जी का दूसरा कहानी संग्रह 'डोर अंजानी सी' उन्हें हिन्दी साहित्य के अग्रणी लेखकों की कतार में आगे खड़ा करने में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

000

केंद्र में पुस्तक

(कहानी संग्रह)

टूटी पेंसिल

समीक्षक : दीपक गिरकर,
जसविन्दर कौर बिन्द्रा
लेखक : हंसा दीप
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545
मोबाइल- +91-9806162184
ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016, मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com
जसविन्दर कौर बिन्द्रा
आर-142, पहली मंज़िल,
ग्रेटर कैलाश-1, नई दिल्ली 110048
मोबाइल- 9868182835
ईमेल- jasvinderkaurbindra@gmail.com

मानवीय संवेदनाओं की कहानियाँ

दीपक गिरकर

टूटी पेंसिल सुपरिचित प्रवासी कथाकार डॉ. हंसा दीप का आठवाँ कहानी संग्रह है। समकालीन प्रवासी कथाकारों में डॉ. हंसा दीप ने अपनी सशक्त और अलहदा पहचान बनाई है। लेखिका अपने आसपास के परिवेश से चरित्र खोजती हैं। वे आम जीवन से अपने पात्र उठाती हैं। कहानियों के हर पात्र की अपनी चारित्रिक विशेषता है, अपना परिवेश है जिसे लेखिका ने सफलतापूर्वक निरूपित किया है। डॉ. हंसा दीप एक ऐसी कथाकार हैं जो भारतीय और वैश्विक जनमानस की पारिवारिक पारम्परिक स्थितियों, मानसिकता, पीढ़ीगत अंतराल के कई पक्षों को यथार्थ की क़लम से उकेरती हैं और वे भावनाओं को गढ़ना जानती हैं। लेखिका के पास गहरी मनोवैज्ञानिक पकड़ है। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 18 कहानियाँ हैं। हंसा जी अपनी कहानियों के पात्रों के अंतस के तार-तार खोलकर सामने लाती हैं। हंसा जी की कहानियों में यथार्थवादी जीवन का सटीक चित्रण है। डॉ. हंसा दीप के इस संग्रह की कहानियों को पढ़ने के पूर्व उनके आत्मकथ्य को पढ़ना ज़रूरी है जिसमें उन्होंने लिखा है 'इस कहानी संग्रह में पेड़-पौधे, घास, श्वान जैसे चरित्रों से उपजे कई कथ्य हैं जो किसी कल्पना के तहत काग़ज़ पर नहीं उतरे बल्कि आसपास के यथार्थ को अपने में समेटे कुछ विशेष कहने का माद्दा रखते हैं। किसी कहानी में प्रकृति के साथ इंसानी रिश्तों को जोड़ते बिंदु हैं तो किसी में जंगली घास जैसा जंगलीपन है जो इंसानों के बीच भी तेज़ी से फैलता है। रिश्तों के उलझे धागों को सुलझाते पिता का अंतर्द्वंद्व हो या फिर पिता के रूप में पेड़ की छाँव तले जीवन हो। विविध, मगर दैनंदिन के कार्यकलापों से आकार लेती ये कहानियाँ कभी भावुक करती हैं, कभी हक़ीक़त सामने लाती हैं तो कभी व्यंजना शक्ति से तीखी और धारदार शैली में अपनी सार्थकता को सिद्ध करने का प्रयास करती हैं।'

टूटी पेंसिल कहानी डॉक्टर से चेकअप करवाकर पैथोलॉजी में सारे टेस्ट करवाने वालों के लिए जाना-पहचाना दृश्य प्रस्तुत करती है। इस कहानी में परिवार के सदस्यों की बदलती मन:स्थितियों, उनके आपसी संवाद और व्यवहारों का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। इस कहानी में परिवार के सदस्यों का स्नेह है, भारतीय संस्कृति की झलक है। कथाकार शरीर के टेस्ट रिपोर्ट की आशंका के भय के जटिल द्वंद्व से झूलती रेमि की मानसिक स्थिति को रेखांकित करने में सफल रही हैं। घास एक संस्मरणात्मक कहानी है। भाषा की रवानगी और क़िस्सागोई की कला इस कहानी की और सशक्त बनाती है। अपने काम को आनंद के साथ करने वाला इस कहानी का मुख्य किरदार लीटो हर पल को भरपूर जीने का सन्देश देता है। उत्सर्जन कहानी बेहद संवेदनशील है। इस कहानी में अपनी माँ की मृत्यु के पश्चात अपने पिता की चुप्पियों के बीच बेटे के अंदर उगते अकेलेपन के साथ उसके अंत:स्थल में स्मृतियों का टापू बनने लगता है। अंत में कहानी पाठको को भाव विह्वल कर देती है।

अमर्त्य कहानी में क्लासरूम्स विद्यार्थियों से ख़ाली हो जाते हैं तब नोआ साफ़ सफाई करते वक़्त बोर्ड पर लिखती रहती है। इस कहानी की केन्द्रीय चरित्र नोआ की आँखों में एक सपना था कि वह इस यूनिवर्सिटी में एक प्रोफ़ेसर बन जाए। नोआ का चरित्र एक जुझारू, कर्मठ और ज़िंदादिल इंसान के रूप में उभरता है। उसकी उम्र हो चुकी है इसलिए वह चाहती है कि उसका बेटा ग्रेग अच्छी पढ़ाई करके यूनिवर्सिटी में प्रोफ़ेसर बन कर विद्यार्थियों को पढ़ाए लेकिन उसका बेटा उसकी इच्छा पूरी नहीं करता है और वह अपने पिताजी के कंस्ट्रक्शन काम में लग जाता है। ग्रेग की बेटी अर्थात नोआ की पोती उसी यूनिवर्सिटी में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर बनकर नोआ के सपने को पूरा करती है। श्वान कहानी में समाज के लोग एक छोटी सी घटना से व्याकुल दिखते हैं।

ज़िंदा इतिहास कहानी में लेखिका ने यथार्थ को कला के साथ जोड़ कर इस कहानी का गठन किया है। यह सांकेतिक कहानी है जिसमें प्रतीकों का सहारा लेकर संवेदनाओं को उकेरा

है। आसमान कहानी में विमान यात्रा की अपनी अनुभूतियों को कथाकार ने संवेदना के सूक्ष्मतम स्तर पर अभिव्यक्त किया है। पड़ोसी के पैर का लगातार हिलना, सात-आठ साल की बच्ची का रेखाएँ खींचते हुए आकार बनाना और उसमें रंग भरना, एक शिशु के रोने की आवाज़ इत्यादि को जिस तरह यह कहानी दर्ज करती वह बहुत ही जीवंत और स्पर्शी है। यह कहानी बड़े ही हल्के-फुल्के अंदाज़ में लिखी गई है। कहानीकार ने दो अलहदा छोर कहानी से पाठकों को विस्मित कर दिया है। वे इस कहानी के माध्यम से जीवन की लय और ख़ुशबू को एक साथ वृद्धावस्था में हमारी बंजर होती ज़िंदगी में बिखेरकर हमारे चेहरों पर एक संतृप्ति की मुस्कान ला देती हैं। सिरहाने का जंगल कहानी में स्त्रियों के मन की अनकही बातों को, उनके जीवन के संघर्ष को और उनके सवालों को रेखांकित किया हैं। यह कहानी नारी मन का मनोवैज्ञानिक तरीके से विश्लेषण करती है। कहानी पारिवारिक ऊष्मा को सहेजने और रिश्तों के संवेदनात्मक आवेग महसूस करने का यत्न करती है।

विखंडित सामाजिक विषमताओं से जूझती कहानी है। यह संग्रह की सर्वाधिक प्रभावशाली कहानी है। कहानी आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई है। कथ्य बुना गया है तीन बहनों में सबसे छोटी बहन पर। तीसरी बार में माता-पिता को एक बेटे की इच्छा थी लेकिन बेटी का जन्म हो गया। इस बेटी को माता-पिता ने एक बेटे की तरह पाला। पेरेंट्स की हठधर्मिता ने इस तीसरी बेटी के भीतर से लड़की को धीरे-धीरे ख़त्म कर दिया था। जब इस तीसरी बेटी को एक लड़की रीत से प्यार हो जाता है और दोनों शादी करना चाहते हैं तब तीसरी बेटी के पेरेंट्स उसके दुश्मन हो गए थे। जब दोनों दूसरे देश भागने के लिए एयरपोर्ट पर पहुँचते हैं तो रीत के पेरेंट्स रीत को एयरपोर्ट से वापस खींचकर घर ले चले जाते हैं और यह तीसरी बेटी अकेले दूसरे देश चली जाती है और रीत की यादों के सहारे अपना जीवन बिताती है। कहानी में सबसे छोटी बेटी के अंतर्द्वंद्व को बहुत बारीकी से दर्शाया गया है।

हलाहल आत्मकथात्मक शैली में लिखी एक बेहतरीन कहानी है जिसमें कक्षा में एक छात्र शिक्षिका से प्रश्न पूछता है 'भगवान् शब्द किस धर्म का शब्द है?' शिक्षिका जवाब देती है 'यह हिन्दी का शब्द है। भाषा किसी धर्म में नहीं बँटती।'

कुहासा एक मर्मस्पर्शी कहानी है। इस कहानी में एक माँ जो बच्चों को छोटी छोटी ग़लतियों पर डाँटती थी, अचानक एक दिन वह अपने स्वभाव के विपरीत अपने बेटे की बड़ी ग़लती पर भी चुप रहती है तब घर के सभी सदस्यों को लगता हैं कि शायद माँ बीमार हो गई है। माँ को अब समझ में आ गया था कि अब दोनों बच्चे बड़े हो गए हैं उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी समझनी होगी। कुछ भी ग़लत करो तो उसे ठीक भी उसी को करना होगा जिसने ग़लती की है। अब घर स्व अनुशासित हो गया था। अप्रत्याशित कहानी में एक परिवार को नाम के चक्कर ग़लतफहमी हो जाती है। जिस बाबू की मृत्यु का यह परिवार शोक मना रहा था वे बाबू ज़िंदा थे। जिन बाबूलाल की मृत्यु हुई थी वे भारत में इनके ही शहर के थे। कथाकार की रोचक भाषा इस कहानी को दिलचस्प बना देती है।

हाईवे 401 एक सांकेतिक कहानी है जो कथाकार की क़िस्सागोई कला से प्रभावशाली बन गई है। आईना और पहिए कहानी शिल्प की नवीनता, भाषा-शैली और भावाभिव्यंजना से बेहद रोचक बन पड़ी हैं। पहिए कहानी रेखाचित्र ज़्यादा है और कहानी कम। एक वृद्ध दंपति के जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों का जीवंत ब्यौरा हृदय को विचलित कर कर देता है और पाठक भावुक हो जाता है। मूक सूरज कहानी में एक वृद्ध स्त्री पर एक मॉल में वहाँ का कर्मचारी चोरी का झूठा आरोप लगाता है लेकिन अंत में सत्य की जीत होती है। पेड़ एक भावनात्मक और पारिवारिक संबंधों के बदलते स्वरूप की कहानी है। पेड़ कहानी अत्यंत हृदयस्पर्शी है जिसमें कथाकार आज के तथाकथित सभ्य समाज को आईना दिखाकर सोचने को विवश कर देती है कि हमारे समाज में अब पारिवारिक रिश्तों का मूल्य क्या हैं?

कथाकार ने टूटी पेंसिल, उत्सर्जन, विखंडित, पेड़ इत्यादि कहानियों में विदेशों में बसे प्रवासी भारतीयों और विदेशी नागरिकों के जीवन व संस्कृति की एक-एक बारीक बात का सूक्ष्म चित्रण किया है। विखंडित, सिरहाने का जंगल जैसी कहानियों में लेखिका जीवन की विसंगतियों और जीवन के कच्चे चिठ्ठों को उद्घाटित करने में सफल हुई हैं। कहानीकार टूटी पेंसिल, सिरहाने का जंगल, आईना जैसी कहानियाँ में स्त्री पात्रों के अंतर्मन को कुरेदती हैं।

ये कहानियाँ जीवन के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं से पाठकों को रूबरू करवाती हैं। मुंशी प्रेमचंद का मानना था कि उत्कृष्ट कहानी वह है जिसका आधार मनोविज्ञान हो। इस दृष्टि से इस कहानी संग्रह की कहानियों में मनोविज्ञान का कुशलता के साथ प्रयोग हुआ है। सभी कहानियाँ लीक से हटकर हैं। इस संग्रह की कहानियों में भावनाओं का आवेग प्रकट हुआ है। ये कहानियाँ मानवीय संबंधों को हर कोण से अभिव्यक्त करती हैं। ये कहानियाँ अपने कथा फ़लक का पाठक से तारतम्य ही नहीं बिठातीं बल्कि अपने साथ बहा ले जाती हैं। प्रत्येक कहानी में विषय और प्रस्तुति के स्तर पर नयापन दिखाई देता है। इस संग्रह की कहानियों में समस्याएँ जितनी जटिल हैं, उनके समाधान उतनी ही सरलता से किया जाना कथाकार की रचनाशीलता को रेखांकित करता है। इन कहानियों में भारतीय मन और विदेशी जीवन- दोनों की आवाज़ाही चलती रहती है।

नवीन विषयवस्तु और सुंदर शिल्प में बुनी ये कहानियाँ सहज ही पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। ये कहानियाँ जिस तरह से बुनी गई है वह लेखिका के लेखकीय कौशल को उद्घाटित करता है। इनकी कहानियों के पात्र कई दिनों तक इनके मन-मस्तिष्क में छाए रहते हैं, फिर वे धीरे-धीरे बेहद संजीदगी और अपार धैर्य तथा लेखन-कला के विविध रंगों की सहायता से इत्मीनान के साथ कहानियों को बुनती हैं। डॉ. हंसा दीप की ये कहानियाँ बिना किसी शोर-शराबे के

दैनिक कार्यकलापों से आकार लेती, कभी भावुक कर देती हैं तो कभी हक़ीक़त सामने लाती हैं। डॉ. हंसा दीप की छोटी-छोटी कहानियाँ अपने कथ्य, शिल्प और सहज-सरल भाषा से वैश्विक धरातल पर मानवीय संवेदनाओं की एकरूपता को उकेरने का प्रयास करती हैं तथा वे अपने इस प्रयास में सफल भी होती हैं। कहानियों से गुज़रते हुए स्वाभाविकता का गहरा बोध होता है। कहानियाँ पाठकों से बातें करती हैं। उनके पात्र जीवन के हर क्षेत्र से आए हैं। कथाकार कहीं भी अपने चरित्रों को अनावश्यक उलझाती नहीं है। घटनाओं का सहज आरोह कथानक को गति देता है। कथाकार कथानक के माध्यम से पात्रों के अतल मन की गहराइयों की थाह लेती हैं। कहानियों के पात्र मानवीय संवेदनाओं को पूरी सत्यता के साथ उजागर करते हैं। डॉ. हंसा दीप को पढ़ना हमेशा समृद्ध करता है। आशा है उनके इस कहानी संग्रह को भी पाठकों का भरपूर प्यार और सम्मान मिलेगा।

000

पाठ पढ़ाती कहानियाँ

जसविन्दर कौर बिन्द्रा

हिन्दी साहित्य की जानी-पहचानी हंसा दीप का नवीन कहानी संग्रह 'टूटी पेंसिल', जिसमें 18 कहानियाँ शामिल हैं। हालाँकि पृष्ठों की संख्या केवल 142 देख कर, समझ में आ जाता है कि कहानियाँ अधिक लंबी नहीं। लंबे समय से कैनेडा में रहने के कारण सारी कहानियाँ लगभग वहाँ के माहौल के इर्द-गिर्द घूमती हैं।

हंसा दीप की कहानियाँ समकालीन समय में तेज़ रफ्तार का पर्याय बन चुके भागते जीवन को किसी विचार, किसी घटना या किसी व्यक्ति से मिलने पर अचानक से ब्रेक लगाती हैं। वह ब्रेक खीझ उत्पन्न करने की बजाय व्यक्ति को कुछ सोचने पर मजबूर कर देती है। उन पलों का विराम अक्सर झिंझोड़ने का काम भी कर जाता है, जब निर्बाध गति किसी मुकाम पर झटके से रुकने पर मजबूर होती है। वैसे तो आज घटनाएँ इतनी तेज़ी से घटती हैं कि जितनी तेज़ी से वे 'वायरल' होती हैं, उतनी तेज़ी से कोई दूसरी घटना उसका स्थान ले लेती है। इस सारे उपक्रमों को सोशल मीडिया ने और भी बेबाक, बेधड़क और बेलौस कर दिया है और समाज को उतना ही संवेदनहीन। इन सबके बीच व्यक्ति आँकड़े बन कर, बस हवा में तैरने लगे हैं। मनुष्य जात... जो होश गवाँ कर, सत्य-असत्य के बीच का अंतर भूल कर, केवल दिखाए जा रहे को ही प्रमाणिक मान कर, अपनी सोचने-समझने की शक्ति को घर के किसी आले या कोने में रख कर भूल गई और नारों और शोशेबाज़ी के शोरगुल में बदहवास होने लगी है। ऐसे में जब किन्हीं आंतरिक पलों में कोई एक छोटा सा बिंदु आपको घेर लें, विचार आह्लादित कर जाए, तब पता लगता है कि हम जीवित हैं, वरना तो संसारिक जीवन में आभासी जीवन का ही परचम लहरा रहा है। हंसा की कहानियाँ उस तैरते व हिचकोले खाते हमारे जीवन को पल भर के लिए धचके से रोक देती हैं। फिर उसका प्रभाव कैसा पड़ता है, ये पाठकों पर निर्भर है।

'टूटी पेंसिल' प्रतीक है, हमारे जिए जा रहे जीवन का, यदि पेंसिल का टूटना हमारी बेहोशी से हमें बाहर निकालता है या हमारी यथास्थिति से अवगत करवाकर, हमारी मनोदशा बदलने में सहायक होता है, हमें बेहतर सोचने की ओर लगाता है तो इससे बढ़िया कुछ नहीं हो सकता। यह वो ठोकर है, जो बेध्यान होने पर, लापरवाह होने पर या आगे के बारे में अनिश्चिंत होने पर लगती है। जो ठोकर खाकर सँभल जाए, गिर कर उठ खड़ा हो और आगे के लिए सतर्क हो जाए....उन सभी को इस टूटने व ठोकर खाने के प्रति आभारी होना चाहिए, जिसने उन्हें चेतन कर दिया, सजग कर दिया। यह ठोकर या किसी नुकीले पदार्थ का टूट कर बिखर जाना, वरदान साबित हो सकता है....सौदा बुरा नहीं। जिसे आज की दुनिया में कहते है, 'गुड डील!'

यह मनोस्थिति लेखिका की सभी कहानियों में दिखाई देती है। इसकी अधिकतर कहानियाँ मध्यम वर्ग के कई पड़ावों से जुड़ी है। जिसमें युवा वर्ग, अधेड़ उम्र से लेकर बुढ़ापे तक पहुँचे दंपति, कहीं अकेलेपन ढ़ोते, कहीं अपने मन का जीते और कहीं औलाद से संवादहीनता की स्थिति को झेलते नज़र आते हैं।

संग्रह के शीर्षक की पहली कहानी 'टूटी पेंसिल' पाठकों को इसी उद्देश्य से चौंका देती है, जैसे कहानी की वक़्ता पात्र, डॉक्टर से अपने स्वास्थ्य संबंधी चिंताजनक सूचना पाकर चौंक जाती है। उसे लगता है, सब ठीक है परन्तु डॉक्टरों का कहा आसानी से झुठलाया नहीं जा सकता। कई प्रकार के टैस्ट, ट्रीटमैंट्स करते हुए मन बस घबराता रहा। परन्तु कुछ दिनों की उथल-पुथल के बाद अंततः रिपोर्टें ठीक आईं। इस दौरान पति महोदय बेशक लापरवाही के ताने देकर डाँटते अधिक रहे परन्तु उनकी बौखलाहट में पत्नी के प्रति अत्यन्त चिंता और फ़िक्रमंदी झलकती रही। सब ठीक होने का आदेश मिलने पर ज़िंदगी की अहमियत, रिश्तों का नाता पहले से अधिक गहरा लगने लगा। 'उत्सर्जन' में जब माँ चली गई तो घर में रह गए बाप और पुत्र, पहले से भी अधिक दूर हो गए। पुत्र नाराज़ है कि माँ के जाने से बाप को कोई दुख नहीं, परन्तु जब बाप ने अपने सफल दांपत्य के बारे में बताया और कहा, यदि वह पहले मर जाता तो पत्नी अधिक दुखी होती। तब माँ की क़ब्र पर फूल चढ़ाने के बाद दोनों बाप-बेटे के रूप में वापस आए।

'दो अलहदा छोर' कहानी भी एक ब्रेक की ही है, जहाँ विदेशों में रह रहे दो बुज़ुर्गों ने अपने बोरियत भरे, रूटीन जीवन को नया नाम देकर ख़ुद को धड़कता महसूस करना शुरू किया। स्वयं को 'ए लड़का और ए लड़की' का संबोधन और छुपन-छुपाई खेलना और मिलकर चॉकलेट खाना...। यह कहानी प्रवास में बुज़ुर्गों के रसहीन जीवन और किसी साथी की तलाश को वर्णित कर, कहीं गहरे छू जाती है। परन्तु बुढ़ापे की वास्तविकता से भी मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। 'सिरहाने का जंगल' जो स्त्री की स्थिति को परिवार व समाज में एक-दो डॉलर के कैनेडियन सिक्कों लूनी-टूनी के रूप में दर्शाता है। जैसे निन्यानवें सेंट का मूल्य एक अंक बढ़ने के बाद ही

बदलता है, तब वह सौ के रूप में पूर्ण होता है। स्त्री का अस्तित्व भी ऐसे ही है, जो घर-गृहस्थी व परिवार को एक पूर्ण इकाई के रूप में बाँधती, सँभालती व सहेजती है। जबकि बाज़ार में डॉलर को उसके मूल्य अनुसार अपनाया जाता है परन्तु यह अस्तित्व स्त्री के हिस्से कई बार नहीं आ पाता।

कुछ कहानियों के केंद्र में लेखिका ने विदेशी पात्रों को रखा। 'पहिए' में कैमिला के पैरों के चलने से जवाब दे देने पर पति हेनरी ने उसकी व्हील चेयर को अपने हाथों-पैरों का साथ ही नहीं, पूरी आत्मीयता व प्यार दिया। अचानक हेनरी के चले जाने के बाद कैमिला भले ऑपरेशन के बाद फिर से चलने लगी परन्तु अब कैमिला, हेनरी के बगैर अधूरी हो गई थी। व्हील चेयर व हेनरी के साथ ने उसे अब तक संभाले रखा था। पति-पत्नी का साथ, ख़ासकर बुढ़ापे में अत्यन्त आवश्यक होता है। उम्रदराज पैट्रिशिया ने कैनेडा के बर्फीले मौसम में ख़ुद को थोड़ा सा व्यस्त रखने के उद्देश्य से नियत समय पर निकट के स्टोर में जाना शुरू किया। जहाँ के युवा मैनेजर पीटर को उसके चोर होने का संदेह होने लगा। अपने संदेह को उसे यकीन में स्वयं ही बदल कर, बुढ़िया को सबके सामने चोर साबित कर दिया। परन्तु पुलिस में कार्यरत उसके युवा पोते ने मुस्तैदी से छानबीन कर, पीटर को स्वयं उसकी ट्राली में सामान रखने की वीडियो फुटेज पेश कर, अपनी दादी को निर्दोष साबित कर दिया। बुढ़ापे में लगा यह दाग़ धुलने के बाद सूरज मूक न रह कर चमकता प्रतीत होने लगा। माँ-बाप अपनी कई-कई संतानों को एक साथ पालते, पढ़ाते और ब्याहते हैं परन्तु औलाद के लिए अपने ही माँ-बाप को सँभालना आफत लगने लगता है। एक पेड़ की छाँव सभी पर समान रूप से पड़ती रही परन्तु जब वह पेड़ गिरा तो उसको उठाने व सँभालने की ज़िम्मेदारी लेने से चारों परिवार पल्ला छुड़ाने लगे। यूनीवर्सिटी में सफाई कर्मचारी नोआ स्वयं को क्लास के प्रोफ़ेसर के रूप में देखना का सपना पालते हुए, ख़ाली क्लासों में खड़े होकर देखे-सुने प्रोफ़ेसरों की नकल करती। काफी समय बीत गया, जब वहाँ की प्रोफ़ेसर अनम डीन बन कर, उसी यूनीवर्सिटी में पहुँची तो 'नोआ' सुन कर सुखद आश्चर्य भर गई। उसी नोआ की पोती नोऐमी उसके विभाग में असिस्टेंट के तौर पर नियुक्त हुई थी। दादी ने अपने सपने को मरने नहीं दिया, अमर्त्य कर दिया, तभी तो पोती उसी जगह प्रोफ़ेसर बनी, जहाँ दादी ने सफाई करते-करते खुली आँखों से सपना देखा था।

कुछ रचनाएँ कहानियाँ कम भाव से ओत-प्रोत अधिक लगीं, जैसे- श्वान, आसमान, हाईवे 401, हलाहल आदि। लॉन में लहु-लुहान श्वान का शव, उसे देख कर घबराहट होना, लॉन साफ करने की चिंता के साथ रात बीतने पर अगली सुबह वहाँ से उस श्वान का ग़ायब हो जाना, समाज में छिप कर बैठे लोगों द्वारा कमज़ोर का शिकार करने और फिर ख़ुद ही उन्हें निपटा देने की ओर इशारा करता है। ऐसे शिकारी कैनेडा में भी है...? हमें तो लगता है, यहीं पर ज़्यादा है। हलाहल में 'भगवान्' शब्द को किस धर्म का है? पहनावे, नाम, जातियों से तो व्यक्ति को आसानी से पहचानने की कोशिश की जाती है, अब शब्दों द्वारा भी इसका पता लगाने का प्रयास....ख़तरनाक स्थिति की ओर ले जाने वाला है। इसका जवाब न देना ही बेहतर है। हाईवे 401 ने कोरोना काल में जीवन के चलायमान होने का एहसास बनाए रखा परन्तु फ्री में बँटते कप केक और काफी की लाइन में खड़े होकर स्वयं को भिखारी के रूप में सोचना सही नहीं लगा। दोनों में अंतर है, भिखारी का जीवन भीख से बसर होता है और भारतीयों के लिए लाइन में लग कर प्रशाद या भंडारे से लेकर खाना आम बात है।

संग्रह की कुछ कहानियों ने काफी प्रभावित किया जिनमें कुहासा, घास और ज़िंदा इतिहास का नाम विशेष तौर पर लिया जा सकता है। माँ की डाँट-डपट, ग़ुस्सा करना व चिल्लाना वो न कर पाया, जो उसकी चुप्पी और सहजता ने कर दिखाया। ग़ुस्से ने पति और बच्चों को लापरवाह अधिक बनाया और चुप्पी ने अपना कर्त्तव्य सँभालना सिखा दिया। यह कुहासा भी पेंसिल टूटने समान है, एक ब्रेक...! जब माँ को यह सब फ़िज़ूल लगने का एहसास हुआ, वहीं बदलाव आरंभ हो गया। लीटो ख़ुशी से गर्मियों में सभी के घरों की घास काटता और बर्फीले जाड़े में बर्फ हटाता। अपनी मेहनत के पैसे लेता। परन्तु जब घास में जंगली घास के पीले फूल नज़र आने लगे तो एक घर की मालकिन की त्यौरियाँ चढ़ गई कि बंदा सही ढंग से काम नहीं करता। लगी, डाँटने-फटकारने...। जब उसे मालूम हुआ, यह लीटो दस मिलियन प्रापर्टी का मालिक है, केवल अपनी ख़ुशी से, समय काटने के लिए यह काम करता है तो उसे लगा लॉन से ज़्यादा उसके दिमाग़ में अहंकार की, मालिकाना हक़ की जंगली घास अधिक उग आई है। पोती को चित्रकारी मुकाबले में हिस्सा लेने के लिए कुछ नया, कुछ अनोखा बनाना है। आँखें बंद कर, अपने सभी चित्रों पर अक्कड़-बक्कड़ कर चुनाव करते समय जब हाथ दादी पर आ पड़ा तो वह दादी से नाराज़ हो गई। चित्र चुनते हुए आप बीच में क्यों आई। दादी ने पोपले मुँह से हँसते हुए कहा, 'तुमने चुन तो लिया मुझे।' दादी के चेहरे की वो झुर्रियाँ और शरीर की सिलवटें...अपने समय का इतिहास। 'ज़िंदा इतिहास...!' जिसे लकीरों व रंगों की तूलिका में उतार सकना इतना सरल भी नहीं।

हंसा दीप की कहानियाँ सरल हैं, आसानी से पाठकों की समझ में आने वाली परन्तु कहीं-कहीं संवेदनशील भी। जो बहुत अधिक सपनों में उड़ने, महत्त्वाकांक्षी होने की बजाय, ख़ुद तक सीमित होने में भी ख़ुश है बशर्ते अपनों का साथ हो, जो सुख-दुख में भी बना रहे। बिल्कुल उस तरह जैसे एक सामान्य लड़की का सपना होता है, उसका अपना घर-गृहस्थी व परिवार हो। जिसके साथ वह अपना पूरा जीवन प्यार और आसानी से बिता लेने को ही अपना सौभाग्य मानती है। यह सादगी, यह सरलता देखने में जितनी साधरण लगती हैं, उस सहज स्थिति तक पहुँचने का मार्ग बड़े-बड़े ज्ञानी-ध्यानी देते हुए हार गए परन्तु मनुष्य उस सहज अवस्था तक पहुँचने के लिए अभी भी संघर्षशील है....! बस सजग रहो, सतर्क रहो और चेतन रहो...।

000

केंद्र में पुस्तक

(कहानी संग्रह)

ज़ोया देसाई कॉटेज

समीक्षक : अमृतलाल मदान, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, गोविन्द सेन

लेखक : पंकज सुबीर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

अमृतलाल मदान
1150/11,
प्रोफेसर कॉलोनी,
कैथल, 136027 (ह.प्र.)
मोबाइल- 9466239164

डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ
डी-131, रमेश विहार,
अलीगढ़-202001, उप्र
मोबाइल- 9837004113

गोविन्द सेन
राधारमण कॉलोनी,
मनावर-454446, मप्र
मोबाइल- 9893010439

जीवन की विविधरंगी प्रदर्शनी-दीर्घा

अमृतलाल मदान

पंकज सुबीर की कहानियाँ और उपन्यास जीवन की विविधरंगी प्रदर्शनी-दीर्घा देखते हुए थम-थम कर गुनते-सोचते हुए चकित होते हुए-से गुज़रने जैसा है। उनके इस नए कहानी-संग्रह की ग्यारह कहानियाँ पढ़ते हुए भी कुछ ऐसा ही महसूस होता रहा। आधे से अधिक कहानियों का मूल या केन्द्र बिंदु तो स्त्री-पुरुष (नारा-मादा) आकर्षण, तथा प्रेम के भाँति-भाँति के रूप हैं। शेष कहानियाँ अलग-अलग सामयिक थीम पर हैं।

सर्वप्रथम तो हम प्रेम विषय को ही लेते हैं जिसके अनेक रूप हमें छह कहानियों में देखने को मिलते हैं। पर ये शाब्दिक वर्णन-चित्रण ऊबाऊ कत्तई नहीं हैं, आधिक, जीवनानुभवों से पगे हुए, अनुभूतियों व मनोविज्ञान-विज्ञान द्वारा पुष्ट सूत्रवाक्यों, डायरी में अंकित वाक्यों या कोटेशनों द्वारा समर्धित हैं यथा-देह की विभिन्न संवेदन तंत्रियों (जो करोड़ों-अरबों की संख्या में हैं) द्वारा अनुभूत उत्तेजनाएँ।

कहानी 'डायरी में नील कुसुम' की पहली कोटेशन- 'वसंत जीवन की एक अवस्था का नाम है...' तथा बाद में 'प्रेम में होना ही तो वसंत में होना है।' यहाँ सम्पन्न घर की किशोरी शुभ्रा का घर में सफाई का कार्य करते दलित किशोर हरिया के प्रति नैसार्गिक आकर्षण एक प्रकार से प्रतिरोध का स्वरूप भी है। शुभ्रा के छोटे मामा का गिरते हुए हरिया को थप्पड़ मारना और यदा कदा हरिया की माँ को बाथ रूम जा घेर लेना-ये दृश्य शुभ्रा के मन में आक्रोश पैदा करते हैं... और फिर इस उम्र में फेंटेसी...(हरिया के होंठ, होंठ नहीं नील कुसुम हैं...और उन पर रक्त कमल की पंखुरियाँ का जा कर बिछ जाना) और (जीवन का प्रथम चुंबन)

इस कड़ी में दूसरी कहानी 'खजुराहो' है जिसमें उत्तेजनात्मक प्रेम की उत्प्रेरक (जो पवित्र-अपवित्र के द्वंद्व से बहुत ऊपर उठ जाता है) खजुराहो के मंदिरों की मैथुन मूर्तियाँ-कलाकृतियाँ हैं। और इनकी मुखमुद्राओं में कोई पश्चाताप की झलक नहीं अपितु, परम आनंद एवं संतुष्टि के भाव हैं।

यद्यपि कुछ स्थापित मान्यताओं के प्रति असहमति के वावजूद सुजाता की बातें क्रांतिकारी हैं, घोर नारीवादी हैं। यहाँ भी हवेली होटल के एक बुक शेल्फ में एक डायरी मिलती है कथा नायिका नेहा को, जिसमें कलात्मक रेखचित्र तो हैं ही तथा उर्दू के उम्दा अशआर तथा कुछ इबारतें भी दर्ज हैं। पास ही झरोखे में एक रहस्यमयी सुजाता बैठी है, जो उसके पास ड्राइवर के रूप में सेक्स वर्कर भेजती है और डायरी लेखिका का भेद भी खोलती है तथा क्यू.एच. और डी.एस. का भी।

स्त्री-पुरुष आकर्षण की अगली कहानी है 'जाल फेंक रे मछेरे' यहाँ ताहिर जैसे हसीन नौजवान बेटे को उसकी माँ सकीना होने वाली ससुराल में सोन मछरी सबा को फाँसने भेजती है किंतु होता इसके उल्टा है। ताहिर ख़ुद सबा की चालीस वर्षीया माँ (जो इंदौर में कई वर्षों से विधवा है) के जाल में फँस कर उससे निकाह करने का फैसला करता है। यहाँ जाल उसी आकर्षण का रहस्मय प्रतीक है जो अनजान व अटपटी परिस्थितियों में स्त्री-पुरुषों को अचानक फाँस लेता है।

'ज़ोया देसाई कॉटेज' शीर्षक कहानी है जिसमें अमरीका से आई ज़ोया पति को इंदौर के ग्लोबल सामिट में छोड़ माण्डू के खंडहर देखने आई है और रूपमती कॉटेज में ठहरती है। वहाँ वह रूपमती महल में भटकती रहती है और ख़ुद प्रेमिका रूपमती बनने की चाह में होटल मालिक राहुल के साथ संबंध बना लेती है, जो अब मशीन से इंसान बना हुआ महसूस करता है 'बाज़ बहादुर' की तरह। ज़ोया अमरीका लौट कर उसे पैसा भेजती है और शुक्रिया भी कि पति से असंतुष्ट पत्नी को रूपमती बना दिया।

अगली कहानी 'जूली और कालू की प्रेम कथा में गोबर' में पशु नर-मादा का आकर्षण है जिसके कारण कृषक-पुत्र गोबर को ज़िलाधीश महोदय के कोप का भाजन बनना पड़ा। साहब

की पालतू कुतिया फ़ारेस्ट विश्राम गृह से भटक होरी के खेत की रखवाली करते कुत्ते कालू के स्वाभाविक मौसमी आकर्षण में फँस गई और बेचारे गोबर को असह्य ज़ुल्मों का शिकार बनना पड़ा। यह कहानी प्रशासनिक व्यवस्था पर भी करारी चोट है और रोबोट बने अर्दली व गनमैन पर भी।

इस कड़ी में अंतिम कहानी हैं 'उजियारी काकी हँस रही हैं' जो पितृ-सत्ता के पैरोकारों पर सशक्त प्रहार भी है और अंधे यौवन के परस्पर आकर्षण के कारण हमउम्र अनिल और उसकी चाची उजियारी काकी के बीच हँसी-मज़ाक से उपजे ईर्ष्या पर भी। पति गोपाल के मन में पत्नी की सुंदरता को लेकर शुरू से ही असुरक्षा और चिढ़ का भाव था। पितृ सत्ता के पक्षधर संयुक्त परिवार में बहुत सुंदर स्त्रियों के हिस्से में सुख नहीं आते। एक बार हँसती हुई कैमरे में पकड़ी उजियारी काकी के जीवन में आख़िर तक दुबारा हँसी नहीं आई, जबकि पति ने चिढ़कर अपनी पुरुष सत्ता का वर्चस्व दिखाते हुए नगर में जाकर दूसरी शादी भी कर ली। काकी मर कर भी चित्र में ही हँसती रहीं और पति को निष्कासित कर जीवन ठेलती रही।

अब लेते हैं उन पाँच कहानियों को जो प्रेम से इतर विषयों पर हैं। पहली कहानी 'स्थगित समय गुफ़ा के वे फलाने आदमी' कोविड समय की सशक्त कहानी है जब इस नामुराद बीमारी के कारण निकटतम संबंध भी तार-तार हो गए थे। इस दारुण कथा में कुछ स्वयं सेवी ही एक वृद्ध की लाश को ठिकाने लगाते हैं जब कि उसकी पत्नी और बेटी दूर खड़ी मूक दर्शक बनी रहती है कि ख़ुद संक्रमित न हो जाएँ। पूरी कहानी का माहौल पाठकों को दहशत से भर देता है। कहानी के अंत में मीडिया द्वारा गर्व, प्रणाम, सलाम, नमन, अभिनंदन, अधिकारों से हट कर्त्तव्य की प्रमुखता का व्यंग्य नाटक तो कमाल का है।

दूसरी कहानी है 'ढोंड़ चले जै हैं काहू के संगे' जिसमें बुंदलेखंड के कोई मामूली गाँव ढोंड़ का वासी राकेश कुमार भोपाल में आकर सोशल मीडिया के कुचक्रों में फँस जाता है और देखता है कि वहाँ तो निरंतर घृणा का प्रचार प्रसार हो रहा है। जिसमें दूसरे धर्म वालों को बुरी तरह से लताड़ा जा रहा है- उपहास करती टिप्पणियों द्वारा। राकेश अपनी असहमतियाँ दर्ज कराते-कराते निकट मित्रों व रिश्तेदारों से भी टूट जाता है और मनोरोगी बन कर भोपाल से लापता हो जाता है। इससे पूर्व वह मनोचिकित्सक डॉ. संभव से किसी ऐसे टापू का पता पूछता है जहाँ जाकर वह अज्ञातवास में रह सके। (यहाँ मुझे मित्र स्वदेश दीपक की याद हो आती है जो अरसा पहले इस दुनियादारी और परिवार की बेरुखी से अर्धविक्षिप्तावस्था में लापता हो गया। राकेश कुमार की तरह एक दिन लापता हो गए थे। ऐसे अनजान टापू पर जाने के लिए, जिसके बारे में किसी को अब तक पता नहीं चल पाया। इस कहानी में राकेश द्वारा स्वदेश के नाम पत्र मुझे भीतर तक हिला गया।) राकेश जो ढोंड़ लौट जाने की धुन में था, वह गाँव भी नहीं लौटा और लुप्त हो गया।

अगली कहानी है 'रामस्वरूप अकेला नहीं जाएगा' बताती है कि कैसे आज तेज़ बदलती ज़िंदगी की रफ्तार इंसान को अपभ्रंश बनाए दे रही है। गाँव में मज़दूरी, शहर में लॉण्ड्री, मंदिर सेवा, कारपेंट्री, आदि करता हुआ एक बीमार वृद्ध की ख़ातिरदारी करता हुआ वृद्ध के करने पर नौकरी से निकाल दिया जाता है। अब उसकी वापसी यात्रा उसी क्रम से उल्टी शुरू होती है तो वह पाता है उसकी ज़रूरत ही नहीं कहीं भी, हर जगह अब मशीनें काम कर रही हैं वह धूल के धुँधलके में गाँव लौटता है। 'नोटा जान' किन्नरों की मुखिया बिंदिया की कहानी है, जो कभी चुनाव में नोटा अर्थात् मुख्य प्रत्याशियों को नकारने की अवस्था में जीत गई थी अब फिर किन्नर की तरह माँगती भटक रही है ताकि बहनों की शादी हो जाए। अंतिम कहानी 'हराम का अंडा' आई.वी.एफ़. विधि द्वारा नूरी को संतान प्रति हेतु डॉ. श्रेष्ठा सुझाती है कि डोनर कोई और हो और स्पर्म जावेद का लेकिन दकियानूसी जावेद इसे शरीयत के ख़िलाफ़ समझता है और इससे आधी राशि में दूसरा निकाह करने की सोचता है।

000

प्रतिरोध करती कहानियाँ
डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ

परिवेश-सजग उर्वर प्रतिभा के लिए नए विषयों का अभाव नहीं होता। वह अपने समय की चुनौतियों, विसंगतियों, परिवर्तनों से खाद-पानी लेते हुए कुछ नया रच पाती है। पंकज सुबीर की कारयित्री प्रतिभा नवोन्मेषशालिनी होने का निरंतर प्रमाण देती है। अपने कहानी संग्रह 'ज़ोया देसाई काटेज' में कभी वे कृत्रिम मेधा (ए आई) के दुष्प्रभाव को 'रामसरूप अकेला नहीं जाएगा' में इंगित करते हैं, तो कभी आईवीएफ द्वारा गर्भाधान की स्थिति की 'हराम का अण्डा' में बहस का मुद्दा बनाते हैं। एआई और आईवीएफ जैसी वैज्ञानिक अवधारणाएँ अभी सामान्य पाठकों के लिए बहुत परिचित और ग्राह्य नहीं हैं, अत: कहानीकार को 'इन विट्रो फर्टिलाइजेशन' को व्याख्ययित करना पड़ा है। 'ढोंड़ चले जैहैं काहू के संग' में सोशल मीडिया पर परोसी जा रही नफ़रत और बेहूदगी से संवेदनशील मन के लहूलुहान होने, व्यक्ति के मनोरागी होने की त्रासदी है। किन्नर जीवन की विडम्बना 'नोटा जान' में है और कोरोना-आपदा के बीच संचार माध्यम का अपने स्वार्थ और बाज़ार के लिए कुत्सित दुरुपयोग 'स्थगित-समय गुफा के वे फलाने आदमी' कहानी में केन्द्रस्थ है। दलित उत्पीड़न की वीभत्स वास्तविकता 'जूली और कालू की प्रेमकथा में गोबर' में है और पुरुष-शासित व्यवस्था में जड़ होती स्त्री की नियति 'उजियारी काकी हँस रही हैं'। 'जाल फेंक रे मछेरे...' व्यंग्य-कथा है, और 'खजुराहो', 'डायरी में नील कुसुम' और शीर्षक कहानी 'जोया देसाई कॉटेज' में कामसंबंधों की उलझनें हैं। 'नोटाजान' में कहानीकार ने जिस जिज्ञासा-भाव की चर्चा की है, उसी में पंकज सुबीर ने नए-नए कथा-क्षेत्रों और चरित्रों के अन्वेषण की आकुलता जगाई है- 'लेखक के अंदर हर समय कितनी जिज्ञासाएँ भरी रहती हैं। इन जिज्ञासाओं को लेकर ही लेखक उम्र भर जीता है और इनसे ही अपनी सारी रचनाओं को जन्म देता है।'

प्राय: सभी कहानियों में विसंगतियों-कुरूपताओं को 'अमानवीयकरण' का पर्याय

माना जा सकता है। अधिकतर कहानियाँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में मनुष्यता के हनन से चिंतित और क्षुब्ध हैं। 'स्थगित समय गुफ़ा के वे फलाने आदमी' में चार कोरोना योद्धा अपनी जान पर खेलकर मृतकों का दाहसंस्कार कर रहे हैं। यह काम उनका अपना चुनाव है, 'मिशन' है लेकिन सुविधाजीवी वर्ग का कुरूप चेहरा अपनी स्वार्थपरता में लीन है। एक चैनल का कर्त्ता-धर्त्ता टी.आर.पी. बढ़ाने के लिए अपनी पत्नी का इस्तेमाल कर रहा है। आपदा उसके लिए सम्पदा है। सोशल मीडिया भी गर्व और घृणा परोस रहा है। इस आभासी दुनिया में राकेश कुमार जैसे लोग मिसफिट हैं। वे गर्व या घृणा के लिए धर्म को आधार बनाये जाने का विरोध करते थे और उस समूह से रिमूव कर दिए जाते थे। उन्हें इनसान नहीं, एलियन समझा जाता है। सगे संबंधियों से भी तिरस्कृत और बहिष्कृत राकेश कुमार स्वयं को अकेला, अवांछित और असहमत मानने लगते हैं और एक दिन विलुप्त हो जाते हैं। 'जूली और कालू की प्रेमकथा में गोबर' अमानवीयता की पराकाष्ठा है। भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी की पालिता कुतिया के साथ सड़क छाप कुत्ते के संसर्ग की क़ीमत गोबर जैसे सामान्य किसान को लहुलूहान होकर चुकानी पड़ती है। इस कहानी में अमानवीय नृशंसता का प्रतिरोध नहीं है, लेकिन कई कहानियाँ प्रतिवाद भी दर्ज कराती हैं। 'हराम का अण्डा' में श्रेष्ठा काँच का गिलास फेंक कर रूढ़ और सड़े-गले सोच से असहमति जताती है, 'डायरी में नील कुसुम' की शुभ्रा द्वारा कथित अस्पृश्य हरिया के साथ चुम्बन की पहल चौंकाने वाली है। वह नहीं समझ पाती कि यह प्रेम है या प्रतिरोध है, हरिया को हीनता ग्रंथि से उबारने का प्रयास ज़रूर है। इन दोनों कहानियों में प्रतिरोध प्रतीकात्मक है। 'ढोंड़ चले जै हैं काहू के संगे' में प्रतिरोध मुखर है लेकिन व्यक्ति-सीमित होने से कारगर नहीं हुआ है। 'खजुराहो', 'जाल फेंक रे मछेरे', 'ज़ोया देसाई कॉटेज', 'डायरी में नील कुसुम' काम संबंधों की जटिलताओं को खोलती हैं। शीर्षक कहानी मार्मिक प्रेम क्या है। 'खजुराहो' विशेषत: विचारोत्तेजक है। हालाँकि स्त्री मुक्ति के नाम पर देहमुक्ति और उन्मुक्त भोग वाला विज़न बहुत ग्राह्य नहीं है, फिर भी स्त्री की यौनाकांक्षा का एक रूप यह हो सकता है। इसका आपत्तिजनक पहलू यह है कि सुजाता नेहा को भी उस ड्राइवर से यौनसुख लेने यानी 'खजुराहो-विस्फोट' के लिए प्रेरित करती है। डी.एस.दरिया और क्यू.एच. दरिया सुजाता के लिए देह-संबंध मात्र हैं, मानसिक लगाव जैसा कुछ नहीं हैं। इस कहानी पर बहुत मेहनत की गई है मारियाना ट्रेंच और लियो ग्रांडे से परिचित पाठक इसका स्वाद ठीक से ले पाएँगे। सुजाता के मंत्र उजियारी काकी जैसी स्त्रियाँ के काम के नहीं हैं क्योंकि उनकी हँसी के सारे कारण सूख गए हैं या सुखा दिए गए हैं। थर्ड जेंडर बिंदिया की व्यथा-कथा भरे पेट वाली, घर-परिवार गली स्त्रियों से अलग है। उसके जीवन में रक्तसंबंधियों से अलग रहने की विवशता हृदयद्रावक है। राजनीति और समाज में भी किन्नरों की नियति को 'नोटा' के माध्यम से उभारना सार्थक उद्भावना है।

शीर्षक कहानी प्रेमकथा है, यौन-नैतिकता का उल्लंघन इसमें भी है। लेकिन यह पाठक को चौंकाती नहीं है 'खजुराहो' की तरह, यह आर्द्र करती है और पाठकीय संवेदना के निकट पड़ती है। 'प्रेम को समय से नहीं मापा जाता, एहसास से मापा जाता है'- यह सोच स्वाभविक लगता है। प्रेम को लेकर एक ध्यानाकर्षक गंतव्य 'डायरी में नीलकुसुम' में है- 'प्रेम को यदि फैण्टेसी कहा जाए, इस फैण्टेसी के हत्यारे दो ही हैं- ज्ञान और बुद्धि।' एक जीवन्त विचारसूत्र अन्यत्र भी है- 'चुप तो मुर्दे रहते हैं ज़िंदा होने का सबसे बड़ा लक्षण है बोलना' ये मंतव्य कहानीकार के परिपक्व सोच और भाषाधिकार के साक्षी हैं। 'खजुराहो' में सुजाता ने अधूरेपन को अपनी नियति माना है। व्यापक परिदृश्य में संग्रह के अन्य चरित्र-रामस्वरूप, राकेश कुमार, बिंदिया, उजियारी काकी, नूरी भी आधे-अधूरे हैं। इनकी नियति की पंकज सुबीर ने बहुत सलीक़े से कहानियों में बुनावट की है और छल, छद्म, विसंगति को भी अनावृत्त किया है।

000

अपने समय के सवाल

गोविन्द सेन

हर कहानी किसी न किसी स्थान और समय में घटित होती है। सबसे पहले मैंने 'ज़ोया देसी कॉटेज' पढ़ी क्योंकि यह कहानी मेरे नज़दीकी माँडवगढ़ में घटित होती है। यही नाम सुपरिचित कथाकार पंकज सुबीर ने अपने ताज़ा कहानी संग्रह के लिए चुना है।

इनकी कहानियाँ बहुचर्चित रहती हैं। अपनी कहानियों में वे अपने समय के सवालों को पुरज़ोर तरीक़े से उठाते ही नहीं बल्कि उसकी गहरी पड़ताल भी करते हैं। इनमें बाज़ारवाद के कारण विघटित होते मानवीय मूल्यों के प्रति गहरी चिंता है। मशीनीकरण ने आदमी को अवांछित कर दिया है। उसकी उपयोगिता शून्य होती जा रही है। रिश्ते मशीनी होते जा रहे हैं। पितृसत्ता आदिकाल से स्त्री जीवन को रौंदता आई है। वे बार-बार मर्दवादी रवैये को प्रश्नांकित करते हैं। सत्ता के मद में चूर ताक़तवर लोगों ने हरिया और गोबर जैसे ग़रीबों का जीना दूभर कर दिया है। उनके अभिमान ने निर्बल दलितों को कीड़े-मकोड़े की तरह जीने के लिए बाध्य कर दिया है। इनके लिए कोई भी विषय वर्ज्य नहीं है। स्त्री की हर समस्या को वे पूरी तरजीह देते हैं। कहानी के लिए वे विभिन्न युक्तियाँ का प्रयोग करते हैं।

ये कहानियाँ इकहरी नहीं हैं। ये समस्या और पात्रों के जीवन के विस्तार में जाकर उन्हें विभिन्न आयामों में चित्रित करती हैं। मनोविज्ञान का एक मज़बूत धागा भी इन कहानियों में आद्यांत मिलेगा। कहानियों में विविध पात्रों का ख़ज़ाना है। इन कहानियों में हर धर्म के पात्र मिल जाते हैं। इन कहानियों का कैनवास बड़ा है और बड़े सवाल उठाती हैं। ये रोचक-सूक्ष्म विवरणों से कहानियाँ भरी हुई हैं। कथारस से लबरेज हैं। ये आक्टोपस की तरह पाठकों को पकड़ लेती हैं। हर कहानी अपने पूरे लवाजमे के साथ अपने ध्येय की ओर बढ़ती चली जाती है। अपने समय के संकटों की आवाज़ें सुनाई देती हैं।

'स्थगित समय गुफ़ा के वे फलाने आदमी' करोना काल में प्रकट होने वाले मानव रूपी

फरिश्तों की कहानी है। करोना से मृत व्यक्ति को जब परिजन भी छूना पसंद नहीं करते। ऐसे गुफ़ा समय में ये फ़रिश्ते अपनी जान की परवाह किए बगैर उन्हें घर से उठाकर श्मशान में ले जाकर उनका अंतिम संस्कार करते हैं। समाज सेवा का दम भरने वाले लोगों के बरक्स बिना किसी स्वार्थ के ये अपरिचित जन सच्चे अर्थों में अपने मानवीय धर्म को निभाते हैं। कहानी मर्मस्पर्शी है और समाज की तलछट समझने जाने वाले लोगों के अवदान को प्रकट करती है।

यह समय अपनी असहमति दर्ज कराने वाले आदमी को मनोरोगी बना दे रहा है। सोशल मीडिया ने यह काम बख़ूबी किया है। नफ़रत फैलाने वालों का अंध समूह मानवता के पक्ष में खड़े व्यक्ति को बर्दाश्त नहीं कर पाता। उसे अकेला कर दिया देता है। प्रारंभ में कहानी का शीर्षक 'ढोंड़ चले जै हैं काहू के संगे' अजीब लगता है। किन्तु पढ़कर इसकी सार्थकता सिद्ध हो जाती है। कहानी गहरे तक प्रभावित करती है। प्रेम के अनेक आयाम होते हैं। 'डायरी में नीलकुसुम' में डॉ. शुभ्रा की डायरी के जरिए कहानी को रचा गया है। इस कहानी में प्रेम है। लेकिन यह प्रेम प्रतिरोध से उपजा है। यह शुभ्रा की वासंती उम्र का प्रसंग है। वह अछूत हरिया को अपना प्रेम देकर वर्जनाओं के खिलाफ़ प्रतिरोध दर्जकर उसे आश्वस्त करती है। हरिया और उसकी माँ के प्रति होने वाले अन्याय पर अपनी तरह से रोषपूर्ण सहानुभूति दर्ज करवाती है। कहानी दलितों के साथ होने वाले दुराचार और उच्चवर्णीय मानसिकता की संवेदनशील अभिव्यक्ति है। काव्यात्मकता, संकेत, चित्रात्मक भाषा और यथार्थ का चटख संयोजन कहानी को बेजोड़ बनाता है। 'खजुराहो' भी डायरी से निर्मित प्रेम कथा है। इस कहानी में भी स्त्री-पुरुष प्रेम की सूक्ष्म अभिव्यक्ति है।

'जाल फेंक रे मछेरे...' मुस्लिम परिवेश और पात्रों की दिलचस्प कहानी है। इसका अंत प्रेमकथा के एक अप्रत्याशित रूप को उद्घाटित करता है। 'ज़ोया देसाई कॉटेज' भी प्रेमकथा है जिसमें माँडव में घटित होती है। 'जूली और कालू की प्रेमकथा' में कालू नामक कुत्ते और जूली नामक कुतिया की प्रेम कथा के माध्यम से एक शक्तिसंपन्न पदाधिकारी का वीभत्स चेहरा प्रकट किया गया है। प्रकारांतर से यह कहानी सत्ता सम्पन्नों की अमानवीयता और सर्वहारा वर्ग की बेचारगी प्रकट करती है।

'रामसरूप अकेला नहीं जाएगा' कहानी में एक मज़दूर के नौकर बनने और बाद में उसके बाद उसके अवांछित और अनुपयोगी हो जाने का रूपक रचा गया है। यह एक भयावह कथा है गाँव और शहरों में लगातार घट रही है। इसके पीछे बाज़ार की शक्तियाँ और मशीनों का दबाव काम कर रहा है। एआई आज का अत्याधुनिक नया ख़तरा है जो विकास श्रीवास्तव जैसे ऊँचे वेतन पर कॉर्पोरेट में काम करने वाले लोगों को भी अवांछित कर देगा। इस ग़ुबार में उसकी कैब भी खो जाएगी। निश्चित है इस ग़ुबार में रामसरूप अकेला नहीं जाएगा। यह कहानी भविष्य में आने वाले संकट की ओर भी संकेत कर रही है।

'उजियारी काकी हँस रही हैं' पितृसत्ता के तले उजियारी काकी की हँसी कुचल दी गई थी। उजियारी काकी बहुत सुन्दर थी। इस सुन्दरता के कारण उनके दस साल बड़े रूखे स्वभाव के पति गोपाल के मन में असुरक्षा का भाव पैदा हो गया था। वे उजियारी काकी पर शक करने लगे थे। अपनी इसी मनोग्रंथि के चलते उन्होंने एक ग़रीब लड़की से दूसरी शादी कर ली थी। पति के इस कृत्य ने उनकी हँसी छीन ली थी।

'नोटाजान' लोकतंत्र के नपुंसक होने की ओर इशारा करती है। कोई भी उम्मीदवार जब योग्य न हो तो जनता क्या करे ! इस बहाने किन्नरों की करुण कथा है। अमूमन हर धर्म में स्त्री का स्थान पुरुष के पैरों के नीचे ही है। अंतिम कहानी 'हराम का अंडा' भी स्त्रियों दारुण दशा दर्शाती है।

पकंज जी की कहानियों में सादगी का शिल्प है। रोचकता से भरपूर संग्रह की ग्यारह कहानियाँ सामाजिक सरोकारों से जुड़ी हैं।

000

लेखकों से अनुरोध

'शिवना साहित्यिकी' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फ़ाइल अथवा वर्ड की फ़ाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीऍफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें, इस प्रकार की रचनाएँ विचार में नहीं ली जाएँगी। रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना अथवा आपको वापस कर पाना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें। एक अंक में आपकी किसी भी विधा की रचना (समीक्षा के अलावा) यदि प्रकाशित हो चुकी है तो अगली रचना के लिए तीन अंकों की प्रतीक्षा करें। एक बार में अपनी एक ही विधा की रचना भेजें, एक साथ कई विधाओं में अपनी रचनाएँ न भेजें। रचनाएँ भेजने से पूर्व एक बार पत्रिका में प्रकाशित हो रही रचनाओं को अवश्य देखें। रचना भेजने के बाद स्वीकृति हेतु प्रतीक्षा करें, बार-बार ईमेल नहीं करें, चूँकि पत्रिका त्रैमासिक है अत: कई बार किसी रचना को स्वीकृत करने तथा उसे किसी अंक में प्रकाशित करने के बीच कुछ अंतराल हो सकता है।

धन्यवाद

संपादक

shivnasahityiki@gmail.com

केंद्र में पुस्तक

उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श

(आलोचना)

उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श

समीक्षक : डॉ. सुरेश वशिष्ठ, ब्रजेश कानूनगो, डॉ. शील कौशिक

लेखक : दीपक गिरकर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

डॉ. सुरेश वशिष्ठ
एफ.189, न्यू पालम विहार,
सैक्टर-112,
गुरुग्राम-122017
मोबाइल- 9654404416

ब्रजेश कानूनगो
503, गोयल रिजेंसी, चमेली पार्क,
कनाड़िया रोड,
इंदौर - 452018 मप्र
मोबाइल- 9893944294

डॉ. शील कौशिक
मेजर हाउस- 17, हुडा,
सेक्टर- 20, सिरसा- 125056 हरियाणा
मोबाइल- 9416847107

पाठक की प्रेरणास्रोत है- उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श

डॉ. सुरेश वशिष्ठ

पिछले दिनों लघुकथा विमर्श पर दीपक गिरकर द्वारा संपादित 'उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श' पुस्तक प्राप्त हुई। इस पुस्तक में दो खंड हैं। इसके खंड-एक में 26 लघुकथा लेखकों से आलेख प्रस्तुत हुए हैं। खंड-दो में कुछ अच्छी लघुकथाएँ हैं। यह पुस्तक लघुकथा के इतिहास, मानक अथवा उसकी स्थिति को लेकर महत्त्वपूर्ण यह पुस्तक है। अच्छा होता यदि यहाँ विद्वान समीक्षक भी अपने विचार साझा करते। लघुकथा लेखक से अलग लोग, इस विधा पर मापदंड तय करें तो बेहतर है।

ख़ैर ! सर्वप्रथम 'लघुकथा क्या है?' इस पर दृष्टि डालते हैं।

डॉ. चन्द्रेश कुमार छतलानी न्यूनतम शब्दों में रचित एकांगी गुण की कथात्मक विधा को लघुकथा मानते हैं। पुरुषोत्तम दूबे का कहना है- 'जीवन में घटने वाली आशा के विपरीत अथवा समस्यामूलक कोई घटना हमको घेर ले तो कारगर संप्रेषण से ऐसे विषम चक्रव्यूह को तोड़कर विसंगतियों रहित, मूल्य आधारित सलभ मार्ग का आश्रय सहज उपलब्ध कराने वाली विधा लघुकथा है। प्रबोध कुमार गोविल कहते हैं- 'हर कथ्यात्मक कल्पना में कोई न कोई बिन्दु ऐसा अवश्य होता है, जिसके चारों ओर कहने योग्य बात घूमती है। यह केन्द्रीय बिन्दु किसी तथ्य, भाव अथवा स्थिति के रूप में हो सकता है। इस बिन्दु पर आधारित संक्षिप्त रूप में विकसित गद्य रचना ही लघुकथा है।' डॉ. बलराम अग्रवाल सुरुचि सम्पन्न लघु-आकारीय कथा को ही लघुकथा मानते हैं। सुरुचि सम्पन्नता का सम्बंध वे मूल्यों से मानते हैं। उनकी नज़र में लघुकथा सघन अनुभूति की सुगठित प्रस्तुति है। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि लघुकथा उस चिप की तरह है जिसमें पूरी दुनिया और सारे विषय समाए हुए हैं। उस विद्युत उपकरण अथवा स्विच की तरह है, इसके ऑन होते ही वातावरण रोशनी से नहा देता है। कालखंड के विषय में चंद्रेश कुमार छतलानी का कहना है कि एकांगी होना लघुकथा का स्वभाव है। यदि लघुकथा एकांगी नहीं हो पा रही है, तो वह कहानी में तब्दील हो सकती है। और यदि लेखक इस तब्दीली में कोई घटना कर्म से नहीं ले पा रहा है तो वह रचना एक से अधिक कालखंड में विभक्त होकर छोटी कहानी की तरफ मुड़ सकती है और इसमें कोई दोष भी नहीं है। भगीरथ परिहार किसी एक दृश्य या घटना को, एक कथानक या मानसिक द्वंद्व और एक सार्थक वार्तालाप या एक अनुभव की कम से कम शब्दों में कथात्मक अभिव्यक्ति को लघुकथा मानते हैं।

संतोष सुपेकर लघुकथा को लेकर अपना दृष्टिकोण स्पस्ट करते हैं- 'लघुकथा क्षण विशेष की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। इसकी संक्षिप्तता का अन्य अर्थ न लगाया जाए। जैसा कि रमेश बतरा जी ने कहा है कि 'लघुकथा में शब्द सीमित होते हैं लेकिन चिंतन नहीं।' विसंगति और विडंबना इसके केंद्र में रही हैं। सुप्त समाज के लिए इंजेक्शन की सुई है लघुकथा, जिसकी थोड़ी सी दवा विशाल स्तर पर जागृति फैला सकती है। या यूँ कह लीजिए कि बाहर बिखरा पड़ा ढेर सारा सामान, एक छोटे कमरे में आपको इस तरह सजाना है कि कोई सामान बाहर भी न रहे और कमरा भी व्यवस्थित लगे। इस सजाने की प्रक्रिया में लगने वाला श्रम भी लघुकथा सृजन है। यहाँ सामान से आशय विचारों की भीड़ से है और कमरे से आशय लघुकथा की फ्रेम से है। लघुता, कसावट, सांकेतिकता, संप्रेषणीयता और पैनापन लघुकथा की मुख्य विशेषताएँ हैं।'

'उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श' में बलराम अग्रवाल ने लघुकथा के पैमाने की स्पष्टता के लिए कुछेक बिंदु तय किए हैं। कथा-धैर्य, बिंब, प्रतीक और सांकेतिक योजना, उसका विगत, नेपथ्य और लाघव से उसे सँवारने की कवायद, यथार्थ घटना और कथा घटना की अहमियत, कल्पित उड़ान, भाष-परिवेश और शिल्प एवं शब्द प्रयोग, दृश्य योजना और परस्पर संवाद, लेखक विहीनता, संपूर्णता और शीर्षक इत्यादि बिंदुओं द्वारा उसके स्वरूप को निर्धारित किया है। बलराम अग्रवाल ने बहुत अच्छे से लघुकथा की बारीकियों को समझने और आपको उसे समझाने का प्रयास किया है। लघुकथा को लेकर दीपक गिरकर भी अपनी राय देते हैं- लघुकथा

मानव जीवन की सूक्ष्म एवं तीक्ष्ण अभिव्यक्ति है।

लघुकथा कथ्य प्रधान विधा है। लघुकथा में पात्रों की संख्या एक दो तक ही सीमित होती है। लघुकथा के कथानक में घटनाओं के विस्तार का अभाव होता है। लघुकथा के अंत में विस्मयकारी मोड़ लघुकथा को एक नया आयाम प्रदान करता है। जो मानस पटल पर अमित छाप छोड़ जाए, वहीं उत्कृष्ट लघुकथा है। उन्होंने अपने इस आलेख में भगीरथ के विचार भी साझा किए हैं। भगीरथ कहते हैं- 'लघुकथा अक्सर द्वंद्व से आरंभ होकर तेज़गति से चरम की ओर चलती है, तथा चरमोत्कर्ष पर अप्रत्याशित ही समाप्त हो जाती है। लघुकथा का अंत अक्सर चौंकाने वाला तथा हतप्रभ करने वाला होता है। इस तरह का अंत पाठक की जड़ता को तोड़ता है।' दीपक गिरकर का कहना है कि लेखक आस-पास जब भी कुछ असाधारण देखता है और अनुभूत करता है, तब उसका अंतर्मन व्यथित होने लगता है और अभिव्यक्ति के लिए छटपटाने लगता है। अंत: लघुकथा क्षणिक घटनाक्रम को आधार बनाकर बुनी जाती है। लघुकथा लिखने से पहले लेखक के समक्ष युगबोध की स्पष्टता, अनुभवों का विस्तार और गहन अनुभूतियों की समझ होनी आवश्यक है।

लघुकथा की सृजन प्रक्रिया दीर्घकालिक है, इसीलिए यह देर तक और दूर तक जीवित रहती है। लघुकथा में कथ्य के अनुरूप संप्रेषणीयता, भाषा शैली में सांकेतिकता व संक्षिप्तता का गुण होना आवश्यक है। संवाद चुस्त सटीक एवं संक्षिप्त होने चाहिए। लघुकथा की भाषा जनभाषा होनी चाहिए। लघुकथा की भाषा जीवन्त, प्रवाहमयी, सांकेतिक एवं व्यंजनात्मक होनी चाहिए। लघुकथा का जन्म संवेदनाओं की पृष्ठभूमि पर ही होता है।

विद्वान मित्रों की राय जान लेने के बाद लघुकथा को लेकर मेरी जो सोच विकसित हुई, वह सामने रख रहा हूँ। मेरी नज़र में लघुकथा यथार्थ परिवेश में घटित घटनाओं या समस्याओं से संवेदित और आहत हृदय का उद्वेग है। यह उद्वेग राजनैतिक, शोषित, सामाजिक और अभाव में घिरे इंसान का रुदन है। आपसी संबंधों का खुलासा है। यह रुदन जब फूटता है, तब रचनाकार की बुनावट में बुन लिया जाता है। सूझ-बूझ से बुना गया तो रचना अच्छी बुनी जाएगी और पाठक पर प्रभाव छोड़ पाएगी। उसे नींद से उठने के लिए बाध्य करेगी। चुनौतीपूर्ण उस यथार्थ के प्रति पाठक को सोचने पर विवश करेगी।'

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद संपूर्ण विश्व में जो परिस्थितियाँ बनीं और जो परिणाम सामने आकर खड़े हुए, उनसे आहत या मौत को प्राप्त हुआ आदमी अपनी दास्तान कहने को उठ खड़ा हुआ। दुनिया को सच दिखाने के लिए उसकी वह दास्तान ही कथा बनने लगी। वहीं से लघुकथा का भी जन्म हुआ। भारत में इमरजेंसी से कुछ पहले ग़रीबी और परिस्थितियों से घिरे चरित्र, पात्र रूप में उपस्थित होने लगे। साहित्य की सभी विधाओं में ऐसे चरित्र दिखलाई पड़ने लगे। लेखन से गोरिल्ला युद्ध लड़ा जाने लगा। उन्हीं दिनों, नुक्कड़ नाटक का भी आगमन हुआ। छोटे क्लेवर में कहानियाँ भी लिखी जाने लगीं। लघुकथा उसी समय की देन है। ये दोनों विधाएँ गोरिल्ला की तरह अटैक करती हैं और दर्शक या पाठक की बुद्धि को प्रभावित करती हैं। उसे सोचने पर विवश करने लगती हैं।

पुरातन काल से चली आ रही कथा सुनने-सुनाने की हमारी प्रवृति धरोहर थी। कथा के माध्यम से यहाँ ऋषि-मुनि मूल्य परोसते थे। अनैतिक का हश्र दिखाते और पाठक या श्रोता के मन को फेरने के लिए प्रयास करते थे। आज के इस दौर में यह सब साहित्य को करना चाहिए। लघुकथा और नुक्कड़ नाटक उसी प्रयास का एक हिस्सा हैं। यह लेखन सामान्य परिस्थितियों में सम्भव ही नहीं। बिना गाम्भीर्य इसे बुनावट नहीं दी जा सकती। यह अंतस के रेशों से बुना जाता है। लेखन के लिए प्रतिभा सम्पन्न हृदय के महत्त्व को स्वीकार किया जाना चाहिए।

इसमें भी अलग कोई राय नहीं कि लघुकथा, कहानी का ही एक छोटा कथारूप है। कथा, कहानी लिखना कोई कला नहीं है। वह तो स्वत: अंतस से उपजती है। किन्हीं बेचैन पलों में भीतर से उसका सृजन होता है। शब्दों में आबद्ध होने के बाद उसे भावतत्व से सवार देना कला हो सकती है। कथा, कहानी लिखते समय मानों अवचेतन में सुगबुगाहट हुई, रंध्र फड़के और हाथों में पकड़ी क़लम चल पड़ी। मीठा कोई दर्द कहानी के गलियारे में पैदा होने लगता है। आँखें यथार्थ में जिसे देखती रहीं, समझती और हृदयगम करती रहीं, उस तकलीफ़ को बुनती रहीं, वही तो बाहर आता है। उच्छवास के साथ, वही सब फूटने भी लगता है। फिर हम उसे शब्दकार की तरह सँवारने लगते हैं। उसके अंतिम वाक्य को चौकाने वाला, झकझोरने वाला और पूरी कथा के द्वंद्व को खोल देने वाला मोड़ देकर छोड़ देते हैं। अगला काम पाठक का है।

दीपक गिरकर ने खंड-दो में चुनिंदा जिन लघुकथाओं को लिया है, उन्हें पढ़ने से लघुकथा का प्रारूप समझ में आने लगता है। इस पुस्तक में अनेक प्रश्न और जवाब हैं जो निस्संदेह पाठक के लिए प्रेरणास्रोत रहेंगे। दीपक गिरकर का यह कार्य प्रशंसा के योग्य है।

000

ज़रूरी पुस्तक

ब्रजेश कानूनगो

कोई भी व्यक्ति लेखन का गुण लेकर पैदा नहीं होता। बोलने, सोचने, समझने की शक्तियाँ धीरे धीरे विकसित होती जाती हैं, बोलने के साथ अभिव्यक्त करने की देह भाषा की तुलना में लिखकर शब्दों में अभिव्यक्ति का माध्यम अपेक्षाकृत रूप से बहुत लंबे अंतराल के बाद अर्जित होता है। वातावरण और उचित पर्यावरण में व्यक्ति के भीतर लिखने पढ़ने की रुचि अवश्य जागृत होने लगती है। मन में उठे विचारों को वह शब्द देने लगता है। क्या जो कुछ वह अभिव्यक्त करता है सब कुछ साहित्य सृजन होता है? हर लिखा साहित्य की श्रेणी में नहीं आता। यह एक वृहद विषय है।

आज हम हिन्दी साहित्य की बात करें तो तमाम मतांतरों के बीच आज के समय में व्यंग्य के बाद लघुकथा को सबसे नवीनतम

विधा के रूप में मान्यता मिली है। हाल फिलहाल आज के व्यस्त समय में जब साहित्य आम लोगों की प्राथमिक रुचि में नहीं है तब लघुकथा जैसी कम समय लेने वाली रचना पाठकों और रचनाकारों को कुछ अधिक आकर्षित करने लगी है। यह बिल्कुल परीक्षित तथ्य है कि रचना वही हमारे भीतर उतरती है जिसमें संप्रेषण की सफलता के साथ सौंदर्य हो। इसीलिए हरेक विधा का अपना एक सौंदर्य शास्त्र भी विकसित हो जाता है। सौंदर्य शास्त्र के अनुरूप रचना का सृजन उसकी महत्ता और प्रभाव को बढ़ाता है। व्यंग्य विधा और लघुकथा विधा का सौंदर्य शास्त्र अपने विकास के क्रम में है। ऐसे में बहुतेरे प्रयास भी हो रहे हैं। दीपक गिरकर जैसे प्रबुद्ध पाठक, समीक्षक और रचनाकार ने इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए 'उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श' पुस्तक के माध्यम से बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। पुस्तक में लघुकथा को लेकर विभिन्न विद्वानों के छब्बीस आलेख हैं। लघुकथा विधा में सृजनरत नव लेखकों के साथ साथ पुराने लेखकों को भी दिशा देने में इनकी उपयोगिता असंदिग्ध है।

इस पुस्तक के दूसरे खंड में अट्ठाईस श्रेष्ठ लघुकथाओं को भी संकलित किया गया है जिनसे विभिन्न शैलियों में और भिन्न विचारों व विषयों को विधा में अभिव्यक्ति देने की कला को निखारने में सहायता मिलती है, समझ का विकास होता है।

लेखन में रुचि रखने वाले व्यक्ति को ख़ासतौर से जो लघुकथा लिखने की कोशिश करता है, एक बार इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिए। दीपक गिरकर को इस पहल के लिए हार्दिक बधाई। सीहोर के शिवना प्रकाशन ने इसे बहुत बढ़िया प्रकाशित किया है। आकर्षक आवरण चित्रकार संदीप राशिनकर ने तैयार किया है जो विषयवस्तु की गंभीरता को अभिव्यक्त करता है। निश्चित ही उत्कर्ष लघुकथा विमर्श का एक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी पुस्तक के रूप में स्वागत किया जाना चाहिए।

000

उत्कृष्ट लघुकथा लेखन का यज्ञ

डॉ. शील कौशिक

लघुकथा विमर्श पर लगातार पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं। यह लघुकथा विधा के विकास व उन्नयन के लिए अत्यंत सुखद एवं प्रेरक पहलू है। हाल ही में इंदौर के लघुकथाकार, व्यंग्यकार दीपक गिरकर द्वारा संपादित आलेखों की पुस्तक 'उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श' हस्तगत हुई। पुस्तक को दो खंडों में विभाजित किया गया है। खंड एक में 26 समीक्षकों/ आलोचकों के विस्तृत आलेख हैं, जिसमें उनकी गहन दृष्टि के फलस्वरुप उत्कृष्ट लघुकथा लेखन के बहुआयामी तथा बहुमूल्य टिप्स दिए गए हैं तथा दूसरे खंड में उत्कृष्ट लघुकथाओं को उदाहरण स्वरूप रखा गया है, ताकि पाठक इनका एक साथ रसास्वादन कर चिंतन-मनन कर सकें।

किसी भी विधा की जीवंतता बनाए रखने के लिए उस विधा संबंधी विमर्श अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि जिस विधा की आलोचना पद्धति जितनी अधिक समृद्ध होगी, वह विधा उतनी ही ऊँचाइयों को छुएगी। जब तक लघुकथा विमर्श के जल में हिलोरें नहीं उठेंगीं और नई धाराएँ निर्मित न होंगी तो नई फ़सलों को पानी कैसे मिलेगा?

दीपक गिरकर द्वारा आलोचना के इस रचनात्मक यज्ञ में एक साथ 26 लघुकथा विशेषज्ञों, विद्वानों एवं आलोचकों ने कथ्य, भाषा, शिल्प एवं शैली को लेकर सामग्री आहूत की है, जो नवोदित लघुकथाकारों के लिए मंत्र के समान है। इससे नवोदितों को जीवन दृष्टि तो मिलेगी ही, दिशा भी मिलेगी।

वर्तमान में सोशल मीडिया के चलते फेसबुक तथा व्हाट्सएप समूह पर युवा पीढ़ी विशेष रूप से महिलाएँ अधिकाधिक लघुकथा लेखन में अग्रणीय भूमिका निभा रही हैं, जिससे लघुकथा के प्रचार-प्रसार में गुणात्मक वृद्धि हुई है। विश्वास है कि पुस्तक के पठन उपरांत रचनात्मक स्तर पर लघुकथाकार लघुकथा लेखन की बारीकियों को समझ पाएँगे और उत्कृष्ट लघुकथा लेखन की ओर अग्रसर होंगे।

000

नई पुस्तक

(कविता संग्रह)

फूल को याद थे सारे मौसम

लेखक : विजय बहादुर सिंह

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर यह कविता संग्रह हाल में ही सामने आया है। इसमें वरिष्ठ आलोचक, कवि विजय बहादुर सिंह की चयनित कविताएँ संकलित हैं। इस पुस्तक के बारे में वे स्वयं लिखते हैं- बीसवीं सदी के सातवें दशक से लेकर इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक तक लिखी गयीं ये कविताएँ यहाँ एक साथ संकलित हैं। ये मेरे उन नौ संग्रहों से चुनी गयी हैं जिन्हें मेरा कवि जब-तब लिखता रहा है। विदिशा, सीहोर, कोलकाता, भोपाल और इलाहाबाद के मेरे रसिक श्रोताओं का आग्रह रहा कि मैं अपनी कविताओं का एक चयन प्रेमी पाठकों और साहित्यिक सहृदयों के लिए उपलब्ध कराऊँ। इन कविताओं में मेरे अनुभवों के वे सारे रंग मौजूद हैं जो मेरे जीवन की भी पहचान बनते गये हैं। यह तो विदग्ध-जन ही सुनिश्चित करेंगे कि इसमें कितना कवित्व और अकवित्व है।

वरिष्ठ आलोचक राधावल्लभ त्रिपाठी लिखते हैं- विजयबहादुर सिंह की कविताओं का यह प्रतिनिधि संकलन उनकी सुदीर्घ और अनवरत काव्ययात्रा की सार्थकता का प्रत्यय देता है।

000

पुस्तक समीक्षा

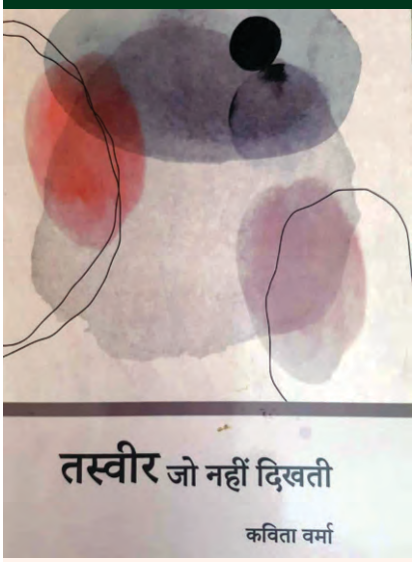

(कहानी संग्रह)

तस्वीर जो नहीं दिखती

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : कविता वर्मा

प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016, मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

कविता वर्मा के सद्य: प्रकाशित कहानी संग्रह 'तस्वीर जो नहीं दिखती' अब तक प्रकाशित उनके कथा साहित्य से कथानक और घटनाओं की दृष्टि के साथ-साथ भावनात्मक धरातल पर कुछ अलग रंग लिए हुए है। लेखिका अपने आसपास के परिवेश से चरित्र खोजती हैं। कहानियों के प्रत्येक पात्र की अपनी चारित्रिक विशेषता है, अपना परिवेश है जिसे लेखिका ने सफलतापूर्वक निरूपित किया है। कविता वर्मा एक ऐसी कथाकार हैं जो मानवीय स्थितियों और सम्बन्धों को यथार्थ की क़लम से उकेरती हैं और वे भावनाओं को गढ़ना जानती हैं। लेखिका के पास गहरी मनोवैज्ञानिक पकड़ है। इनकी कहानियों की कथा-वस्तु कल्पित नहीं है, संग्रह की कहानियाँ सचेत और जीवंत कथाकार की बानगी है और साथ ही मानवीय संवेदना से लबरेज हैं। इस संग्रह में संकलित कहानियाँ महिलाओं तथा समाज के ऐसे लोग जो हमारे साथ रहकर भी हाशिये पर खड़े हैं, में जागरूकता, अपने अधिकारों के प्रति सजगता आदि को रेखांकित कराती हैं और उन्हें सशक्त बनाती हैं।

संग्रह की पहली कहानी 'शीशमहल' में कहानी की नायिका टीना और मयंक की मम्मी के माध्यम से नारी मन की व्यथा, उसकी वेदना, विवशता और लाचारी को स्पष्ट अनुभव किया जा सकता है। इस कहानी में नारी की विवशता पुरुषजन्य परिलक्षित होती है। इस कहानी में लेखिका ने नारी संवेदना को अत्यन्त आत्मीयता एवं कलात्मक ढंग से चित्रित किया है। यह एक संवेदनशील कहानी है। कहानी का मुख्य विषय पारिवारिक संबंधों की जटिलता, विशेषकर पिता-पुत्री के बीच की दूरी और माँ की क़ुर्बानियाँ हैं। यह कहानी समाज के दबावों, अपेक्षाओं और व्यक्तिगत ख़ुशियों के बीच के टकराव को दर्शाती है। टीना की खोज अपने पिता की असली पहचान के लिए उसकी आंतरिक संघर्ष को उजागर करती है। टीना अपने पिता की अनुपस्थिति और उनकी तटस्थता को लेकर अंदर ही अंदर जूझती है। कहानी में टीना के बचपन की यादें, उसके माता-पिता का संबंध, और अंत में उसके अपने परिवार के साथ जूझते हुए विचारों का विवरण मिलता है। टीना का किरदार एक संवेदनशील लड़की के रूप में उभरता है जो अपने पिता की प्रेमहीनता से दुखी है। उसकी माँ एक जटिल व्यक्तित्व की धनी हैं, जो अपनी कठिनाइयों को छुपाते हुए परिवार के लिए सर्वोत्तम चाहती हैं। पिता का चरित्र हमेशा दूरी बनाए रखने वाला है, जो अपने बच्चों के प्रति प्रेम तो करता है, लेकिन इसे व्यक्त नहीं कर पाता। भावनाओं का गहरा स्तर और पात्रों के मनोवैज्ञानिक पहलुओं का चित्रण इस कहानी को और भी प्रभावशाली बनाता है। कथाकार ने टीना के भीतर के द्वंद्व को सुंदरता से प्रस्तुत किया है, जिससे पाठक उससे गहरे भावनात्मक स्तर पर जुड़ता है।

'सूखे पत्तों के शोर में दबी बात' कहानी एक छोटे क़स्बे की सुबह से शुरू होती है, जहाँ प्रिया नाम की लड़की अपने घर आई है। वह आमतौर पर देर से सोती है, लेकिन इस बार जल्दी जाग जाती है और मंदिर जाने का निश्चय करती है। कहानी में प्रिया की सोच और उसके मन के द्वंद्व को ख़ूबसूरती से चित्रित किया गया है, ख़ासकर जब वह अपने प्रेमी मुनीष से मिलने मंदिर जाती है। प्रिया और मुनीष के बीच की बातचीत में प्यार, तनाव और सामाजिक मान्यताओं का प्रभाव साफ महसूस होता है। कहानी में उनकी बातचीत से यह स्पष्ट होता है कि वे अपने रिश्ते को लेकर कितने गंभीर हैं, लेकिन साथ ही समाज की जटिलताओं से भी जूझ रहे हैं। यह कहानी दर्शाती है कि प्रेम केवल भावनाओं का मामला नहीं है, बल्कि यह समाज की सोच और परंपराओं से भी प्रभावित होता है। लेखिका ने पात्रों की मनोस्थिति को अच्छे से उकेरा है, जिससे पाठक उनके साथ जुड़ाव महसूस करता है। कुल मिलाकर, यह एक संवेदनशील और विचारोत्तेजक कहानी है।

'तस्वीर जो नहीं दिखती' एक यथार्थ कहानी लगती है, जो सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी से लेकर विवाह और मातृत्व तक के सफर को बख़ूबी बयाँ करती है। कहानी की नायिका वंशिका अपने सपनों और व्यक्तिगत जीवन के बीच संतुलन बनाने की कोशिश करती है। वंशिका की महत्त्वाकांक्षाएँ और उसकी ज़िम्मेदारियाँ कहानी को और अधिक रोचक बनाती हैं। रुद्र का

चरित्र भी महत्त्वपूर्ण है, लेकिन कभी-कभी वह वंशिका के सपनों के साथ खड़ा नहीं दिखता, जिससे नायिका का आंतरिक द्वंद्व और बढ़ जाता है। कहानी में दी गई परिस्थितियाँ पाठक को यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि क्या एक महिला अपने करियर और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों को संतुलित कर सकती है। वंशिका का संघर्ष न केवल व्यक्तिगत है, बल्कि यह समाज के उन बंधनों को भी दर्शाता है जो महिलाओं पर लगाए जाते हैं। यह कहानी एक प्रेरणादायक संदेश देती है कि अपने सपनों को कभी भी पीछे नहीं छोड़ना चाहिए, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी चुनौतीपूर्ण क्यों न हों।

कहानी 'रास्ता किधर है?' युवा जीवन की जटिलताओं और आकांक्षाओं को बड़े प्रभावी तरीके से उजागर करती है। कहानी का आरंभ एक ट्रेन की यात्रा से होता है, जिसमें कुछ युवा लड़के परीक्षा देने के लिए जा रहे हैं। इन लड़कों की बातचीत, उनके डर और उम्मीदें, और सामूहिक हँसी-ठिठोली कहानी को जीवंत बनाती हैं। कथाकार कविता वर्मा ने युवा पात्रों के मनोविज्ञान को बेहतरीन तरीके से पेश किया है। उनकी बातचीत में घबराहट, हँसी, और विचारों की गहराई दिखाई देती है। कहानी में पात्रों की सामाजिक स्थिति और उन्हें अपने भविष्य की चिंता में उलझा दिखाया गया है, जो पाठकों को अपने अनुभवों से जोड़ती है। कहानी में ईमानदारी और सिस्टम की वास्तविकता पर विचार किया गया है, जो आज की युवा पीढ़ी के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय है।

कहानी 'लाशों को फ़र्क नहीं पड़ता' एक गहन और संवेदनशील विषय पर आधारित है, जो मानव जीवन की नश्वरता और असंवेदनशीलता को उजागर करती है। इसमें कोरोना महामारी के दौरान अस्पताल के एक वार्ड में लाशों को ले जाने वाले युवाओं की बातचीत और उनके दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया गया है। कहानी की शुरुआत में एक युवक की नज़र से होती है, जो कोविड वार्ड में बिस्तर पर पड़ा है। वह देखता है कि कुछ लोग एक लाश की जेबें चेक कर रहे हैं और उससे जुड़े मज़ाक उड़ा रहे हैं। यह असंवेदनशीलता और मृतकों के प्रति उपहास की भावना से उस व्यक्ति के मन में यह सवाल उठता है कि क्या यही उसके साथ भी होगा? वह ख़ुद को मृत व्यक्ति की स्थिति में महसूस करता है, और उसकी संवेदनाएँ गहराती हैं। कहानी में लालू और उसके साथियों की मानसिकता को उजागर किया गया है। लालू, जो अभी अस्पताल में नया है, लाशों की स्थिति को देखकर हिचकिचा रहा है, जबकि उसके साथी इसे एक काम के रूप में देखते हैं। यह मानसिक संघर्ष बहुत वास्तविक है और यह बताता है कि किस प्रकार परिस्थितियाँ लोगों को कठोर बना सकती हैं।

'भ्रम' कहानी मेघना के जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती है, जिसमें उसका संघर्ष, यादें और उसके ससुराल के अनुभव शामिल हैं। लेखिका ने गहराई से मेघना के मन की स्थिति और उसके भावनात्मक द्वंद्व को चित्रित किया है। मेघना की यादें, उसके मायके और ससुराल के अनुभव, उसकी तन्हाई और संघर्ष को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत किया गया है। इससे पाठक उसके प्रति सहानुभूति महसूस करते हैं। कहानी में मेघना की मानसिक स्थिति, उसके संघर्ष और सामाजिक दबावों को बहुत अच्छी तरह से चित्रित किया गया है। यह न केवल एक व्यक्तिगत कहानी है, बल्कि यह समाज में महिलाओं की स्थिति और उनकी परवाह की एक झलक भी देती है। कुल मिलाकर, 'भ्रम' एक सशक्त और सोचने पर मजबूर करने वाली कहानी है, जो पाठकों के दिल में एक गहरी छाप छोड़ती है।

'दो औरतें' एक संवेदनशील और विचारणीय कहानी है जो महिलाओं की रोज़मर्रा की ज़िंदगी के संघर्षों को उजागर करती है। इस कहानी को पढ़ते हुए एक मध्यवर्गीय महिला की मनोदशा का बख़ूबी अहसास होता है। सुनंदा और शकुंतला के पात्रों के माध्यम से यह कहानी न केवल घरेलू जीवन की चुनौतियों को दिखाती है, बल्कि यह भी दिखाती है कि कैसे महिलाएँ एक-दूसरे के अनुभवों से सहानुभूति रखती हैं। यह कहानी पाठकों को सोचने पर मजबूर करती है और समाज में महिलाओं की स्थिति पर विचार करने का अवसर प्रदान करती है। यह कहानी सुनंदा और शकुंतला के बीच की जटिलताओं और उनके अनुभवों को बयाँ करती है। सुनंदा, एक गृहिणी, अपने पति राजेश की लापरवाहियों और घर के कामों के बोझ तले दबी हुई है। लॉकडाउन के दौरान उसके जीवन में आए बदलावों ने उसे और अधिक मानसिक तनाव में डाल दिया है। वहीं, शकुंतला, जो सुनंदा की कामवाली बाई है, अपनी ख़ुद की परेशानियों के साथ संघर्ष कर रही है। दोनों के बीच की बातचीत उनके व्यक्तिगत अनुभवों और संघर्षों को उजागर करती है। काम और परिवार के बीच की उलझनें और भावनात्मक बोझ को सटीकता से दर्शाया गया है। सुनंदा और शकुंतला के बीच का रिश्ता सिर्फ कामकाजी नहीं है; यह एक गहरे संवेदनात्मक स्तर पर भी जुड़ा हुआ है। उनकी बातचीत से यह स्पष्ट होता है कि वे एक-दूसरे की पीड़ा और संघर्ष को समझती हैं।

'प्रायश्चित' कहानी रागिनी के जीवन में एक गहन और संवेदनशील मोड़ को प्रस्तुत करती है। संदीप जी के निधन के बाद रागिनी का जीवन कैसे बदलता है, यह उस धनी और भौतिकवादी दुनिया के ख़िलाफ़ उसकी आंतरिक संघर्ष को दर्शाता है। रागिनी की निराशा और उसके पति की इच्छाओं के बोझ तले दबे रहने की भावनाएँ स्पष्ट रूप से उभरती हैं। संदीप की आकस्मिक मृत्यु के बाद रागिनी के मन में उथल-पुथल मच जाती है। वह उस दौलत से नफ़रत करने लगती है, जो उनके जीवन में कभी ख़ुशी नहीं ला पाई। रागिनी के पिता की ईमानदारी की विरासत को वह अपने दिल में जीवित रखती है और इस दौलत को सही दिशा में इस्तेमाल करने की ठान लेती है। कहानी का एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि रागिनी अपने अतीत से भागने के बजाय, उस संपत्ति का सही उपयोग करने का निर्णय लेती है। उसका यह निर्णय न केवल उसे स्वतंत्रता दिलाता है, बल्कि वह समाज में एक सकारात्मक बदलाव लाने का भी प्रयास

करती है। रागिनी की यात्रा उसके आत्म-खोज और प्रायश्चित का प्रतीक है। वह न केवल अपने पति के कृत्यों का प्रायश्चित करती है, बल्कि ख़ुद को भी एक नई पहचान देती है।

'कुछ न सोचो अम्मा' एक भावनात्मक और गहरे संवेदनाओं से भरी कहानी है, जो परिवार, परंपरा और व्यक्तिगत संघर्षों के विषयों को छूती है। कहानी में केशव, उसकी पत्नी चारु और केशव की अम्मा के रिश्तों का ज़िक्र है। अम्मा का गाँव से शहर में आना और वहाँ के माहौल में ढलना उनके लिए चुनौतीपूर्ण साबित होता है। बाबूजी की मृत्यु के बाद अम्मा में आए बदलाव, उनके अकेलेपन और चारु के साथ उनकी जटिलता को कहानी ने ख़ूबसूरती से चित्रित किया है। अम्मा के मन की हलचल और संघर्ष को अच्छे से दर्शाया गया है। कहानी में पारिवारिक रिश्तों की जटिलताओं और विशेषकर बुज़ुर्गों के प्रति सम्मान और प्रेम की आवश्यकता को बख़ूबी दर्शाया गया है। अम्मा की परंपराएँ और नए माहौल में उनके संघर्ष पाठक को सोचने पर मजबूर करते हैं।

'अंतिम प्रश्न' कहानी एक युवा महिला, मिनी, की है जो अपने मायके अचानक आती है। मिनी की शादी हाल ही में हुई है, लेकिन वह अपने ससुराल की जटिलताओं से परेशान है। कहानी में उसके मन की गहराई, परिवार की अपेक्षाएँ और समाज के दबावों का चित्रण किया गया है। कहानी में मिनी की भावनाएँ अत्यंत गहन और संवेदनशील हैं। वह अपने परिवार के साथ बिताए गए समय में असुरक्षित और घुटन महसूस कर रही है। उसकी आंतरिक चिंता और संघर्ष को ख़ूबसूरती से उकेरा गया है, जो पाठक को उसके साथ जोड़ता है। कहानी में समाज की अपेक्षाओं और पारिवारिक दबावों का महत्त्वपूर्ण चित्रण है। मिनी का संघर्ष यह दर्शाता है कि कैसे एक महिला को अपनी पहचान और स्वतंत्रता के लिए लड़ना पड़ता है। यह कहानी न केवल मिनी के व्यक्तिगत संघर्ष को दिखाती है, बल्कि समाज में महिलाओं की स्थिति पर भी प्रकाश डालती है।

कहानी 'एक राह के राही' बलवंत और उसके क्लीनर छोटू के बीच के संबंध को बुनती है, जिसमें जीवन की चुनौतियों, मानवीय संबंधों और व्यावसायिक प्रतिद्वंद्विता की परतें खुलती हैं। बलवंत एक ट्रक ड्राइवर है जो अपने काम के प्रति समर्पित है, जबकि छोटू एक युवा लड़का है जिसे बलवंत ने अपने साथ काम करने के लिए लिया है। 'एक राह के राही' न केवल जीवन के संघर्षों को दर्शाती है, बल्कि मानवीय संबंधों की गहराई को भी उजागर करती है। कहानी में बलवंत और छोटू के माध्यम से यह दिखाया गया है कि ज़िम्मेदारी और सहयोग की भावना किसी भी रिश्ते को मज़बूत बनाती है।

'टूटे ख़्वाबों की ताबीर' एक गहरी और संवेदनशील कहानी है, जो विभावरी के आत्म-खोज और अतीत के साथ उसके संघर्ष को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती है। विभावरी का संघर्ष और उसकी यात्रा को पढ़ना पाठक को उसकी दुनिया में ले जाता है। विभावरी की जज़्बात और संघर्ष बहुत ही वास्तविक हैं। उसकी ख़ुशी और उदासी का संतुलन पाठक को गहराई तक छूता है। यह एक प्रेरणादायक और सोचने पर मजबूर करने वाली कहानी है, जो अकेलेपन और आत्म-खोज के विषयों को बख़ूबी छूती है।

'पीर पिरावनी' एक गहन और संवेदनशील कथा है, जो किसान देवराम और उसके परिवार की आर्थिक और भावनात्मक संघर्षों को दर्शाती है। कहानी की शुरुआत में माघ पूर्णिमा पर होली का डंडा गड़ने के साथ ही ठंड कम होने लगती है। देवराम, जो एक मेहनती किसान है, अपनी बीमार माँ के इलाज के लिए बाज़ार जाने की आवश्यकता महसूस करता है, लेकिन उसे अपने प्रिय बैल 'केड़ा' को बेचना पड़ सकता है। उसकी पत्नी सुखनी की चिंताओं के बीच, देवराम अपने मन के अंतर्द्वंद्व में फँसा है, क्योंकि उसे अपने जानवर से बहुत लगाव है। कहानी का सबसे गहन हिस्सा तब आता है जब देवराम को मजबूरी में केड़ा बेचने के लिए बाज़ार जाना पड़ता है। उसकी माँ की बीमारी और आर्थिक तंगी ने उसे इस स्थिति में ला दिया है, जिससे उसका दिल टूट जाता है। देवराम के लिए यह निर्णय एक भावनात्मक परिमाण रखता है, क्योंकि केड़ा केवल एक जानवर नहीं है, बल्कि उसकी पारिवारिक धरोहर और भावनाओं का प्रतीक है। 'पीर पिरावनी' एक अद्‌भुत कहानी है जो न केवल किसान के जीवन की कठिनाइयों को दर्शाती है, बल्कि मानवीय संवेदनाओं, प्रेम और त्याग की गहराई को भी उजागर करती है।

लेखिका ने इन कहानियों में भारतीय समाज के यथार्थवादी जीवन, आम आदमी का आत्मसंघर्ष, स्त्री संवेगों और मानवीय संवेदनाओं का अत्यंत बारीकी से और बहुत सुंदर चित्रण किया है। कविता वर्मा का दृष्टि फलक विस्तृत है। इनकी कहानियों में व्याप्त स्वाभाविकता, सजीवता और मार्मिकता पाठकों के मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ने में सक्षम है। इस संकलन की कहानियों में लेखिका की परिपक्वता, उनका सामाजिक सरोकार स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। कविता वर्मा की कहानियों में हर जगह गहन मानवीय पक्षधरता है। कविता जी ने कहानियों में घटनाक्रम से अधिक वहाँ पात्रों के मनोभावों और उनके अंदर चल रहे अंतर्द्वंद्वों को अभिव्यक्त किया है। लेखिका के कहानियों के पात्र अपने ही क़रीबी रिश्तों को परत दर परत बेपर्दा करते हैं। लेखिका जीवन की विसंगतियों और जीवन के कच्चे चिठ्ठों को उद्‌घाटित करने में सफल हुई हैं। संग्रह की सभी कहानियाँ शिल्प और कथानक में बेजोड़ हैं और पाठकों को सोचने को मजबूर करती हैं। कविता जी की कहानियों में कथा पात्रों के मन की गाँठें बहुत ही सहज और स्वाभाविक रूप से खुलती हैं। कहानी का अंत बहुत ही स्वाभाविक रूप से करती हैं, यही उनकी कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है। कविता जी की कहानियाँ जीवन और यथार्थ के हर पक्ष को उद्‌घाटित करने का प्रयास करती हैं। कहानियाँ लिखते समय लेखिका स्वयं उस दुनिया में रच-बस जाती हैं। कविता वर्मा की कहानियाँ एक व्यापक बहस को आमंत्रित करती हैं।

000

पुस्तक समीक्षा

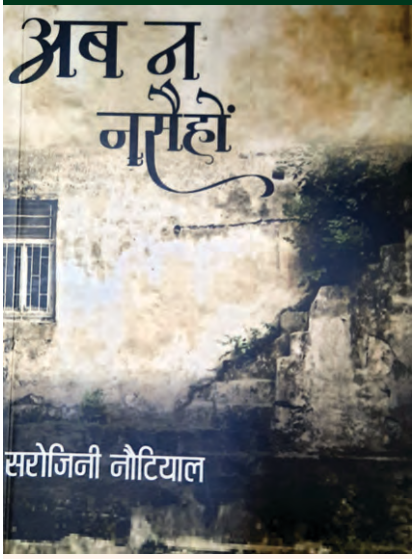

(कहानी संग्रह)

अब न नसैहों

समीक्षक : सुधा जुगरान

लेखक : सरोजिनी नौटियाल

प्रकाशक : पुस्तकनामा प्रकाशन

सुधा जुगरान
दिव्या देवी भवन
16 ई, ई. सी. रोड़
देहरादून-248001, उत्तराखंड

राष्ट्रीय स्तर की साहित्यिक एवं गैरसाहित्यिक पत्रिकाओं में सरोजनी नौटियाल की उपस्थिति निरंतर बनी रहती है। उनका कहानी संग्रह, 'अब न नसैहों' इस बात का सबूत है। पूरे कहानी संग्रह को एक ही बैठक में पढ़ा जा सकता है। सभी कहानियाँ नारी विमर्श को विभिन्न आयामों के माध्यम से चर्चा में लाती हैं। हालाँकि कहानियों का परिवेश पिछली पीढ़ी का है जिसमें कई भाई-बहन होते थे, परिवार का वृहत आकार, जहाँ स्त्री कामकाजी तो थी लेकिन परिवार की आय बढ़ाने के लिए। अपनी स्वत्वाधिकार के लिए नहीं। स्त्री की योग्यता तब तक यह कहने का अधिकार कम ही रखती थी कि उसे नौकरी करना पसंद है या वह चाहती है। यह भाव अगर कहीं था भी तो वह अपने बाल्यकाल में अभी घुटनों ही चल रहा था।

सभी कहानियों की नायिकाएँ कामकाजी हैं। अपने कर्त्तव्य निभाने में व्यस्त हैं। सरोजनी नौटियाल की सभी कहानियों में नारी जीवन पर चिंतन है, वे कहती हैं, 'स्त्री को लेकर हमारे समाज में जो धूप छाँव है, वह मन को आंदोलित करती है। हमारे परिवेश में उसकी अवमानना का बहुत सामान है और उसके लिए मामूली बातों की अनदेखी करने की सीख सभी के पास है। ....यह सत्य है कि आज समय बदल गया है स्त्री ने ज़बरदस्ती के समझौते करने में अपनी असहमति प्रकट की है लेकिन उसके पास बहुत विकल्प नहीं होते हैं फिर विकल्पों का जोखिम भी तो कम नहीं है।'

ये चंद पंक्तियाँ ही काफी है नारी-जीवन पर चिंतन करने के लिए। जबकि स्त्री हर रूप में परिवार व समाज को भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करती है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण कहानी 'बेटियाँ थी उनकी' में मिलता है। जिसमें बेटियाँ माता-पिता की देखभाल बारी-बारी से करती हैं और उनकी मौसी को वृद्धावस्था में यह अफसोस रहता है कि उनकी ख़ुद की कोई बेटी नहीं है। फिर भी बेटियों का जन्म ख़ुशी का परिचायक बिरला ही होता है।

ससुराल की तस्वीर आज सभ्य व संपन्न घरों में भले ही बदल गई है लेकिन अन्याय की तस्वीर भी संग ही बदल गई है। शीर्षक कहानी, 'अब न नसैहों' बहुत आकर्षित करता है। प्रस्तुत कहानी में ससुराल का माहौल भले ही पारंपरिक है लेकिन नायिका का कशमकश पुराना नहीं। वह अपनी कमज़ोरियों को बहाना नहीं बनाने देती और एक सख्त क़दम, एक सख्त निर्णय ले लेती है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने का। मुश्किलों से पलायन नहीं करती लेकिन रास्ता ढूँढ़ लेती है, तलवार चमका देती हैं, 'अब लौ नसानी, अब न नसैहो' अब तक नाश होता रहा, अब और नहीं।

'आउटसाइडर' एक ऐसी कहानी जो विगत को पूरा का पूरा जी लेती है अपने काल, परिवेश, शहर, दिनचर्या, परिवार जो कुछ भी उन दिनों में हो सकता था। सत्य है कि यूँ भी किसी लड़की के लिए नए घर में फिर वह चाहे अच्छा हो या बुरा समय तो लगता है आउटसाइडर से इनसाइडर होने में। 'मेरा घर कहाँ' वाली स्थिति कुछ समय या ज़्यादा समय तक बनी रह सकती है लेकिन कुछ लड़कियों के साथ यह ताउम्र रह जाती है, विशेषकर जब तक पहली पीढ़ी की उपस्थिति परिवार में रहती है। बहुत कुछ स्पष्ट और काफी कुछ अव्यक्त सा, कह जाती है कहानी, 'आउटसाइडर'।

औलाद की तरफ से बेपरवाह माँ और रईसों की बिगड़ी औलादों पर लिखी एक बेहद संवेदनशील रचना 'चलना ही नहीं ठहरना भी है' उच्च मध्यम वर्गीय संपन्न घरों की एक हाउस वाइफ़, विशेष कर जिन घरों में पति के लिए पत्नी मात्र जीवन जीने का एक सुख-साधन भर होती है अन्य साधनों की तरह, पर ज़बरदस्त कटाक्ष करती है कहानी 'डिसक्लेमर'। 'सुरेखा साइन करती थी, अँगूठा नहीं लगाती। लेकिन किताब के नाम पर उसके पास सिर्फ पासबुकें हैं' सुरेखा के घर पर किताबें तब आती हैं जब उसके बेटे का एडमीशन नर्सरी में होता है। वह बी.एससी. है। लेकिन हस्ताक्षर करने के लिए पेज मोड़ कर व खुला पैन हाथ में पकड़ाया जाता है। घरेलू कार्यों में वह इतनी उलझी रहती है कि उसका बस चले तो अँगूठा ही लगा दे। 'अक्सर उसके हाथ गीले होते हैं या आटे से सने'।

'सुरेखा उनका सामाजिक मुखौटा तो है ही, उपनिवेश भी है। उसकी देह से लेकर उसकी पूरी शख्सियत पर उनका क़ब्ज़ा है' जैसे वाक्य वास्तव में स्त्री की स्थिति को बयाँ करते हैं जहाँ वह सोने के आरामदेह पिंजरे में कैद है। वह दूसरे की तो छोड़ अपनी भी नहीं है। झिंझोड़ने वाली कहानी है।

एक बेहद संवेदनशील रचना 'बदलते आसमान'। यह कहानी दो विरोधी भावों को पाठकों के दिलो-दिमाग़ में उपजाएगी। स्त्री योग्य है, सक्षम है, और वह हर वह काम कर सकती है जो पुरुष करते हैं। स्त्री ने यह समझा और घर की देहरी लाँघ दी। हर क्षेत्र में उसने परचम लहरा कर जता दिया कि उसे सही मौके मिलें तो वह पुरुष से इंच भर भी कम नहीं है। उसने विस्तृत आकाश से मुट्ठी भर आसमान पूरा का पूरा अपनी बाहों में समेट लिया पूरी तन्मयता से, पूरे आत्मविश्वास से। लेकिन कुछ कार्य ऐसे थे और हैं कि जिसमें उसकी भागीदारी पुरुष से अलग, पुरुष से ज़्यादा थी। पत्नी, के रूप में स्त्री बदल गई और उसने पति को बदलने के लिए मजबूर कर दिया, लेकिन एक माँ का रूप पूरे परिवार समाज व पुरुष पर भारी पड़ गया। इस पड़ाव पर आकर स्त्री कभी झुकी, कभी आत्मसमर्पण किया तो कभी पलायन कर लिया। अधिकतर अपना आसमान बदलने को प्रतिबद्ध हो गई। यही है एक माँ की कहानी।

संयुक्त परिवारों में जहाँ पिता के अकस्मात गुज़र जाने या आर्थिक रूप से संपन्न न होने की स्थिति में बड़ा भाई या बहन, छोटे भाई-बहनों के लिए 'वटवृक्ष' बन जाया करते थे। यह वटवृक्ष ख़ुद को संघर्षों की धूप में तपा कर, परिवार को हर सुख-दुख से बचाते और भाई बहनों को उनकी मंज़िल तक पहुँचाते और ख़ुद ज़िंदगी में एक बार नहीं कई बार मरते। बेहद संवेदनशील रचना।

बेटी- बेटा में अपने ही माता-पिता द्वारा भेद करना पिछली पीढ़ी तक एक अकाट्य सत्य था। गाँव व क़स्बों में यह भाव आज भी मिल जाएगा। बेटों के लिए ख़्वाब व सोच हमेशा ऊँची होती थी और बेटियाँ तो अधिकतर सोच में होती ही नहीं थी। उसके लिए जो 'फौंगी' (टहनी) मुँह तक ख़ुद आ जाए, वही उसका भविष्य तय हो जाता था। वर्तमान समय की युवतियों ने यह सामाजिक व पारिवारिक मिथक तोड़ा है और अपने प्रति सभी को सोच बदलने के लिए मजबूर कर दिया है।

अक्सर बड़े-बुज़ुर्ग युवाओं को नसीहत देते रहते हैं। पहले भी देते थे। उनका सामयिक व तकनीकी ज्ञान चाहे जो भी हो लेकिन जीवन के अनुभवों की परतों में दबा, उनका इंसान को पहचाने के उनके हुनर को चुनौती नहीं दी जा सकती। लेकिन हर युवा पीढ़ी के लिए पिछली पीढ़ी बेवक़ूफ़ है उन्हें ज़माने की क्या समझ। माँ- बेटी के बीच विचारों के इस संघर्ष के साथ, दिल्ली पढ़ाई करने गई गर्ल्स हॉस्टल में रह रही लड़कियों की मानसिकता का भी सजीव चित्रण करती है कहानी, 'तभी तो कह रही हूँ'। वर्तमान समय में कुछ दृश्य बहुत स्वाभाविक हो गए हैं। पति-पत्नी दोनों योग्य, सम्मानजनक नौकरियों पर, अलग-अलग स्थानों पर रहते हुए। बस इनमें बुज़ुर्ग व बच्चे कुछ कम दिखाई देने लगे हैं। लेकिन पिछली पीढ़ी तक कामकाजी स्त्रियों के साथ बच्चे की दादी-नानी होना एक अकाट्य सत्य था। ऐसी ही एक कामकाजी पत्नी की मनोदशा व दिशा का वर्णन कहानी 'उजास' अत्यंत मार्मिक तरीके से करती है।

संग्रह की अंतिम कहानी, 'व्यामोह' बहुत कुछ सोचने को मजबूर करती है। कई घरों में घर की नौकरीशुदा लड़की या लड़के को महत्त्वपूर्ण मानते हुए अपने स्वार्थ के लिए उसका दोहन करते रहते हैं। बेटा या बेटी भी सब कुछ महसूस करता है लेकिन उस मोह से बाहर नहीं निकल पाते है। जब तक यथार्थ का ज्ञान होता है तब तक उम्र निकल जाती है।

सरोजनी नौटियाल जी की भाषा शैली में मुग्ध करने वाला ठहराव है जिससे पाठक कथानक के मूल तत्व से मज़बूती से जुड़ जाता है। कहानियों का परिवेश आने वाले समय में नारी की तत्कालीन सामाजिक स्थिति का दस्तावेज़ बन कर उभरेगा, और इन कहानियों में यह क्षमता भी है।

000

नई पुस्तक

(आलोचना)

सुधा ओम ढींगरा का साहित्य- महत्त्व एवं मूल्यांकन

लेखक : प्रो. नवीन चन्द्र लोहनी, डॉ. योगेन्द्र सिंह

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कथाकार, उपन्यासकार सुधा ओम ढींगरा के साहित्य पर केंद्रित यह आलोचना पुस्तक शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आई है। इस पुस्तक के लेखक आलोचक द्वय- प्रो. नवीन चन्द्र लोहनी तथा डॉ. योगेन्द्र सिंह हैं। लेखक द्वय इस पुस्तक के बारे में लिखते हैं- प्रवासी हिंदी साहित्य पर शोध करने की अवधि में सुधा ओम ढींगरा के साहित्य से परिचय हुआ। तब से शुरू हुआ यह सिलसिला इस पुस्तक के रूप में है। इस कार्य को करते हुए सुधा ओम ढींगरा के साहित्य पर समय-समय पर जो लेख लिखे थे, वह सभी इस कृति में सम्मिलित हैं। इन शोध लेखों के माध्यम से सुधा ओम ढींगरा की रचना यात्रा के विविध पड़ावों के साथ-साथ उनकी सृजन दृष्टि के वैशिष्ट्य को भी समझने का प्रयास किया गया हैं। यह पुस्तक सुधा ओम ढींगरा के सृजन के अंतर्लोक और वैचारिक मनोभूमि पर सूक्ष्म दृष्टिपात करने में कितनी सफल होती है; इसका निर्धारण आप पाठकों को करना है।

000

पुस्तक समीक्षा

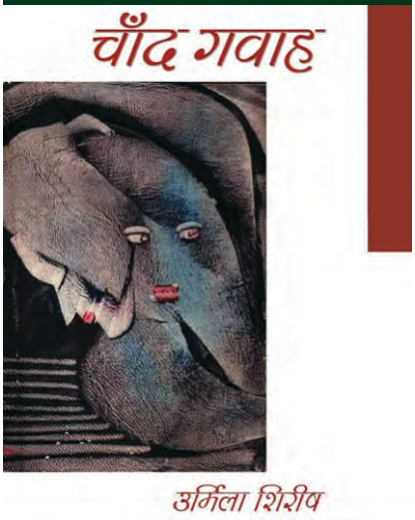

(उपन्यास)

चाँद गवाह

समीक्षक : सुषमा मुनीन्द्र

लेखक : उर्मिला शिरीष

प्रकाशक : सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

सुषमा मुनीन्द्र
द्वारा श्री एम. के. मिश्र एडवोकेट
जीवन विहार अपार्टमेन्ट्स
द्वितीय तल, फ्लैट नं. 7
महेश्वरी स्वीट्स के पीछे
रीवा रोड, सतना (म.प्र.) -485001
मोबाइल- 8269895950

एक दर्जन से अधिक कहानी संग्रहों की रचनाकार उर्मिला शिरीष स्थापित कथाकार हैं। वे कहानियों में सार्वभौमिक विषयों के कारण और कारक इस तरह उचित और उपयुक्त तरीक़े से रेखांकित करती हैं कि कथ्य का कोई कोण, आयाम, अभिमत, बिंदु ड्रॉप नहीं होता है। आँकड़े, प्रसंग, भाव-अनुभाव यूँ निर्बाध क्रम बनाते चलते हैं कि कुछ भी अवांतर प्रसंग की तरह नहीं लगता। कहानियाँ ऐसा सम्मोहन बनाती हैं कि पृष्ठों पर ख़त्म होने के बाद मानस में चलने लगती हैं। उर्मिला शिरीष की कहानियों के स्त्री पात्र बदलते दौर की स्थिति – परिस्थिति – मन:स्थिति के अनुसार संघर्ष करते, निष्कर्ष निकालते, नतीजे पर पहुँचते हुये उत्थान की राह पकड़ते हैं। लेखिका की लम्बी कहानियों को पढ़ते हुये मुझे बार-बार लगा है इनमें उपन्यास की गुंजाइश है। इधर मुझे इनके दो उपन्यास (1) चाँद गवाह (2) ख़ैरियत है हुज़ूर एक साथ पढ़ने का अवसर मिला। पढ़ते हुये लगा मैं जिस गुंजाइश की सम्भावना देख रही थी वह दोनों उपन्यासों में अच्छे दर्शन, मनोविज्ञान, राग-विराग के साथ मौजूद है। दोनों उपन्यासों की पृष्ठभूमि, परिवेश, पर्यावरण भिन्न है लेकिन पठनीयता एक समान है।

वैसे तो उपन्यास केन्द्रीय पात्र दिशा के चौगिर्द घूमता है लेकिन अनायास तीन पीढ़ियों में आए परिवर्तन को भी उद्घाटित कर देता है। आम धारणा में आज भी धार्मिक मान्यताओं, सामाजिक कुरीतियों का पालन करने वाली, पति और परिवार के साथ सामन्जस्य बैठाने वाली स्त्री अच्छी मानी जाती है। दिशा की माँ, ताई ऐसी ही स्त्रियाँ हैं। इनका प्रथम दायित्व कुल की लाज बचाना है। लाज बची रहे इसलिये ये नहीं सोचतीं पति से प्रेम, आदर, समानता मिल रही है या नहीं। घर में जगह मिली है इनके लिये बहुत है। दिशा अपनी माँ की अगली पीढ़ी का प्रतिनिधायन कर रही है। पीढ़ी बदली है पर पितृसत्तात्मक समाज का व्यवहार नहीं बदला इसलिये वही पत्नी भली मानी जा रही है जो विचारशून्य हो और प्रतिप्रश्न न करे। दिशा ज़हीन है, रचनात्मक है, परिवार- समाज की ज़रूरतों को समझती है दायित्व उसे हमेशा याद रहते हैं लेकिन अपनी रुचि और इच्छा को होम नहीं करना चाहती। ख़ुद को उस्ताद समझने वाले, मदिरा प्रेमी, आलसी, कैटरेक्ट से लगभग अंधे बेमेल पति राजीव के साथ सामंजस्य बनाते हुये दिशा उस उम्र में आ पहुँची है जब उसकी बेटियाँ निधि और पारुल विवाह योग्य हो चुकी हैं। दिशा फार्म हाउस में संदीप के साथ रहने लगती है लेकिन राजीव को नहीं छोड़ती। संदीप और राजीव के बीच दोलन कर रही दिशा अपनी माँ और पुत्रियों के बीच की पीढ़ी है। इस पीढ़ी ने बहुत असमंजस देखा है। वह परिवार को केन्द्र में रख कर सोचती है पर उसमें इतनी दृढ़ता आ चुकी है कि अपनी ऊर्जा-ऊष्मा को व्यर्थ नहीं करती। दाम्पत्य को बचाने का ज़िम्मा स्त्रियाँ सदियों से उठाती आई हैं। दिशा कहती है 'शादी कोई गुड्डे-गुड़िया का खेल नहीं है। अब नहीं छोड़ (राजीव को) सकते। बाकी बहनों की शादी होनी है। ऐसे घर में कौन शादी करेगा जहाँ तलाकशुदा बहन बैठी हो।' दिशा का बड़ा भाई कहता है राजीव को तलाक़ दे दिशा संदीप से विवाह करे। वह नहीं करती कि रिश्तों को नहीं अपना जीवन बदलना चाहती है जहाँ अपनी रुचि का कुछ कर सके। पारुल कहती है शुरुआत में दिशा राजीव से अलग हो जाती, पुलिस में शिकायत (राजीव के दुर्व्यवहार की) करती तो राजीव सुधर जाता लेकिन दिशा राजीव को असहाय नहीं छोड़ती साथ ही संदीप के साथ रहने को छिपाती भी नहीं 'जो अपनी सच्चाई बता दे वह अनैतिक, चरित्रहीन, जो न बताये वह नैतिक, चरित्रवान। बड़ा झमेला पाल रखा है हमारे समाज ने।' पारुल उपन्यास की तीसरी पीढ़ी है। इस पीढ़ी में संबंधों का रूप और परिभाषा खुल कर बदल रही है। पारुल कई पुरुषों को छोड़ती और अपनाती है। परिवार, समाज का लिहाज नहीं अपनी सहूलियत चाहती है। तीन पीढ़ियों का यह बदलाव समाज की असंतुलित चेतना का परिणाम है। रिश्तों में आदान-प्रदान का भाव न हो तो संतुलन बिगड़ता है। कालांतर से माना जा रहा है शिव (पुरुष) और शक्ति (स्त्री) मिलकर सुंदर मानव समाज की रचना करते हैं लेकिन पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को सर्वश्रेष्ठ दिमाग़ मानने में आज भी संकोच बरता जाता है। कुल की प्रतिष्ठा बनी रहे इसलिये स्त्री को सुगृहणी, संस्कारी बहू, ममतामयी माँ होना चाहिए। विकट

बात है कुल की प्रतिष्ठा स्त्री से बनती है फिर भी उसकी रुचि, पसंद, आदत, आज़ादी को महत्त्व नहीं दिया जाता। स्त्री चिकित्सक, अधिकारी, शिक्षिका, चित्रकार बाद में है पहले स्त्री है। विवाह को ऐसा अभीष्ठ बना दिया गया है कि स्त्रियों ने इसे बनाये और बचाये रखने में कई पीढ़ियाँ लगी दीं लेकिन अब उनके सामने मोह भंग की स्थिति है जो सहजीवन जैसी वैकल्पिक व्यवस्था का सूत्रपात करने लगी है।

लेखिका ने दिशा के चरित्र को कुशलता से विकसित किया है। वह परिवार को महत्त्व देती है पर व्यक्ति की स्वतंत्रता को आवश्यक मानती है। चाहती है समय के बदलाव के साथ रिश्तों को व्यवहारिक तरीक़े से परिभाषित किया जाए। लड़ना उसका स्वभाव नहीं है। हवा के रुख़ को अपनी ओर मोड़ने का हठ नहीं है लेकिन ऐसा जीवन चाहती है जिसमें आशंका या उद्वेग नहीं शांति और स्थिरता हो। व्यवहार में भीतरघात नहीं सहकार हो कि अपने लिये स्पेस बनाया जा सके। दिशा कवि, कलाकार, चिंतक, विचारक... विलक्षण व्यक्तित्व है जिसे गृहस्थी का बोझ और राजीव का तिरस्कार ख़त्म कर रहा है। वह अपनी कविताओं को फेस बुक में डालती है। सराहना मिलती है। दो बच्चों के पिता संदीप से फेस बुक पर मित्रता होती है। दोनों के विचारों में समानता है। दोनों प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण के लिये कुछ करना चाहते हैं। संदीप, दिशा के फार्म हाउस में उसके साथ रहने लगता है। आज भी पुरुष और स्त्री की मैत्री को मित्रता कम दुराचार अधिक माना जाता है। स्त्री को रखैल समझा जाता है। विचारकों ने स्त्री के प्रेम को वस्तुत: मीरा और राधा के मध्य समेट रखा है। स्त्री या तो तपस्विनी मानी जाती है या चंचला। दिशा अपने निर्णय पर दृढ़ है। वह योगिनी या भोग्या नहीं ऐसी स्वामिनी सा महसूस करती है जिसके जीवन के अधूरेपन को पूर्णता मिल रही है। संदीप फार्म हाउस में बने मंदिर में सिंदूर लगा उसे पत्नी स्वीकार करता है लेकिन उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई चेष्टा नहीं करता। यह ऐसा संबंध है जहाँ वे मन के मीत नहीं एक विचार हैं। संदीप, दिशा को आशा और ऊर्जा से भरता है। दिशा के स्वभाव में स्फूर्ति, रहन-सहन में परिष्कार आता है लेकिन उसकी मानसिक स्थिति को ससुराल और मायके वाले नहीं समझ रहे हैं। दोनों पक्ष जानते हैं दिशा ने तानाशाही व्यवहार वाले राजीव के साथ तालमेल बनाने में बरस बिताये हैं फिर भी उसकी मदद न कर उस पर आक्षेप लगाते हैं। आक्षेप संदीप पर भी लगते हैं कि करोड़ों के फार्म हाउस को हड़पना चाहता है। पारुल क्रोध और घृणा से उसे ढोंगी, लालची, स्वार्थी कहती है जबकि ख़ुद सलीक़ा खोकर निरंकुश तरीक़े में है। फार्म हाउस से अपने घर लौट रहे संदीप से राजीव यहाँ तक कह देता है 'आप जा रहे हैं तो दु:ख तो (दिशा को) होगी ही। असल खसम तो आप ही हो।' सुनकर संदीप संतुलन नहीं खोता। जानता है उसके और दिशा के विज़न और मिशन को साधारण लोग नहीं समझ पाएँगे। दोनों ने बिना विद्युत व्यवस्था वाले सुनसान वन में बने फार्म हाउस की बंजर मिट्टी को मेहनत से ऊर्वर बना कर वृक्षारोपण किया है। गायों का बाड़ा बनाया है। 'पर्यावरण संरक्षण के लिये, नदी बचाने के लिये हर तीन किलोमीटर पर तालाब बनाने के लिये हम सबको मिलकर काम करना होगा।' जैसे संकल्प पर चल कर पर्यावरण और पृथ्वी को बचाने के उपाय किये हैं। जब फार्म हाउस में फ़सल और फल आने लगे हैं संदीप अपने घर लौटते हुये साबित करता है उसका फार्म हाउस हड़पने का इरादा नहीं है बल्कि उसका उद्देश्य पर्यावरण, प्रकृति के साथ मानवता को भी बचाने का है। संदीप भौतिक रूप से फार्म हाउस से चला गया है पर विचार के रूप में दिशा के पास हमेशा है। वह पेड़, प्रकृति पर्यावरण का संरक्षण करती है साथ ही परिवार से ठुकराई या अपनी इच्छानुसार जीवन न जी पाने वाली एकाकी स्त्रियों को एकजुट कर पॉट्स, कलाकृतियों का काम शुरू करते हुये उनके जीवन को व्यवस्थित करती है।

दिशा का चरित्र अद्भुत है। वह किसी एक (राजीव) को सहूलियत देते हुये अपने इरादे और संकल्प को स्थगित नहीं करना चाहती पर दायित्व बोध उसे हमेशा याद रहे। उसे ससुराल-मायके दोनों पक्षों से प्रताड़ना मिली पर उसके मन में कोई ताप-पाप नहीं है। फार्म हाउस में उसके भाई-बहन, राजीव, पारुल, निधि आवाजाही करते हैं और वह सबके साथ सहज रहते हुये व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर होती जाती है। सामाजिक कार्यों के लिये किये जाने वाले आंदोलनों में संदीप की तरह हिस्सा लेने लगती है।

उपन्यास अपने समय से बहुत आगे की बात करता है। बताता है स्त्रियों को उनके हिस्से का स्पेस नहीं मिलेगा तो कुल की कीर्ति नहीं बचेगी। विवाह जैसी संस्था का महत्त्व ख़त्म हो जाएगा। दिशा के भीतर रचनात्मकता और जिज्ञासा शैशव काल से थी। सहयोगी माहौल मिलता तो सफल चित्रकार, शिल्पकार बन कर जीवन को उत्कर्ष पर ले जाती पर वहशी, विचित्र, परम्पराभंजक कह कर उसकी प्रतिभा का परिहास किया गया। उपन्यास बताता है स्त्री को परिवार और समाज में समाजमूलक स्थान मिले तो वह व्यवस्था विरोध की ओर न जाकर अपना प्रयोजन परिवार में रहकर पा सकती है। भारतीय समाज में सहजीवन जैसी संकल्पना को पूरे समर्थन के साथ स्वीकार नहीं किया जा रहा है इसलिये दिशा और संदीप के संबंध को समझना कुछ जटिल है लेकिन चाँद गवाह (यह शीर्षक आकर्षक और उपयुक्त है) है ये दोनों बाह्य आकर्षण के कारण नहीं विज़न और मिशन के कारण एकजुट हुये हैं। आडम्बर न रच, नज़रिये को उन्नत बना प्रकृति और मानवता को बचाने में सफल हुये हैं। कथा में भिन्न आचरण, व्यवहार, चरित्र, सोच वाले जो पात्र हैं अपने-अपने तर्क से अपना पक्ष रखने में सफल हैं। संवाद, दृश्य, भाषिक प्रवाह उपन्यास को मज़बूती देते हैं।

उपन्यास का आकार बड़ा न करते हुये उर्मिला शिरीष ने भविष्य की दो बड़ी बातें सरलता से कह दी हैं। एक- स्त्री अपने हक़ के लिये सधाव के साथ खड़ी होना सीखने लगी है। दो- वृक्षों को न बचाया गया तो आने वाला समय हरीतिमा को तरसेगा।

000

पुस्तक समीक्षा

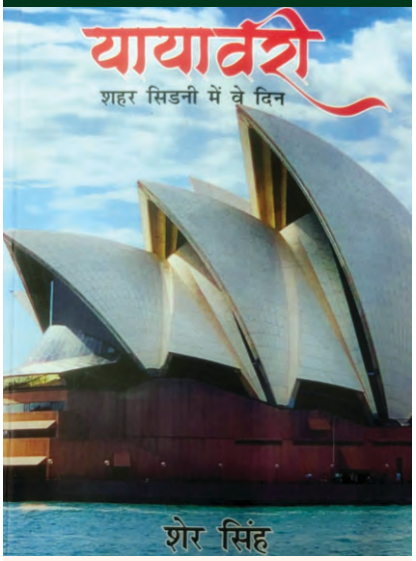

(यात्रा वृत्तांत)

यायावरी

समीक्षक : शैलेन्द्र शरण

लेखक : शेर सिंह

प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन

शैलेन्द्र शरण
79, रेलवे कॉलोनी, आनंद नगर
मप्र 450001
मोबाइल- 8989423676
ईमेल- ss180258@gmail.com

निबंध के अनेक प्रकार हैं। इन्हीं में से एक है 'संस्मरण'। साहित्यिक निबंधों की एक प्रवृत्ति 'यात्रा संस्मरण' भी है। 'यायावरी' शीर्षक से हाल ही में यात्रा वृतांत की एक किताब न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन से आई है जिसके लेखक हैं कुल्लू (हिमाचल प्रदेश) निवासी शेर सिंह। वैसे तो मूलत: ये कथाकार हैं किन्तु यदा अधिकांशत: लेख भी लिखा करते हैं। स्वभाव से प्रकृति प्रेमी शेर सिंह के अनेकों लेख रविवारीय अख़बारों तथा पत्रिकाओं में पढ़ चुका हूँ। इस पुस्तक के पूर्व भी इनका एक यात्रा वृतांत 'याँरा से वॉलोगोन्ग' शीर्षक से आ चुकी है जिसे उचित प्रतिसाद प्राप्त हुआ। कविता के अतिरिक्त 'चार' कहानी संग्रह इनके नाम हैं, कुल मिलाकर हिमाचल के निवासी होने के बावजूद हिन्दी साहित्य में शेर सिंह एक जाना पहचाना नाम है।

'यायावरी – शहर सिडनी में वे दिन' शीर्षक किताब में कुल 23 वृत्तांत हैं। सभी के सभी लेख विशिष्ट आलेख हैं, ये आलेख मात्र वृतांत नहीं है, इनमें गहन वैचारिकता है, प्रकृति को देखने का अलग अंदाज़ है और प्रस्तुति की ललित और मोहक शैली है। शहर मात्र इमारतों और सभ्यता के परिचायक नहीं होते। एक स्थान पर वे लिखते हैं कि 'यहाँ मनुष्यता के प्रत्येक भाव, प्रत्येक लक्षण दिखाई देते हैं, फिर चाहे भावनात्मक या मानसिक क्यों न हों, सब मौजूद हैं। मानसिक और धार्मिक सुकून देने वाले स्थान यथा मंदिर, मस्ज़िद, गुरुद्वारा, चर्च आस-पास ही हैं।' शेर सिंह सिडनी शहर को मात्र सैर-सपाटे के लिए ऊपरी नज़र से नहीं देखते। वे शहर में जीवन खोजते हैं, संस्कृति का आकलन करते हैं, सिडनी में रह रहे विदेशी नागरिकों को क़रीब से देखते हैं। विभिन्न धर्मों के आस्थालयों की एक दूसरे से नज़दीकी उन्हें विस्मित और विचलित तो करती है किन्तु उनमें वे एक मनुष्यता की अमूल्य निधि दिखाई देती है, सांस्कृतिक सौहाद्रता को अपने मन में गहरे समेट कर वे इस सौहाद्रता के वशीभूत होकर संवेदना से भर उठते हैं। सिडनी उन्हें अनूठा और अनोखा दिखाई पड़ता है। वे उस भारत को कुछ समय के लिए भूल जाना चाहते हैं जहाँ सौहार्द्र यदा-कदा छोटी सी बात पर बिगड़ जाया करता है।

हिमाचल के कुल्लू का प्राकृतिक सौंदर्य उनके मन-मस्तिष्क में हमेशा बना रहता है। रहना भी चाहिए। किन्तु एक लेखक-मन सिडनी के सौन्दर्य से भी उतना ही अभिभूत हो उठता है जितना अपने शहर में रहकर वह सुबह-दोपहर-शाम होते आया है। ज़ाहिर है कोई भी लेखक अपने शहर के मौसम से आस्ट्रेलिया के शहर सिडनी को देखेगा भी और तुलना भी करेगा। लिखते हैं 'सिडनी शहर जितना सुंदर, उतना महँगा भी है। किन्तु बेहद सुकून भरा, जीवन जीने के लिए विश्व के तमाम देशों के लोगों के बीच यह एक सर्वथा पसंदीदा शहर है। चिकनी-चौड़ी साफ सड़कें, न कहीं धूल, न मिट्टी और न ही गड्ढे। कूड़े-करकट का नामो-निशान नहीं। आवारा जानवर, कुत्ते-बिल्ली ढूँढ़ने पर भी दिखाई नहीं देते। हरी-भरी खुले स्थान पर बेख़ौफ़ विचरते कंगारुओं के झुंड अक्सर दिखाई दे जाते हैं। सड़कों के किनारे कारें और अन्य वाहन ज़रूर करीने से खड़े दिखाई देते हैं किन्तु सड़कें पूरी तरह सुनसान और गलियाँ बहुधा वीरान सी मिलती हैं।' शेर सिंह जी का लेखक प्रश्न से भर उठता है। वे खोजते हैं कि जिस शहर में कई देशों, कई सभ्यताओं और कई भाषा बोलने वाले विश्व के प्रत्येक दिशाओं से आए लोग रहते हों और आस-पड़ौस में ही रहते हों तो पड़ौसी होने पर भी क्या आत्मीयता का आभाव हो जाता है ? या फिर कुछ और कारण हैं ? इस प्रश्न का समाधान वे अपने कई यात्रा वृत्तांतों में तलाशते नज़र आते हैं। फिर भी उन्हें लगता है मनुष्य का अत्यधिक आधुनिक या सभ्य हो जाना भी बहुत कुछ छीन लेता है। उनका मन इस छद्म आधुनिकता, पड़ौस में रहकर भी आत्मीयता के हो रहे ह्रास

से कई बार मलिन हो उठता है, ऐसे में अपने देश, अपने शहर और अपने पड़ौस की याद आना स्वाभाविक ही है। यह किताब के कई आलेखों में दिखाई देता है।

शेर सिंह इस बात से ज़रूर विस्मित होते हैं कि सिडनी के अस्पताल हिन्दुस्तान के अस्पताओं से अलग किस्म के हैं। यहाँ के अस्पताल प्राथमिक या प्रारम्भिक सुविधाओं से सुसज्जित हैं। बेबी को कैसे फीडिंग करवाना है, नेप्पी कैसे बदलना है, उसे कैसे नहलाना धुलना है, कपड़े कैसे बदलना है और नवजात की सेवा-सँभाल कैसे करना है इन सब बातों का प्रशिक्षण अस्पताल की नर्सें अनिवार्यत: देती हैं। यह प्रशिक्षण सर्वथा व्यावहारिक और क्रियात्मक होता है। यानि मानवीय मूल्य और जीवन की क़ीमत की नींव यहीं से मज़बूती से रख दी जाती है। किताब का यह पक्ष यकीनन बहुमूल्य है।

एक लेख में लेखक एक - बे-जोड़ विवाह को देखकर विस्मित होते हुये लिखते हैं 'बड़ा ही मनमोहक लेकिन विस्मयकारी दृश्य और माहौल था वह। जब मैंने जाना कि किसके विवाह का आयोजन है ? दरअसल विवाह भारतीय और आस्ट्रेलियन जोड़े का था। दूल्हा आस्ट्रेलियन है और दुल्हन भारतीय, तामिलनाडु की। मुझे लगा, यह वाकई विश्व बंधुत्व की भावना का जीवंत एवं ठोस प्रमाण और प्रतीक है। विवाह पारंपरिक तमिल संस्कृति और संस्कारों के अनुसार हो रहा था। अधिकांश लोग रोली-मौली, मेहँदी लगाए हुये थे। लगता था भारतीय दुल्हन के साथ-साथ विदेशी रिश्तेदारों तक ने भारतीय संस्कारों और परम्पराओं को अपना लिया है। पंडित जी भी भारतीय उपलब्ध थे। मूलत: गोरखपुर, उत्तर प्रदेश के। उनका अपना घर भी सिडनी में हैं और इतने व्यस्त रहते हैं की उन्हें भारतीय संस्कारों और पूजा पाठ करवाने के काम से फुर्सत ही नहीं मिलती। वे बाक़ायदा अपनी कार से चलते हैं।'

शेर सिंह का लेखक हिमाचल की तरह ही सिडनी के मौसम और प्रकृति से भी प्रभावित होता है। वे लिखते हैं 'शाम होते-होते आसमान से सफ़ेद रंग के जो गोले बरसने शुरू हुये, तो विश्वास करना कठिन था कि ये ओला वृष्टि ही है ! इतने बड़े-बड़े और विभिन्न आकार-प्रकार के, तीखे, नुकीले कोने वाले, ठोस और बहुत पक्के, सफ़ेद रंग के चकमक पत्थर हों। क्रिस्टल क्लियर यानि एकदम पारदर्शी। इस प्रकार के रूपाकार वाले ओले मैंने अपने जीवन में पहली बार सिडनी में देखे, यह मेरे लिए बिल्कुल नया अनुभव था।'

शेर सिंह जी का लेखन अत्यंत ललित शैली का है जो रोचक भी है और मोहक भी। एक आलेख में फिर वे लिखते हैं। 'तब- सर्दी धीरे-धीरे रुख़सत हो रही थी और वसंत ऋतु का हौले-हौले, दबे पाँव आगमन हो रहा है। पेड़-पौधे नव पल्लवों, पुष्पों से सजे हरे-भरे पेड़, गाछ दिखते हैं। खिल रही कलियों और फूलों की मादक गंध मन-मस्तिष्क को विभोर कर देते है। तन पुलक-पुलक उठता है। गहरे रंग वाले तोते, मैगपाई और कोकाटु के उड़ते दल, अक्सर पेड़ों की डालियों पर बैठे-उड़ते दिखते हैं। अपनी आवाज़ में कुछ-न-कुछ बोलते, जिन्हें भला हम कैसे समझ सकते हैं ? अपने देश भारत और हिमाचल में इस समय पतझड़ की ऋतु होगी। फूल-पत्ते मुरझाने-झड़ने की प्रक्रिया में, वृक्षों के शीश पीले पड़ने के साथ ही नंगे, गंजे होते जा रहे होंगे। पक्षियों के उड़ान की दिशा बदलने लगी होंगी, मौसम गरम हवाओं को बुलाने लगा होगा। किन्तु यहाँ का मौसम बड़ा सुहाना था। हर ओर हरियाली और वसंत की मादकता से भर प्रकृति, पूरा वातावरण ख़ुशनुमा। चितकबरे रंग की मैगपाई चिड़ियों के बोलने की अजीब सी आवाज़ें आ रहीं हैं, जैसे कोई छोटा बच्चा बहुत बेज़ार होकर रो रहा हो ! बर्फ समान सफ़ेद परों वाला सुआ प्रजाति का कोकाटु भी सिर पर सफ़ेद कलगी डुलाते हुये उड़ता दिख रहा है।' शेर सिंह के लेखों में प्रकृति को देखने और उसे वर्णित करने की यह शैली अत्यंत मनमोहक है।

बहुत कुछ है इस किताब पर लिखने को। बहुत सारे ऐसे प्रसंग हैं जिनका विवरण दिया जाना चाहिए किन्तु समीक्षा आलेख की अपनी सीमाएँ होती हैं अत: अंत में सिडनी से वापसी के एक प्रसंग का ज़िक्र करते हुये अपनी बातों को विराम देना ठीक होगा। उन्हीं के शब्दों में 'यहाँ की ऋतु के अनुसार दिन धीरे-धीर छोटे होते जा रहें हैं। वैसे भी, अब वापस लौटने का दिन निकट आता जा रहा है। वापस लौटने के लिए पहले महीने गिनता थे, फिर सप्ताह गिनने लगा और अब दिन गिनने लगा हूँ। साहित्यकार अमृतलाल नागर को याद करते हुये वे उनका लिखा उद्धृत करते हैं 'जहाज का पंछी... समुद्र कितना ही विशाल क्यों न हो, उसमें विचरने, उड़ने वाले पंछी, उड़-उड़ कर वापस जहाज पर ही आते हैं। समुद्र के ऊपर अधिक देर तक उड़ान नहीं भर सकते हैं।' इसलिए उस पंछी की तरह मुझे भी वापस जहाज, यानि अपने देश, अपने प्रदेश, अपने घर लौटने की अब जैसे बेचैनी और उतावली हो रही है।'

विदेश जाना, वहाँ विचरना और अपनी आँखें खुली रखने के अतिरिक्त भीतर तक अपने सूक्ष्म अवलोकन को उतार लेना उसे लेखन और साहित्यिक शक्ल देना निश्चित ही आसान नहीं है किन्तु शेर सिंह की यह किताब इन बहुत सारी विशेषताओं से परिपूर्ण होकर सर्वथा पठनीय सिद्ध होती है।

000

लेखकों से अनुरोध

सभी सम्माननीय लेखकों से संपादक मंडल का विनम्र अनुरोध है कि पत्रिका में प्रकाशन हेतु केवल अपनी मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। वह रचनाएँ जो सोशल मीडिया के किसी मंच जैसे फ़ेसबुक, व्हाट्सएप आदि पर प्रकाशित हो चुकी हैं, उन्हें पत्रिका में प्रकाशन हेतु नहीं भेजें। इस प्रकार की रचनाओं को हम प्रकाशित नहीं करेंगे। साथ ही यह भी देखा गया है कि कुछ रचनाकार अपनी पूर्व में अन्य किसी पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ भी विभोम-स्वर में प्रकाशन के लिए भेज रहे हैं, इस प्रकार की रचनाएँ न भेजें। अपनी मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ ही पत्रिका में प्रकाशन के लिए भेजें। आपका सहयोग हमें पत्रिका को और बेहतर बनाने में मदद करेगा, धन्यवाद।

-सादर संपादक मंडल

पुस्तक समीक्षा

(रेखाचित्र संग्रह)

कुछ चेहरे, कुछ यादें

समीक्षक : सुरेश रायकवार

लेखक : ज्योति जैन

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

सुरेश रायकवार
152ए, गोयल नगर इंदौर
मप्र 452018
मोबाइल- 88188 38007
ईमेल- sandhysur@gmail.com

आपको यदि किसी व्यक्ति का हुलिया बताया जाय तो आवश्यक नहीं कि आप उसे पहचान ही लें। किन्तु साहित्यिक गद्य लेखन में रेखाचित्र एक ऐसी विधा है जिसमें शब्दों के माध्यम से व्यक्ति का ऐसा चित्र उकेरा जाता है कि आपके दिमाग़ में संबन्धित पात्र की हूबहू छबि निर्माण हो जाती है। यद्यपि यह अधिक लोकप्रिय विधा नहीं बन सकी और वर्तमान में इसे लुप्तप्राय विधा ही कहा जा सकता है। किन्तु ज्योति जैन की सद्य प्रकाशित पुस्तक कुछ चेहरे, कुछ यादें (रेखाचित्र) ने इस विधा को पुन: जीवित कर दिया है।

मालवी की मिठास में डूबी एक हँसमुख, मृदुभाषी और मिलनसार शख्शियत एवं साहित्य की दुनिया में एक जाना-पहचाना नाम अर्थात् ज्योति जैन। उनकी सफल साहित्यिक यात्रा का आकलन यदि करना हो तो अब तक उनके दो कहानी संग्रह, दो कविता संग्रह, दो उपन्यास, एक निबंध संग्रह, एक यात्रा वृतांत और तीन लघुकथा संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। एक विशिष्ट बात और है कि उनके तीनों लघुकथा संग्रहों का अनुवाद बंगला, मराठी और अंग्रेज़ी भाषा में हो चुका है। यही नहीं उनकी दो लघुकथाएँ महाराष्ट्र शिक्षा बोर्ड की कक्षा नौवीं के पाठ्यक्रम में भी पढ़ाई जा रही है। ज्योति जैन साहित्य जगत् के कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से भी सम्मानित हो चुकी हैं।

ज्योति जैन ने अपने शब्दों की तूलिका और शब्द-रंगों से ऐसे रेखाचित्रों को उकेरा है जो हमसे बात करते है, हमे हँसाते हैं तो कुछ रुलाते भी है। इसीलिए प्रसिद्ध साहित्यकार पंकज सुबीर ने पुस्तक की भूमिका में लिखा है 'ज्योति जैन ने जहाँ भी व्यक्तियों पर काम किया है, वहाँ उनके काम की बारीकी और काम करने का सलीक़ा देखने लायक है। जैसे कोई मूर्तिकार, छोटी छैनी और हथोड़ी लिए एकाग्रता के साथ मूर्ति को गढ़ता है, एक-एक रेशा उभारता है। ऐसे, कि मूर्ति प्राण-प्रतिष्ठा के पूर्व ही सजीव लगने लगती है। ज्योति जैन ने जैसे अपने शिल्प से इन पात्रों में प्राण-प्रतिष्ठा कर दी है।'

ज्योति जैन ने अपने आसपास, अपने साथ रहने वाले लोगों में से ही पात्र चुने है जैसे अपनी माँ, पति, मकान मालकिन, नौकर-नौकरानी, पड़ोसी, शिक्षक, सखी सहेली आदि। इसके अतिरिक्त अपने प्रकृति प्रेम के कारण उन्होने नदी, गिलहरी चिड़िया आदि को भी इस रेखाचित्र में स्थान दिया है।

हर पात्र के हुलिये का वर्णन ऐसा किया है कि कोई भी चित्रकार आसानी से उसका हूबहू रेखाचित्र का निर्माण कर सकता है। जैसे भेरुदादा के लिए वे लिखती हैं धूसर रंगों की हाफ स्लीव शर्ट, गहरे रंगों की पेंट, वो भी पाँयचे मुड़े हुए। थोड़े से लंबे..., बिना माँग के.. तेल डले भूरे बाल। लंबा चेहरा, बालों के ही समान भूरापन लिए हल्की भूरी आँखें, नुकीली भूरी मूँछें, दंत-पंक्ति कतार में लेकिन तंबाकू के सेवन से पीली। आपको पढ़कर लगेगा कि जैसे भेरुदादा हमारे सामने ही खड़े हैं।

'काल करे सो आज कर' के उपाध्याय जी का हुलिया बतलाते हुए उन्होंने लिखा है 'उपाध्याय अंकल यानि...एक हेंडसम बूढ़े। वे बहुत अच्छे दिखते थे। फर्स्ट क्लास ऑफ़िसर के पद से सेवानिवृत। टिप-टॉप रहने की आदत उनकी अभी भी बरकरार थी। अंकल एकदम गोरे चिट्टे थे। उनकी त्वचा का कलर, विशेषकर चेहरे का ऐसा था जैसे दूध के अंदर एक चुटकी भर सिंदूर मिला दिया हो वैसा गुलाबी रंगत लिए उनका चेहरा था। उनके बाल बीच में से उड़े हुए थे, उनकी टकली नज़र आती थी। लेकिन आजू-बाजू के सफ़ेद बाल थोड़े-थोड़े थे और भवें भी हल्की सी सफ़ेद। और आँखें कुछ बिल्लौरी। और हाँ...! क्लीन शेव रहते थे। मुझे लगता है वो नियम से शेव करते थे। सामान्यतौर पर वो आधी बाँह का ऐसे कुर्ता-सा पहने रहते थे और

नीचे पायजामा। पैरों में हमेशा वो कपड़े के जूते पहनते थे।' पूरा व्यक्तित्व ही आँखों के सामने सजीव हो उठा।

लघुकथा के सशक्त हस्ताक्षर सतीश दुबे का बारीक मुआयना करते हुए वे लिखती हैं – व्हील चेयर पर बैठी वो बिल्कुल दुबली-पतली काया। उनके हाथ भी अजीब तरीक़े से मुड़े हुए थे, अँगुलियाँ भी....। पूरी आस्तीन का कुर्तानुमा शर्ट पहना था और पायजामा। पैर व्हील चेयर के पायदान पर थे और घुटनो पर उनके हाथ टिके हुए थे। मोटी काली फ्रेम का चश्मा, बिल्कुल पिचके हुए गाल, खिचड़ी बाल.... लेकिन आत्मविश्वास से भरपूर व्यक्तित्व मेरे सामने शारीरिक अक्षमताओं को अँगूठा दिखा रहा था।

ज्योति जैन के रेखाचित्र यह भी बतलाते हैं की ज्योति जैन अपने सम्बन्धों, अपने रिश्तों को कितनी संजीदगी, शिद्धत और ईमानदारी से निभाती हैं। इसीलिए 'किसी राजबाड़े से कम नहीं था वह बाड़ा' में वे कहती हैं- वो मेरी रक्त संबंधी नहीं थी। लेकिन हम उन्हें गीता भाभी कहते थे। आगे बढ़ी तो बाबू की बाई ने पूछा- क्यों गुड्डी आ गई स्कूल से? जब उनके पैर में कुछ चुभा तो बाड़े के घरों से गीता भाभी, हीरालाल डोडियाजी, सुनील के पापा सोहनलाल टेलर, शशि की मम्मी राधा भाभी आदि बाड़े के सभी लोग बाहर निकल आए। बाद में मकान मालकिन काकी साब, सजन बाई, मदन की बाई आदि भी पता चलने पर हाल पूछने घर आए।

'काश...मैंने फ़ोन रिसीव कर लिया होता' में एनसीसी ग्रुप के मित्र दुष्यंत या फिर 'सराफे से सराफे तक सोने से सोने तक की यात्रा' में उनकी अंतरंग सहेली विजू (विजिया) के रेखा चित्र लेख पढ़कर आप समझ सकेंगे कि एक मित्र को खोने का दर्द कैसा होता है।

ज्योति जैन ने पुस्तक में दो मूर्धन्य साहित्यकारों सतीश दुबे एवं दादा नरहरी पटेल के जीवन को भी उकेरा है जो उनके साहित्यिक परिचय से भिन्न एक अलग ही व्यक्तिव की पहचान करवाता है।

'मौसम की तरह रंग बदलती शिवना नदी' में शिवना का बहुत ही जीवंत चित्रण किया गया। पढ़ते-पढ़ते आपको लगेगा कि कोई पवित्र नदी आपकी आँखों के सामने ही बह रही है। तो वहीं 'रामजी के आशीर्वाद वाली 'तालुडी'' में एक गिलहरी का मार्मिक और भावुक कर देने वाला रेखाचित्र लेख है।

पारंपरिक लोक त्योहार संजा का वर्णन भी ऐसा किया गया है कि जो लोग यह त्योहार नहीं भी मनाते हैं वे पढ़कर यह त्योहार मना लें। संजा के लिए गाये जाने वाले गीत और बच्चों के उत्साह का ऐसा प्रस्तुतीकरण जो इस त्योहार के पूरे वातावरण की तस्वीर खींच देता है।

ज्योति जैन कितनी संवेदनशील और दयावान हैं यह उनके रेखाचित्र लेख ' रेखाओं से भरा चित्र- वह बूढ़ा मॉडल', 'मरद है तो पीटेगा तो सही' में उभर के सामने आता है। 'जहाँ विश्वास है वहाँ विश्वासघात भी...' में एक गाइड 'कादो' के माध्यम से पूरे भूटान के प्राकृतिक सौंदर्य की यात्रा तो कारवाई ही, साथ ही विदेश में अंजान गाइड पर विश्वास के साथ जो विश्वासघात मिला उसे भी लेखिका ने सकारात्मकता से स्वीकार किया और अपने उदार भाव का त्याग फिर भी नहीं किया।

जीवन के सम्मानित रिश्तों माँ, सासू माँ और पति के साथ रिश्तों के लिए लिखे उनके शब्द आपको भाव विह्वल कर देंगे और कहीं-कहीं अति भावुक भी। मुझे लगा कि ये लेख उन्होने पूर्ण साक्षी भाव से लिखे हैं।

साहित्य में रेखाचित्र विधा को परिभाषित करती इस पुस्तक में आलोचना के लिए कुछ नहीं है। पुस्तक में ज्योति जैन का शब्द प्रवाह पाठक को बाँधे रखने में सक्षम है साथ ही जहाँ जहाँ भी उन्होने स्थानीय भाषा 'मालवी' का प्रयोग किया है वह लेख को रोचकता ही प्रदान करता है।

यह पुस्तक साहित्य की एक लुप्त विधा 'रेखाचित्र' में लिखी गई है अत: न केवल विधा को समझने के लिए बल्कि पुस्तक में शामिल सभी पठनीय लेखों के लिए अवश्य पढ़ी जाना चाहिए। आशा है यह पुस्तक पाठकों को पसंद आएगी।

000

नई पुस्तक

(ग़ज़ल कविता संग्रह)

इश्क़ कम्बल बन गया है

लेखक : सुधीर मोता

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

सुधीर मोता का यह संग्रह हाल में ही आया है। अपने छह कविता संग्रहों और संस्मरणात्मक गद्य की हिंदी और अंग्रेज़ी की एक पुस्तक के बाद सुधीर मोता जीवन के बेशक़ीमती रंग मोहब्बत को मौसम के अलग-अलग तेवरों की तरह इस किताब में पिरो कर लाये हैं। इसमें विछोह के दर्द और संगत के सुख का बयान इस तरह होता चलता है जैसे कोई बंजारा इकतारा बजाते हुए मग्न चला जा रहा हो और उसके पीछे प्रेम की एक नदी बलखाती चली आ रही है। प्रेम के मीठे दर्द की चाशनी में घुली खटमिट्ठी चरपराहट को जैसे आप कोई बंध, कोई नाम नहीं दे सकते, वैसे ही इन कविताओं में ग़ज़ल, गीत या नज़्म के अनुशासन और तहज़ीब कभी बने रह तो कभी थोड़ा बेपरवाह हो कर अलग अंदाज में प्रेम करते चलते हैं। जैसे प्यार, प्रेम, इश्क़, मोहब्बत, वस्लदूरियाँ, मिलना-बिछुड़ना अलग-अलग परिभाषाओं में हमारे तन-मन में बेलौस प्रवाहित होते हैं, वैसे ही कविता, ग़ज़ल, गीत, नज़्म शास्त्रीयता के बंधनों को निभाते, चूकते अपनी मासूमियत से एक दूसरे के विधानों में आवा-जाही करते हैं।

000

पुस्तक समीक्षा

(व्यंग्य संग्रह)

एजी ओजी लोजी इमोजी

समीक्षक : लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

लेखक : अरुण अर्णव खरे

प्रकाशक : इंक पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ. प्र.)

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
मोहल्ला- बरगदवा (नई बस्ती), निकट गीता पब्लिक स्कूल, पोस्ट- मड़वा नगर (पुरानी बस्ती), जिला- बस्ती (उ. प्र.)- 272002
मोबाइल- 7355309428
ईमेल- laldevendra204@gmail.com

पहले व्यंग्य विधा को भले ही साहित्य में पूर्ण एवं महत्त्वपूर्ण विधा के रूप में स्वीकार्यता नहीं थी पर वर्तमान में यह एक अलग विधा के रूप में अपना पूर्ण स्थान बना चुकी है। व्यंग्य विधा के कई कलमकार आज साहित्य में अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराते हुए प्रतिष्ठित हुए हैं। ससम्मान व्यंग्य विधा अन्य विधाओं की तरह ही लोकप्रिय है। पढ़ने में व्यंग्य विधा अन्य विधा की अपेक्षा सरल लगते हैं पर सर्जन करना अन्य विधाओं से कहीं कठिन है। समाज में व्याप्त विसंगतियों पर नपे-तुले शब्दों से प्रहार करना अत्यंत दुष्कर है। समाज में हो रहे परिवर्तन और हो रही कमियों पर व्यंग्यकार की नज़र सदैव रहती है। जहाँ अँधेरा है उसे लोगों को बताने एवं दूर करने की पुरज़ोर कोशिश व्यंग्यकार करता है। चाहता है विसंगतियाँ दूर हों और रोशनी फैले। लोगों द्वारा व्यंग्य पढ़े भी ख़ूब जाते हैं। इसीलिए यह विधा ख़ूब लोकप्रिय भी है।

वरिष्ठ साहित्यकार अरुण अर्णव खरे अन्य विधाओं के साथ ही अपनी कलम व्यंग्य विधा में भी बख़ूबी चलाते हैं। आपकी व्यंग्य की पुस्तक 'एजी ओजी लोजी इमोजी' वर्ष 2023 में प्रकाशित हुई है। 'इंक पब्लिकेशन' प्रयागराज (उ. प्र.) से प्रकाशित पेपर बैक प्रारूप में है। इस कृति के 130 पृष्ठ में कुल 41 व्यंग्य हैं।

अपने आलेख में व्यंग्यकार सहज सरल शब्दों द्वारा बात कहते-कहते समाज की विसंगतियों या बुराइयों पर ज़ोरदार प्रहार करता है। और इस प्रहार पर लोग सोचने पर मजबूर हो जाते हैं और महसूस होता है कि व्यंग्यकार की बात सोलह आने सही है और यही व्यंग्य की सार्थकता भी है।

आम आदमी आम तरह से चल रही ज़िंदगी में आराम से चलता रहता है। घर पर अचानक चार रिश्तेदार किसी दिन धमक आए, ऑफिस में रूटीन के अलावा कोई और कार्य दे दिया जाए, हम दिन भर सामान ख़रीदें पर पड़ोसी केवल ज़रूरी सामान लाने को कह दे, इसी तरह बहुत बार आम आदमी ज़रा सा अतिरिक्त भार उठाने में परेशान हो जाता है और उससे भागने के बहाने बनाता है तभी तो व्यंग्यकार लिखते हैं- 'हमारी आदत है भार से बचने की। भार उठाने की बात आई नहीं कि हम बचने के रास्ते तलाशने लगते हैं। भार से बचना जहाँ आम आदमी की आदत है वहीं अपना भार कम करने के लिए आम आदमी पर भार डालना सरकार की फितरत है। लेकिन अंत में आम आदमी सोचता है और उसे हमेशा लगता है कि यदि ज़िंदगी भारहीन हो जाएगी तो ज़िंदगी से जैसे सारे रंग ही ग़ायब होने लगेंगे। भार से उनकी ख़ुशियाँ हैं भार में ही उनकी ख़ुशियों के सूत्र हैं।' (भार, कंधे और ज़िंदगी, पृष्ठ-13, 14)

लंबी-लंबी, चौड़ी-चौड़ी, ऊँची-ऊँची फेंकते हुए आपको हर जगह लोग मिल जाएँगे। वास्तव में फेंकने के सुख असीमित होते हैं। फेंकने में बड़ा ही आनंद आता है। आह! फेंक कर दिल को सुकून मिलता है। यही नहीं फेंकने से लोग सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए जीवन का लुफ्त भी उठाते है। आपसे आपके आसपास ही फेंकू लोग मिलते होंगे। तभी तो अर्णव जी लिखते हैं- 'फेंकने का महत्त्व मुरारी जी से बढ़कर कोई नहीं जानता। फेंकने के सुखद परिणाम को लेकर मुरारी जी हमेशा आश्वस्त रहे हैं। बचपन से ही वह फेंकने के सुखद प्रभाव को अनुभव करते हुए बड़े हुए हैं।

धर्म, साहित्य, राजनीति और आम जनों के बीच फेंका-फेंकी के कितने ही अजब-ग़ज़ब उदाहरण मुरारी जी की नज़रों से गुज़रे।

राजनीति में तो फेंकने की और भी सुदीर्घ और सुविधापूर्ण परंपरा है। राजनीति में फेंकने की बकायदा प्लानिंग भी की जाती है। मुरारी जी ने देखा है कि ऊँची-ऊँची फेंकते हुए नेताओं की नज़र ऊँची कुर्सी पर रहती है। नेता जानते हैं कि वे ग़रीबी भगाओ, भ्रष्टाचार हटाओ, शाइनिंग इंडिया, करोड़ों नौकरियाँ जैसा कुछ भी फेंकेंगे, वोट उनकी झोली में भरभराकर गिरेंगे।

साहित्य और राजनीति से इतर दूसरे फील्ड में भी फेंकने वालों की काबिलियत में उनका भरोसा जगा है।' (फेंकने के सुख, पृष्ठ- 45, 46)

वैसे तो साहित्य ने हर देश हर काल में समाज को नई दिशा दी है पर वर्तमान में ऐसा दौर भी

चल रहा है कि लेखक अधिक और पाठक कम है। और हर लेखक को मुगालता है कि हम बहुत ही पहुँचा हुआ लेखक है।

'मेरे एक पक्के मित्र हैं नौरंगी लाल। उनमें और मुझमें बहुत सी समानताएँ हैं। सबसे पहले तो यही कि हम दोनों को ही काग़ज़ रंगने का शौक है। संभ्रान्त किस्म के लोग इसे लेखकीय कर्म कहते हैं।

हम दोनों को मुगालता है कि हम बहुत ही पहुँचे हुए लोग हैं। यह अलग बात है कि जहाँ भी हम रचनाएँ भेजते हैं वहाँ के संपादक हमारी रचनाएँ न छापकर अलिखित रूप में हमें संदेश देते रहते हैं कि 'आप स्वांत: सुखाय ही लिखें और हमारे पाठकों पर मेहरबानी करें।'

हम दोनों ऑनलाइन साहित्यिक समूहों के सक्रिय सदस्य और कुछ के एडमिन भी हैं। एडमिन इसीलिए हैं ताकि एक दूसरे की रचनाएँ अपने-अपने समूहों में वाह-वाही के लिए पोस्ट कर सकें। कुछ छिछोरे और घुन्ना टाइप के रचनाकार इसे 'तू मेरी पीठ खुजा, मैं तेरी पीठ खुजाऊँ' की वृत्ति कहते हैं। लेकिन हमारा मत भिन्न है। हम इसे अपने प्रोडक्ट का प्रमोशन कैम्पेन मानते हैं।' (मेरे मित्र नौरंगी लाल, पृष्ठ- 74)

पहले समाचार पत्रों या पत्रिकाओं में बाक़ायदा साहित्य पृष्ठ रहता था और उस पेज को 'साहित्य संपादक' देखते थे जो साहित्य की समझ रखने वाले या अनुभवी साहित्यकार होते थे। पर अब बमुश्किल अख़बारों में या सामान्य पत्रिका में साहित्य प्रकाशित होता है। जिसके लिए साहित्य संपादक की ज़रूरत ही कहाँ है? कभी साहित्य संपादक यदि नियुक्त भी है तो यदि किसी छुट्टी या अन्य कारण से नहीं हैं तो अख़बार या पत्रिका ने बिना साहित्यिक जानकारी के ऑफ़िस में कार्यरत किसी को भी उसे देख कर लगाने को कह दिया और उसी का परिणाम कि कविता, कहानियों, लेख आदि में त्रुटियों को दूर किए बिना ही वह छप जाता है और फिर उस रचना को पढ़ कर लोग हँसते हैं।

सार्वजनिक सेवाओं का नित दिन व्यवसायीकरण कर आम जनता को लूटा जा रहा है। यदि सेवा का प्रारूप प्राइवेट है तब तो और भी शोषण होना सुनिश्चित है। एक बढ़िया व्यंग्य है जो यथार्थ है।

सोशल मीडिया पर हम कुछ भी पोस्ट करें तो लिखित प्रतिक्रिया की अपेक्षा इमोजी की तो जैसे बाढ़ आ जाती है। यहाँ तक जिस पोस्ट पर लिखकर प्रतिक्रिया देना ही उचित हो उस पर भी लोग इमोजी भेज देते हैं। कभी-कभी तो इन इमोजी के अर्थ, भावार्थ को समझने में ही अभी तक पढ़ा और सीखा पूर्ण ज्ञान लगा देने के बाद भी हम असफल हो जाते हैं। और माथा पीटने का मन करता है। अरे! भाई पढ़े लिखे हैं तो कुछ लिख दीजिए। शब्दों से प्रतिक्रिया देने में इतनी कंजूसी... तभी तो पुस्तक के शीर्षक व्यंग्य में अर्णव जी लिखते हैं-

'ये इमोजी भी ग़ज़ब की चीज़ है। हर प्रश्न के लिए इमोजी, हर उत्तर के लिए भी इमोजी। सीधी-सच्ची इमोजी, हँसती-चुहल करती इमोजी, घूरती-व्यंग्य करती इमोजी, प्रेम और नफरत को अभिव्यक्त करती इमोजी, मुस्कराती-डराती इमोजी, रोती-उछलती इमोजी और कुछ ऐसी कि पल्ले ही नहीं पड़ता कि इनका आशय क्या है।

इस कृति के अन्य व्यंग्य- टैग बिना चैन कहाँ रे, झूठ के प्रयोग, सच के खतरे, टेक इट इजी, चयन का चकल्लस, तकनीक के सताए, लीक ही लीक, हम काले हैं तो क्या हुआ, फेसबुकिया मित्र और साहित्यिक विमर्श, ड्रीम इलेवन, नागपूजा, तौबा ये मतवाली चाल, रावण के पुतले के प्रश्न, पाला बदलने का मुहूर्त, आप कैसे बने करोड़पति आदि भी तेज़ी से प्रहारक हैं।

संग्रह के व्यंग्यों में भाषा, कथ्य और कहन सहज रूप में हैं। कहीं भी अति बौद्धिकता का तड़का न लगाकर सरल भाषा में व्यंग्य लिखे हुए हैं। आसानी से पढ़कर जिसे समझा जा सकता है और हमें विचार करने पर मजबूर करता है। पुस्तक का आवरण शीर्षक अनुरूप आकर्षक है। छपाई भी अच्छी हुई है। वर्तनी की त्रुटियाँ कुछ जगह हैं जिस पर ध्यान देना अपेक्षित है।

000

नई पुस्तक

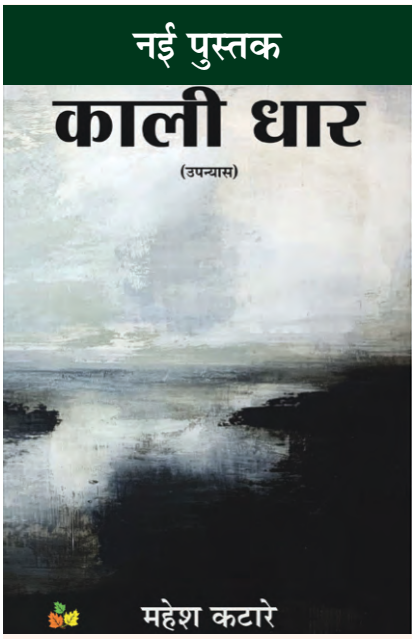

(उपन्यास)

काली धार

लेखक : महेश कटारे

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

हिंदी के वरिष्ठ कथाकार तथा ग्रामीण और किसान जीवन को अपनी रचनाओं में प्रमुखता से चित्रित करने वाले महेश कटारे का यह एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। यह उपन्यास उनके अंचल में फैली दस्यु समस्या का बहुत अच्छे से चित्रण करता है। महेश कटारे के पास अपने अंचल की भाषा का सौंदर्य है जो उनकी रचनाओं में और निखकर कर सामने आता है। इस उपन्यास में महेश कटारे की भाषा की एक बानगी देखिए- महाराज को दिए गए वचन के अनुसार मवसिया को चोरी नहीं करनी चाहिए थी। उसके पास सब कुछ तो था, जो फिल्मों में कहा जाता है-दौलत, शोहरत, इज्जत। बीहड़ के अलिखित संविधान में चोरी क्षम्य थी पर दिया हुआ कौल काटना अक्षम्य... प्रान जाय पर बचन न जाई। चंबल के जो बीहड़ मवसिया को छिपाते थे, उन्हीं की नजर से गिर गया मवसिया। विश्वास में दगा और वचन से हटना! थू। मवसिया को अंबाह के पास बरेह गाँव में पीपल के पेड़ से लटकाकर फाँसी दी गई। मरने से पहले मवसिया ने कहा था- 'बाह्मन पे भरोसा मत करना।'

000

पुस्तक समीक्षा

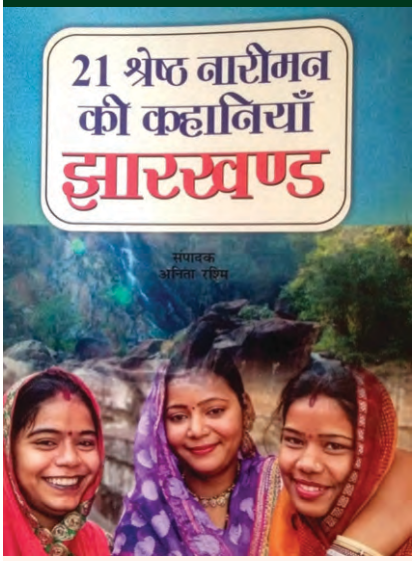

(कहानी संकलन)

21 श्रेष्ठ नारी मन की कहानियाँ

समीक्षक : डॉ. कुमारी उर्वशी
संपादक : डॉ. अनिता रश्मि
प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली

डॉ. कुमारी उर्वशी
सहायक प्राध्यापिका, हिन्दी विभाग,
रांची विमेंस कॉलेज, रांची,
झारखंड, 834001
मोबाइल-9955354365
ईमेल- urvashiashutosh@gmail.com

अनिता रश्मि जी के संपादन में '21 श्रेष्ठ नारी मन की कहानियाँ' (झारखंड के कहानीकारों की कहानियों का संग्रह) प्रकाशित हुई है। संग्रह में डॉ. रोज़ केरकेट्टा की गंध, डॉ. विद्याभूषण की सरे राह चलते-चलते, डॉ. माया प्रसाद की शापमोचन, डॉ. सी. भास्कर राव की हत्यारिन, पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा' की सिद्धि, जयनंदन की सेराज बैंड बाजा, डॉ. महुआ माज़ी की इलशेगुंड़ि, अनिता रश्मि की लाल छप्पा साड़ी, कलावंती सिंह की शिप्रा एक्सप्रेस, डॉ. कविता विकास की नाम में क्या रखा है, रश्मि शर्मा की मनिका का सच, नीरज नीर की सभ्यता के अँधेरे, ममता शर्मा की औरत का दिल, डॉ. विनीता परमार की कोख पर कैंची, रेणु झा रेणुका की सुखद पड़ाव, सत्या शर्मा 'कीर्ति' की दुनिया फिर भी ख़ूबसूरत है, डॉ. अनामिका प्रिया की अनुबंध, सारिका भूषण की प्रेम की परिधि, मीरा जगनानी की वो तीन दिन, कल्याणी झा 'कनक' की एहसास तथा प्रतिभा सिंह की वापसी शामिल हैं।

राज्य के श्रेष्ठ साहित्यकारों में शामिल डॉ. माया प्रसाद की कहानी 'शापमोचन' पढ़ते हुए आँखें कई बार भीग गईं। इतने संवेदनशील मुद्दे पर लिखी गई यह कहानी जाने कब तक प्रासंगिक बनी रहेगी। रायबर्न के अनुसार- 'स्त्रियों ने ही प्रथम सभ्यता की नींव डाली है और उन्होंने ही जंगलों में मारे-मारे भटकते हुए पुरुषों को हाथ पकड़कर अपने स्तर का जीवन प्रदान किया तथा घर में बसाया।' बावजूद इसके उनकी सामाजिक स्थिति हमेशा ही दोयम दर्जे की रही। डॉ. रोज़ केरकेट्टा की कहानी 'गंध' स्त्रियों के साथ सबसे ज़्यादा घटित होने वाले और मामूली समझे जाने वाले दुर्व्यवहार 'छेड़खानी' के मुद्दे पर लिखी गई है। इसे पढ़कर अख़बार में पढ़ी एक घटना बरबस याद आ गई। जिसमें लिखा था कि बिहार के जहानाबाद जिले में गुरुवार को युवक को अपनी बहन के साथ छेड़खानी कर रहे बदमाशों का विरोध करना महँगा पड़ा तथा विरोध करने पर बदमाशों ने युवक को चाकू से गोदकर गंभीर रूप से घायल कर दिया और मौके से फरार हो गए।

डायन प्रथा के बढ़ते प्रभाव के मद्देनज़र झारखण्ड जैसे राज्यों ने पहले ही क़ानून बना लिए हैं। अब छत्तीसगढ़, राजस्थान और हरियाणा भी इसी राह पर हैं। कुछ सामाजिक कार्यकर्ताओ का कहना है कि मौजूदा क़ानून के तहत भी कार्रवाई की जा सकती है, मगर पुलिस इसमें कोई रुचि नहीं लेती। डायन प्रथा के नाम पर महिलाओं के उत्पीड़न की घटनाएँ रह-रहकर सर उठाती रही हैं। बहुत छोटी-छोटी बात के लिए औरत को ज़िम्मेदार बताकर डायन करार दे दिया जाता है जैसे गाय ने दूध देना बंद कर दिया, कुएँ में पानी सूख गया, किसी बच्चे की मौत हो गई तो अन्धविश्वास के चलते औरत को डायन घोषित कर दिया जाता है। कई मामलों में सम्पत्ति हड़पने की नीयत से भी महिलाओं को डायन करार दिया जाता है। इसी मुद्दे पर कहानी है अनिता रश्मि की 'लाल छप्पा साड़ी' तथा रश्मि शर्मा की 'मनिका का सच'। 'लाल छप्पा साड़ी' कहानी की नायिका बुधनी पढ़ने लिखने की इच्छा लेकर डॉ. निशा के घर जाने वाली महिला है। यह वह महिला है जो एक लाल छप्पा साड़ी की आस लगाए बैठी है। जिस दिन लाल छप्पा साड़ी के लिए अपने पति जीतना को बाज़ार जाते वक़्त रुपये देती है उम्मीद लगाए घर पर बैठी है और उसका पति दामोदर नदी में बह जाता है। साड़ी घर नहीं आती बुधनी की आस अधूरी ही रह जाती है जो प्रेमचंद के 'गोदान' के होरी की याद दिलाती है। जिसकी गाय की आस अधूरी ही रह जाती है। अपने बच्चों के संग अकेली बुधनी जीवन के लिए संघर्ष कर रही है ऐसी महिला को समाज डायन घोषित कर देता है।

'मनिका का सच' कहानी की नायिका मनिका डायन घोषित है। जानकर आश्चर्य होगा कि स्वयं मनिका ने ख़ुद को डायन घोषित करवाया है क्योंकि पति की मृत्यु के बाद गाँव वाले उसकी इज़्ज़त नहीं बख्शते अगर वह डायन घोषित नहीं होती। शकुन बुआ मनिका की तकलीफ़ जानती है उसकी मृत्यु के बाद वह बताती है कि रोज़ कोई न कोई उसके पास आधी रात को दरवाज़ा खटखटाने चलाता था। यहाँ तक की सिलाई के लिए कपड़े लेकर आने वाला आदमी भी उसका फ़ायदा उठाना चाहता था। इशारों में भद्दी बातें करता। मनिका यह जानती थी

कि उसकी बात पर यक़ीन करने वाला कोई नहीं है। उसकी सुंदरता ही आज उसकी दुश्मन बन गई है। और वह अपने पति के बनाए घर को छोड़ना भी नहीं चाहती थी। ख़ुद को सुरक्षित रखने के लिए डायन बनने के अलावा उसके पास कोई रास्ता नहीं बचा था।

डॉ. महुआ माजी की 'इलशेगुंड़ि' रूपकुमारी की कहानी है। 'इलशेगुंड़ि' बाँग्ला का शब्द है और इसकी अर्थध्वनि कहानी में मौजूद है। लेखिका ने कहा है कि बारिश की महीन-महीन या छोटी-छोटी बूँदें नदी की सतह पर जब पड़ती हैं तो हिल्सा मछली गहरे जल से सतह पर आ जाती है। इसी तरह रूपकुमारी की तकलीफ़ भी सतह पर आती है। रूपकुमारी अपने पति के छल का शिकार बन जाती है वह उससे दूसरी शादी कर मौज लूट गाँव से भाग जाता है। भोली भाली रूपकुमारी उसके इस छल से असावधान है और उसकी प्रतीक्षा करती रहती है, लेकिन वह आता नहीं। इसी प्रतीक्षा के दौरान कालीपॉदो से पहचान बनती है।

कालीपॉदो भी उसके पति को खोजता है। एक दिन वह सूचना देता है कि उसका पति तो शहर में किसी और स्त्री के साथ है। इसके बाद रूपकुमारी गाँव से शहर जाती है उस तथाकथित पति के घर। वहाँ सौत से झगड़ा होता है और फिर वह अपने गाँव चली आती है। कालीपॉदो भी इसी ताक में था। अंतत: कालीपॉदो उसे अपने घर में पनाह देता है और इसकी कीमत भी वसूलता है।

कालीपॉदो के घर रहती रूपकुमारी सब कुछ झेल रही होती है। एक शादीशुदा मर्द के घर उसके साथ जो हुआ वो बस हुआ। इसके बाद गाँव में बाढ़ का प्रकोप आया और सभी बेघर हो गए। त्राण शिविर में कालीपॉदो रूपकुमारी का परिचय नहीं दे पाता। शिविर के बचावकर्मी सबका नाम रजिस्टर में लिखते हैं। वह रूपकुमारी से भी पूछते हैं। रूपकुमारी कुछ कहती है लेकिन कालीपॉदो बोल उठता है कि वह कुछ नहीं लगता। रूपकुमारी जो उसके घर सौत बनकर हर दुख सहते हुए रह रही होती है। वह कालीपॉदो जो रूपकुमारी पर पति की तरह अधिकार रखता था कह देता है कि वह कुछ नहीं लगता। रूपकुमारी समझ नहीं पाती कि 'क्या वाकई भरपेट भोजन-कपड़े के लिए ही उसने सोच-समझकर कालोपॉदो को फाँसा? वह ख़ुद ही से पूछती। यह उसकी पेट की क्षुधा थी या देह की ? या फिर मन की? क्यों प्रत्याख्यान नहीं कर पायी वह उसके प्रेम-निवेदन का... देह-आमंत्राण का...? ये कैसी पहेली है ठाकुर! ये मन की ग्रंथियाँ इतनी जटिल क्यों हैं? क्या एक पुरुष-मानुष के बिना जीना वाकई इतना मुष्किल था? वह सोचती। फिर सबकुछ भूलकर कालीपॉदो की गृहस्थी में मन रमाने की कोशिश करती। एक अछूत-सी ही हैसियत थी उस घर में उसकी।' रूपकुमारी की इस व्यथा को महुआ माजी ने बेहद संवेदनशीलता के साथ उभारा है।

'कोख पर कैंची' डॉ विनीता परमार की एक ऐसी संवेदनशील कहानी है जिसमें महिलाओं को इंसान नहीं समझे जाने के सामाजिक पहलू को उभारा गया है। लेखिका ने एक गंभीर मुद्दा इस कहानी से उठाया है। इस कहानी में हैं ग़रीबी से हताश लोग और उनका फायदा उठाते लोग जो इंसान कहलाने के भी काबिल नहीं है। बीड़ जिले में जहाँ पानी के लिए हमेशा त्राहिमाम मचा रहता है। क़र्ज़ में पूरा गाँव डूबा है। बेरोज़गारी का यह आलम है कि ठेकेदार जो कह दे वह मान लिया जाता है। यहाँ तक की महिलाएँ माहवारी के दिनों में काम की हानि ना करें इसके लिए महिलाओं के गर्भाशय निकाल देने का फरमान ठेकेदार जारी करता है और लोग मान भी लेते हैं। ठेकेदार की कठपुतली बने गाँव वाले सिर्फ सहना जानते हैं क्योंकि ठेकेदार के ख़िलाफ़ बोलने का मतलब है भूखा मरना। इस परंपरा से विद्रोह करती है अपनी कोख खो चुकी नंदिनी। इस सशक्त नारी की कथा है कोख पर कैंची।

संग्रह की अधिकांश कहानियों में झारखंड की ख़ुशबू रची बसी है। झारखंड की नैसर्गिक ख़ूबसूरती यहाँ के साहित्य में भी पुरज़ोर झलकती है यह बात इस संग्रह की कहानियों से स्पष्ट होती है।

000

नई पुस्तक

(व्यक्तित्व)

थे मज़ा करो म्हाराज

संपादक : कौसर भुट्टो

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

जनकवि सदीक भाटी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर केंद्रित इस पुस्तक का संपादन उनकी पोती कौसर भुट्टो ने किया है। जनकवि सदीक भाटी राजस्थानी और हिन्दी भाषा के लोकप्रिय कवि थे। मरुधरा के इस सुरीले कवि का जन्म 1937 में नागौर जिले के गोठ गाँव में हुआ। इस कवि को जनता ने अपना खूब प्यार दिया। जन-जन में आपके गीत-कविताएँ ख़ासे लोकप्रिय थे। कारण था कि आपने जटिल छंदों से बाहर आकर लोकजीवन से जुड़ी भाषा में सृजन किया। गीतों के बोल ऐसे सुंदर थे के सबकी ज़बान पर चढ़ जाएँ। पुस्तक के बारे में कौसर भुट्टो लिखती हैं- वे मेरे साथ हैं, मेरी हर ख़ुशी और हर सफलता में। उनसे मिला वो प्यार और उनकी कविताओं की वो दुनिया हमेशा मेरे जीवन का हिस्सा रहेंगी। उनके दिए गए असीम प्रेम और देखभाल के लिए मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगी। उनके साथ बिताया हर क्षण मेरे लिए अनमोल था और रहेगा। उन्होंने मुझे जो प्रेम दिया, यह किताब उस प्रेम को लौटाने की कोशिश भर है, लेकिन वो कभी भी उनके दिए गए प्रेम के बराबर नहीं हो सकता।

000

पुस्तक समीक्षा

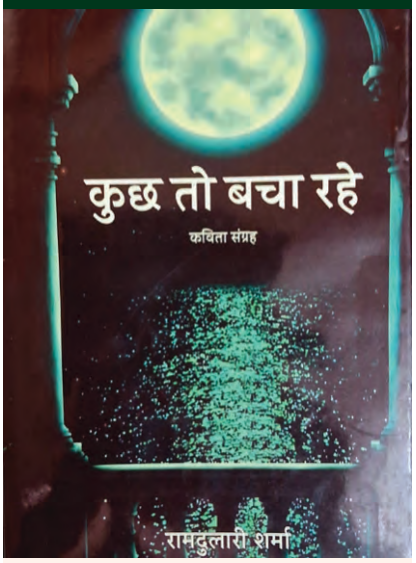

(कविता संग्रह)

कुछ तो बचा रहे

समीक्षक : रमेश खत्री

लेखक : रामदुलारी शर्मा

प्रकाशक : ज्ञानमुद्रा पब्लिकेशन, भोपाल

रमेश खत्री
(संपादक मेगजीन साहित्यदर्शन डाट इन)
53/17, प्रतापनगर, जयपुर 302033,
राजस्थान
मोबाइल- 9414373188
ईमेल- sahityadarshan@gmail.com

'कुछ तो बचा रहे' रामदुलारी शर्मा का सद्य प्रकाशित कविता संग्रह है जो ज्ञानमुद्रा पब्लिेशन, भोपाल से आया है। इसमें 65 कविताएँ संग्रहित है। इसके ब्लर्ब को लिखते हुए एकान्त श्रीवास्तव ने रेखांकित किया है, 'इस संग्रह की कविताएँ मेहनतकश जनों को समर्पित हैं। इससे कवि की दृष्टि प्रगतिशील परिलक्षित होती है। इसके साक्ष्य काव्य विषयों के चयन में देखें जा सकते हैं, माटी, अभी तप रहा है देश, पूरखे, तिरथिया, बीज, मुल्क की तस्वीर, मज़दूर, दंगे, लोकरंगों की बस्ती आदि कविताएँ अपनी विषयवस्तु में ही आकृष्ट करती हैं।'

दरअस्ल, कविता संवेदना की जिस ज़मीन पर टिकी रहती है, उसमें स्मृति सबसे प्रमुख होती है, इसके अभाव में कोई भी कल्पना संभव ही नहीं होती। रामदुलारी शर्मा की इन कविताओं से गुज़रना भी उनके स्मृतिलोक के ख़ज़ाने को लूटने जैसा ही है, 'आत्मा के किसी कोने में दुबककर रह गए मरे मासूम सपने/और फिर एक नए सपने के साथ/प्रवेश करती हूँ नए जन्म में/हर जन्म में कुचले गए मेरे सपने/स्मृतियों के झंझावात में क्षत विक्षत सपनों को समेटती हुई समा जाती हूँ एक दिन चिता में मेरी देह के साथ-साथ।' सपनों का विलगित होना ही सबसे दुरूह होता है, 'मेरे भीतर की स्त्री मुझसे करती है सवाल, आख़िर कब तक करती रहेगी अपने सपनों की हत्या? इस निर्मम दुनिया में कोई नहीं आएगा तेरे सपनों को बचाने, तुझे ही खोजना होगा तेरा वजूद।' रामदुलारी जी पूरी तौर पर पारिवारिक कवियत्री हैं तभी तो वो कहती हैं, 'घर की भी व्यथा यही है, डूबते अस्तित्व के साथ घर में ही घर/घर से बेघर हो गया/निराश मत होना मेरे पुरखों/ये गाँव, नदी, सरोवर ने नहीं तोड़ा तुमसे नाता।'

इन कविताओं में स्मृति का इतना पैनापन है कि 'कवेलू की कोख से झाँककर/पड़ोसियों के हाल-चाल में शामिल होना चाहती है कविता।' प्रकृति, मनुष्य और वस्तुएँ रामदुलारी की कविताओं में एक अलग तरह का दृश्यात्मक आधार तैयार करते हैं, जो जीवन को सुंदर और गतिशीलता की तरफ ले जाने का काम भी करते हैं। इनकी कविता 'माटी' को ही देखते हैं, 'माटी के घर में माटी/माटी की दीवारों पर हमने भी चित्रित किये/सूरज-चाँद और भविष्य के सितारे धीरे-धीरे/ घुलते गए, मिलते गए/और हमारी देह में समा गई माटी।' बस केवल इतना ही नहीं, 'माटी में मिल गई माँ, ख़त्म हो गया सब कुछ/चमकते पत्थरों में दबकर कसमसाती रही वह/और हम ढूँढ़ते रह गए पत्थरों में माटी।' कवि जब प्रकृति को अपनी भावनाओं में समाहित करता है तब उसकी कविताओं में संवेदनशीलता के नए स्रोत फूटने लगते हैं, 'कुछ दिन और ठहर जाने दो, माँ के हाथों की लगाई तुलसी में आ जाए बालियाँ/जिन्हें स्थापित कर सकूँ

अनजाने घर में, यदि अनुमति हो तो पिता की समाधी पर रोप दूँ एक पेड़/यदि पेड़ रहेगा तो बची रहेगी समाधि।'

कवि को चिंता है कि 'पेड़ों पर हुए प्रहार से कितनी-कितनी बार उजड़े पक्षियों के बसेरे/मेरे सपनों में आकर देना संदेश/बिछुड़े हुए घर के हरे भरे रहने का।' समीक्ष्य कविता संग्रह में ऐसी कई कविताएँ मिल जाएँगी जो प्रकृति के खाँटे बिम्ब उकेरती है, कवि का प्रकृति से गहरा नाता है, 'नीम के पेड़ पर बोलता उल्लू/मुझे याद आती है माँ की बात, 'उल्लू बोलने से वीरान हो जाएगा मोहल्ला/उजड़ जाएँगे घर।' या फिर, 'अपनी गीली आँखें लिए उड़ गई चिड़िया की तरह बहनें'...'वह तलाशेंगी रंग- बिरंगे फूलों में भाई के पसंद का रंग/रंगों में कच्चे धागों की स्निग्धता और बीते दिनों की ख़ुशबू।' लोक भाषा और लोक चिन्तन भी इस संग्रह की कविताओं में देखने को मिलता है, संग्रह की कई कविताओं में लोक जीवन के दृश्यों को उभरते हुए आसानी से महसूस किया जा सकता है, 'अभी सरसों के हाथ नहीं हुये पीले, और न पकीं गेंहूँ की बालियाँ, मिट्टी में दबे बीज कैसे जोड़ेंगे हमसे नाता/ज़मीन बिक जाएगी, दाने घर में आने से पहले।' या फिर कवि की चिंता है, 'ज़मीन बिक जाने के बाद भी चलता रहा सूद का चक्र/फँसते चले गए पिता, और एक दिन सूद के बदले उठा ली गई बिना ब्याही बेटी/बिना मौत के मारे गए पिता।' इन कविताओं में ग्रामिण अंचल की राजनीति, छल छद्म और वहाँ की परिस्थियाँ कई-कई रूप में अपने पैने नाखूनों के साथ दृष्टिगत होती है, 'तुम चाहते थे घर और आँगन में मोतियों की तरह बिखर जाना लेकिन साहूकारों के तकाजों से क़र्ज़ और सूद के चक्रव्यूह में ऐसे घिरे हम/घर पहुँचने से पहले ही हमारे बेबस हाथों ने तुम्हें कर दिया मंडियों के हवाले।' ...'हमारे हाथों से छिनकर ओझल हो गए तुम/क़ैद हो गए तुम्हारे सपने/खुली दुनिया से कहीं दूर बंद गोदाम में/तुम्हारे जाने के बाद, उजड़े हुए गाँव की तरह पसर गया सन्नाटा/उदासी के अंधेरों में डूब गए खेत, वीरानी से भर गई मेड़ें, डगर और पेड़।'

स्पष्ट है कि इन कविताओं में त्रासदी चारों तरफ से ही महसूस होती नज़र आती है, 'हमने ही किये कितने भेद हमारे साथ/इसके विरोध में किससे माँगें बेटियों का हक।', 'चिड़िया की तरह उड़ जाएगी एक दिन इस घर से बेटी, गूँजता रहेगा उसके गीतों का स्वर झीनी स्मृतियों के साथ/महकती रहेगी उसकी याद, इस आँगन में बहुत दिनों तक।' तो वहीं दूसरी तरफ वर्तमान समय की विद्रूपताएँ भी इन कविताओं में परिलक्षित होती हैं, 'आख़िर कब ख़त्म होगा ये महाभारत, कब होगा यातनाओं का अन्त/फरेगी गुरुओं की चाल से ठगे जा रहे हैं न जाने कितने एकलव्य/कितनी और द्रोपदियों के चीर हरण से थर्राएगी ये धरती/कब तक चलेगा दुशासन का अट्टहास और करुण पुकारों के बीच भीष्म का मौन/कितने और अभिमन्युओं को उनकी वीरता के भय से फँसाया जायगा/चक्रव्यूह के जाल में।' हम देखते हैं कि संग्रह की इन कविताओं में कवि यथार्थ की भूमि पर भावनाओं के नए पौधे रोपना चाहता है कवि की चाहना है और साथ ही एक परिपक्व साथी की तरह पाठकों को भी इस अभियान में शामिल करना चाहता है। रामदुलारी जी कविताओं की ऐसी पौध तैयार करती है कि उनमें ख़ुशियों के फूल लहलहाए, अमन और शान्ति का संदेश दूर तक फैले, 'इस निर्मम युग में जगह-जगह बिखरी लाशें देख रही हैं अपने घर का रास्ता/कौन जगा पायेगा उन्हें जिन्होंने देश को चमन करने के लिए छोड़ा था अपना घर, गाँव और परिजन।' या फिर, 'जीवन बचाये रखने की कोशिश में जो बचा न सके अपना जीवन/वह न बचकर भी बचे रहेंगे हमेशा-हमेशा/बचे हुए लोगों की स्मृतियों में।' इस संग्रह में अनेक ऐसी कविताएँ है जो अपनी सहजता में हमारे सम्मुख संवेदना के नए आयाम उलीचती है पाठक इनके साथ काफी दूर तक निकल जाता है, इस मायने में रामदुलारी शर्मा इन कविताओं के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं की एक नई ज़मीन तैयार करने में कामयाब हुई है। पाठक इनके साथ देर तक बने रहेंगे।

000

नई पुस्तक

(कविता संग्रह)

हरसिंगार सा झरूँगा मैं

लेखक : मनीष शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

कवि मनीष शर्मा का यह कविता संग्रह शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। वरिष्ठ कवि आशुतोष दुबे इस पुस्तक के बारे में लिखते हैं- जीवन की आपाधापी में 'व्यतीत' स्मृति की धरोहर होता है जिसे कोई संवेदनशील कवि कविता के अभिलेखागार में संजो लेने का सृजनात्मक प्रयास करता है। इसी के साथ बहुत-सा विस्थापन जुड़ा होता है- जगहों का, वस्तुओं का, स्थितियों का, व्यक्तियों और सम्बन्धों का भी, साथ ही नवस्थापन की भी समानांतर प्रक्रिया चलती रहती है। इस वर्तमान का व्यतीत के साथ एक द्वंद्वात्मक सम्बन्ध बनता है जो एक विडंबनात्मक विन्यास में कविता के रूप में मूर्त होता है। इस कविता संग्रह की अनेक कविताओं में कवि मनीष शर्मा की रचना प्रक्रिया में बीते हुए और उसकी जगह लेने वाले के बीच कवि मानस में निर्मित इन विडम्बनामूलक संयोजनों को साफ़ तौर पहचाना जा सकता है। जो 'था' और जो 'है' : उसकी कशमकश छोटी छोटी तफ़सीलों में बहुत मार्मिक ढंग से सामने आती है। ये कविताएँ पाठकों से संवाद कर सकेंगी।

000

पुस्तक समीक्षा

(दोहा संग्रह)

गतिविधियों की रेल

समीक्षक : ओम वर्मा

लेखक : रवि खंडेलवाल

प्रकाशक : श्वेतवर्णा प्रकाशन

ओम वर्मा
100, रामनगर एक्सटेंशन
देवास 455001(म.प्र.)
मोबाइल- 9302379199
ईमेल- om.varma17@gmail.com

रवि खण्डेलवाल पिछले 54 वर्षों से साहित्य साधना में रत हैं। समकालीन कविता से लेकर गीत, नवगीत, ग़ज़ल, मुक्तक एवं दोहों आदि सभी विधाओं में वे सतत रूप से सृजनरत हैं। यही नहीं, उन्होंने ब्रज भाषा में भी गीत, ग़ज़ल, दोहे व कई संगीत रूपकों का सृजन किया है। देश की अधिकांश महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं में वे निरंतर प्रकाशित होते आ रहे हैं। इससे पहले उनके 'उजास की एक किरण' व 'शब्द ही तो हैं' शीर्षक से दो समकालीन कविता संग्रह, कोरोनाकाल की त्रासदी पर आधारित कविताओं का संग्रह –'मौत का उत्सव', 'तज कर चुप्पी हल्ला बोल' शीर्षक से ग़ज़ल संग्रह व 'कागज की देहरी पर' शीर्षक से नवगीत संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इसके साथ ही कई सामूहिक संग्रहों में भी उनकी सहभागिता तथा रंगमंच पर सक्रियता भी रही है।

जैसा कि सब जानते ही हैं कि तेरह- ग्यारह मात्राओं की जमावट जिसे जनमानस में लोकप्रिय छंद 'दोहा' कहा जाता है, सबसे लघु, कबीर का सबसे प्रिय, अद्भुत मारक क्षमता वाला छंद जाना जाता है। 'दोहा' वास्तव में दोहकर पाया जाने वाला सार तत्त्व ही है, यानी कम से कम शब्दों में गहन अर्थ बोध। सूक्ति के रूप में कहें तो - 'सार- सार को गहि रहै, थोथा देइ उड़ाय।' प्रस्तुत पुस्तक 'गतिविधियों की रेल' उनका पहला दोहा संग्रह है जो दोहे की उक्त परिभाषा या पहचान की कसौटी पर पूरा खरा उतरता है। संग्रह उन्होंने अपने दिवंगत अग्रज श्री संतोष खण्डेलवाल जी को समर्पित किया है। भाई के प्रति उनका अनुराग इस दोहे से प्रकट होता है- लेश मात्र भी जब कभी, ग़म का होता भान। ख़ुशियों की देता सदा, भाई चादर तान॥

इस संकलन में रवि खण्डेलवाल जी ने पर्यावरण, प्रकृति, मानवीय संबंध, नवगीत व दोहों का रचनाकर्म, सम्मान वापसी, टीवी चैनलों की पक्षधरता, सांप्रदायिकता, कोरोना, युद्ध, दलबदल, आदि कई विषयों को अपने दोहों का कथ्य बनाया है। सभी उदाहरण देना तो संभव नहीं है मगर कुछ चुनिंदा दोहों की झलक देखी जा सकती है।

पंच तत्व में लीन हम, कुदरत के आधीन। कुदरत को मत छेड़िए, बने रहें शालीन॥
(प्रकृति और पर्यावरण)

चैनल हिंदुस्तान के, चला रहे सरकार। सारे निर्णय हो रहे, चैनल पर हर बार॥
(टीवी चैनलों की पक्षधरता)

शब्दों से किंचित नहीं, घबराती सरकार। पर कविता की मार के, आगे जाती हार॥
(कवि का काव्य शक्ति पर विश्वास)

नाटो अरु यू एन पर, किसका 'रवि' स्वामित्व। दोनों ही बिल में घुसे, दिखा नहीं अस्तित्व॥
(युद्ध और अंतरराष्ट्रीय राजनीति)

जब तक रहे विपक्ष में, ई डी ने की जाँच। सत्ता दल के जब हुए, कभी न आई आँच॥
(दलबदल)

ई वी एम मशीन पर, होता सदा विवाद। पहले सदा चुनाव से, फिर चुनाव के बाद॥
(ईवीएम की पवित्रता पर उँगली उठाने वालों पर तंज़)

कवि की दोहों की रचना-प्रक्रिया को लेकर दोहे के व्याकरण के मर्मज्ञ विद्वानों की असहमति हो सकती है। प्राचीन दोहाकारों ने 'न' के स्थान पर मात्रा की गणना में खरा उतारने के लिए कहीं 'ना' का और कहीं इन दोनों का प्रयोग किया है। इसी प्रकार पहले 'और' तथा 'एक' जैसे तीन मात्रा वाले शब्द के लिए दो मात्रा वाले 'अरु' व 'इक' शब्द का, तीन मात्राओं वाले 'नहीं' व 'कहीं' को मात्रा गिराकर दो मात्रा करने के लिए 'नहिं' व 'कहिं' का प्रयोग किया है। यही बात सम चरणों में प्रयुक्त होने वाले तुकांत को लेकर भी है। प्रतिष्ठित पत्रिका 'संवादिया' के दोहा विशेषांक में अपने लेख 'दोहे में तुकांत' में प्रख्यात दोहाकार व समीक्षक राजेंद्र वर्मा जी ने दोहे के दूसरे और चौथे चरण में तुकांत में अक्सर की जाने वाली त्रुटियों पर कई उद्धरणों के साथ

प्रकाश डाला है। राजेंद्र वर्मा जी ने लिखा है कि – 'इसे पढ़कर हमें ज्ञात होता है कि तुकांत के मामले में कभी-कभी तो कुछ जाने-माने कवियों से भी कैसी चूक हो जाती है-

वाणी के सौंदर्य का, शब्द रूप है काव्य।
मानव होना भाग्य है, कवि होना सौभाग्य॥

राजेंद्र जी ने के अनुसार 'यहाँ 'काव्य' का तुक 'सौभाग्य' से मिलाया गया है जो ग़लत है। इसका तुकांत 'संभाव्य' या अन्य कोई शब्द, जिसका अंत 'आव्य' से होता हो, हो सकता है।' प्रसंगवश बताना चाहूँगा कि यह दोहा प्रख्यात कवि नीरज जी का है जिनके दोहा शिल्प पर कोई सतही ज्ञान रखने वाला दोहाकार तो टिप्पणी करने की जुर्अत कर ही नहीं सकता। इस तकनीकी त्रुटि की ओर ध्यान दिलाने के लिए जो अध्ययन और चिंतन चाहिए, वह राजेंद्र वर्मा जी के पास है। मेरी जानकारी में नीरज जी ने दोहे की शुरुआत 'वाणी' शब्द से नहीं, बल्कि 'आत्मा' शब्द से की है। रवि खंडेलवाल ने इस तरह के प्रयोग कई दोहों में किए हैं। यहाँ मैं संग्रह से सिर्फ़ दो उदाहरण देना चाहूँगा- सतरंगी बिखरी छटा, अनुपम रवि अहसास। जी करता है चूम लूँ, बढ़कर मैं आकाश॥

देना है यदि आपको, कोरोना को मात। सैनिटाइजर से करें, साफ़ स्वयं के हाथ॥

अहसास का तुक आकाश से व मात का तुक हाथ से मिलाया गया है जो राजेंद्र वर्मा जी व डॉ. ब्रह्मजीत गौतम जैसे व्याकरणाचार्यों के अनुसार त्रुटिपूर्ण है। यहाँ रवि खण्डेलवाल जी ने ऐसा जान-बूझकर किया है। इस बारे में वे संग्रह में 'मेरी अपनी बात' शीर्षक से लिखे गए अपने आत्मकथ्य में क्या कहते हैं, यह जानना उचित होगा-

'हिन्दी दोहा के सिरमौर हमारे पुरखों ने तुकांत को लेकर भी उदार दृष्टिकोण अपनाया है। वर्ण वर्ण के अंतर्गत ध्वनि साम्य वर्ण क ख, त थ, च छ, ज ज़ झ, प फ फ़, श स ष आदि के प्रयोग से कभी परहेज़ नहीं किया यथा-

अवगुण कहूँ शराब का,
आपा अहमक़ साथ।
मानुष से पशुआ करे,
दाय गाँठ से खात॥ (कबीर)

पहले चारा चर गए, अब खाएँगे देश।
कुर्सी पर डाकू जमे, धर नेता का भेष॥ (नीरज)

यही नहीं, रवि खण्डेलवाल जी ने कई दोहों में तुकांत में उन्हीं वर्णों (अनुरूप-कुरूप, विद्वान-नादान, सपूत-कपूत, सम्मान-अपमान, नीति-रणनीति, कार-सरकार, सवार-वार, धर्म-अधर्म...) का उपयोग किया है। इसे भी उक्त वर्णित व्याकरणाचार्य वर्जित मानते हैं। इस पर रवि खण्डेलवाल जी का कहना है कि-

'कबीर ने तुकांत के कारण अपनी अभिव्यक्ति को कभी मरने नहीं दिया। उसी का परिणाम है कि अपने कथ्य/विचार के कारण ही जन सामान्य में ये दोनों दोहे आज भी हम सबकी ज़ुबान पर चढ़े हुए हैं-

माला फेरत जुग भया,
फिरा न मन का फेर।
कर का मन का डार दे,
मन का मनका फेर॥
बुरा जो देखन मैं चला,
बुरा न मिलिया कोय।
जो मन देखा आपना,
मुझ से बुरा न कोय॥

रवि जी के अनुसार अगर कबीरदास जी ने तुकांत में बदलाव किया होता तो शायद वैचारिक भाव के इन दोहों से हम सदैव के लिए वंचित हो जाते...भाषा के प्रति भी हमें ख़ासकर आलोचकों को संकीर्ण दृष्टिकोण न अपनाकर उदार और व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा, जैसा कि हमारे दोहाकार पुरखों ने अपनाया। कहा जा सकता है कि रवि जी ने परंपरा से विद्रोह न कर एक नया ट्रेंड स्थापित करने का प्रयास किया है। अपनी बात के पक्ष में वे दोहों के पर्याय बन चुके कबीर जैसे प्राचीन दोहाकारों का सशक्त उदाहरण भी दिया है। बहस अपनी जगह है। इससे दोहों का महत्त्व कहीं भी कम नहीं होता। कथ्य के पैनेपन के कारण यह दोहा-संग्रह निसंदेह पठनीय व संग्रहणीय बन पड़ा है।

000

नई पुस्तक

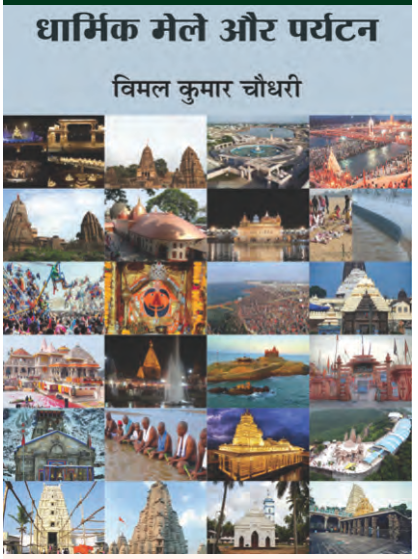

(निबंध संग्रह)

धार्मिक मेले और पर्यटन

संपादक : विमल कुमार चौधरी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

देश भर के धार्मिक स्थलों तथा वहाँ लगने वाले मेलों की जानकारी प्रदान करने वाली यह पुस्तक शिवना प्रकाशन से कुछ दिनों पूर्व ही प्रकाशित होकर आई है। इस पुस्तक के बारे में स्वयं लेखक लिखते हैं- इन प्रतिबद्ध और समयबद्ध मेलों के आयोजनों के निमित्त विभिन्न प्रदेशों में भिन्न-भिन्न पर्वों या त्यौहारों पर आयोजित होने वाले मेले जिन नियत समय और स्थान पर तय रहते हैं, उसके लिए किसी भी व्यक्ति या समूह को किसी निमंत्रण अथवा आमंत्रण की आवश्यकता नहीं होती है। इन मेलों का आयोजन और उसमें सभी की सहभागिता स्वस्फूर्त होती है। उस मेले को सफल बनाने की कार्य-योजना का प्रबंधन, आवश्यकताएं और मेले का दौरान आवश्यक सुविधाओं का प्रबंधन समाज के कर्मठ और क्रियाशील तथा प्रभावकारी व्यक्तित्व के धनी, भू-स्वामी या शासकीय-प्रशासकीय स्तर पर आवश्यकता का आँकलन कर व्यवस्थाएँ की जाना सुनिश्चित किया जाता है। धार्मिक मेलों को लेकर अधिकाधिक जो बन सका आपकी धार्मिक यात्रों और और पर्यटन की दृष्टि से इस किताब में सँजोया है।

000

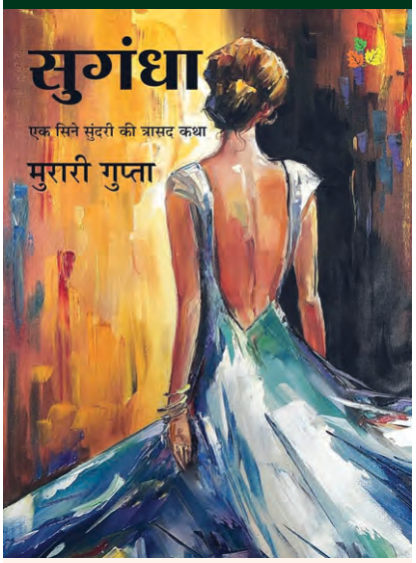

(उपन्यास)

सुगंधा- एक सिने सुंदरी की त्रासद कथा

समीक्षक : डॉ. रेवन्त दान
लेखक : मुरारी गुप्ता
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545
मोबाइल- +91-9806162184
ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

डॉ. रेवन्त दान
बी- 205, डी-2, AWHO फ्लैट्स, शैतान सिंह विहार, सैक्टर-1, विद्याधर नगर, जयपुर- 302039
मोबाइल- 9256960337

फ़िल्म, बॉलीवुड, हिन्दी सिनेमा, फ़िल्मी कलाकारों की ज़िंदगी पर बहुत कुछ लिखा गया है। फ़िल्में ऐसा माध्यम है जिसके ज़रिये पूरी दुनिया में भारत पहुँचता है। यहाँ का गीत, संगीत, परंपराएँ, भाषा, लोक जीवन, राजनैतिक और सामाजिक जीवन। लेकिन फ़िल्में सिनेमा जगत् का वह चेहरा है, जिसे लोग बाहरी तौर पर देखते हैं। मगर एक और चेहरा है, जो परदे के पीछे रहता है, जिससे बहुत कम लोगों का वास्ता पड़ता है। परदे के पीछे के चेहरे में अनेक और कई तरह के चेहरे होते हैं। इन चरित्रों में कई तरह रहस्य तथा साज़िशें छिपी रहती हैं। समय समय पर समाचार पत्र, पत्रिकाओं में समाचारों के तौर पर तो कभी आलेखों के तौर पर उन रहस्यों का थोड़ा बहुत खुलासा होता भी रहता है। परदे के पीछे की दुनिया में ऐसे सैंकड़ों चरित्र होते हैं, जिनकी हज़ारों कहानियाँ होती हैं।

उपन्यासकार मुरारी गुप्ता अपने पहले उपन्यास 'सुगंधा: एक सिने सुंदरी की त्रासद कथा' में ऐसी ही कुछ दिलचस्प कहानियाँ प्रस्तुत करते हैं। उनका यह उपन्यास वैसे तो एक अभिनेत्री की संघर्ष की कहानी कहता हुआ आगे बढ़ता है लेकिन असल में यह सिनेमा जगत् के उस स्याह चेहरे को सामने रखता है जिसमें सिनेमाई दुनिया का अंडरवर्ल्ड और आतंकवाद का रिश्ता और परदे की दुनिया से आतंकवाद और अंडरवर्ल्ड के फलने फूलने की कहानियाँ हैं।

उपन्यास की शुरुआत होती है एक तमिल अभिनेत्री सुगंधा सुंदरम की मौत से। अमरीका में इलाज के दौरान हुई सुगंधा सुंदरम की मौत भारत में अभी तक रहस्यमयी बनी हुई है। बहुत कम उम्र में सुंगधा की मौत ने पूरे सिनेमा जगत् और भारत के खुफिया तंत्र को सदमे में डाल दिया था। भारत के एक प्रमुख राजनेता की टिप्पणी के माध्यम से उपन्यासकार मुरारी गुप्ता इस कहानी को आगे बढ़ाते हैं और सुगंधा सुंदरम के तमिल फिल्म इंड्रस्ट्री से मुंबई आने और हिन्दी सिनेमा में ख्याति अर्जित करने की उसके संघर्ष को उसी की ज़ुबानी लिखते हैं। इस कहानी के सूत्रधार हैं फिल्म पत्रकार आशीष पटनायक जो अभिनेत्री की लिखी डायरी के माध्यम से सुगंधा की कहानी को कहते हैं। आत्मकथा के रूप में आगे बढ़ती सुगंधा की कहानी पाठकों को आख़िर तक बाँधकर रखती है।

उपन्यास की नायिका सुगंधा एक घटनाक्रम में खाड़ी मुल्कों में चरमपंथियों के हाथों की कठपुतली बन जाती है। उसे वहाँ टेरर फंडिंग के लिए मल्टीनेशनल शोज करने को मजबूर किया जाता है। इसी दौरान एक सौदेबाजी में उसे अंतरराष्ट्रीय आतंकी संगठन के सरगना सुलेमान को सौंप दिया जाता है, जहाँ उसे आतंकी लड़ाकाओं के मनोरंजन के लिए शोज करने पड़ते हैं। सुलेमान सुगंधा की लोकप्रियता को हथियार बनाकर हिंदुस्तान में जेहाद के नाम पर लड़कियों को खाड़ी मुल्कों में लाने की योजना बनाता है। सुगंधा ख़ुद को सुलेमान की क़ैद से मुक्त होने की भरपूर कोशिश करती है, लेकिन इस कोशिश में एक बार फिर अंडरवर्ल्ड की ज़ंजीरों में उलझ जाती है। यहाँ बचकर अमरीका पहुँचने की सुगंधा की कहानी एक नया मोड़ लेती है।

खाड़ी मुल्कों में सुलेमान की गिरफ्त के दौरान सुगंधा को चरमपंथी गुटों का आश्चर्य में डालने वाली साज़िश का पता चलता है। सुगंधा अपनी ख़ूबसूरती और अरबी ज़ुबान का फ़ायदा उठाकर सुलेमान से वह सब उगलवा लेती है, जिसकी जानकारी सिर्फ सुलेमान की तंजीम के टॉप कमांडर को थी। सुलेमान ने उसे अपनी उन योजनाओं के बारे में बता देता है कि उनके संगठनों ने किस तरह दर्जनों अफ्रीकी मुल्कों को दारुल इस्लाम कन्वर्ट किया तथा यूरोप, अमेरिका और दक्षिण एशियाई देशों को दारुल इस्लाम में तब्दील करने के लिए उसकी तंजीमों के पास किस तरह के हथियार और योजानाएँ हैं। सुलेमान कश्मीर घाटी में आतंक के जरिए वहाँ से बहुसंख्यक समुदाय को बेदखल करने की साज़िशों पर बात करता है। सुगंधा को सुलेमान की क़ैद के माध्यम चरमपंथियों की साज़िशों की एक नई दुनिया का पता चलता है। और यहीं से सुगंधा भी अपना एक नया टारगेट तय करती है। सुगंधा सुलेमान के हरम में क़ैद कई मुल्कों की सैक्स स्लेव लड़कियों की मदद से सुलेमान की हत्या की योजना बनाती है। लेकिन क्या सुगंधा सुलेमान की हत्या करने में कामयाब होती है? या वह ख़ुद ही शिकार हो जाती है? इन सवालों के जबाव पाठक ख़ुद उपन्यास पढ़कर जान सकता है।

अपने युवा प्रेमी प्रयाग शम्स को लिखे पत्रों में वह हिन्दी सिनेमा के नेक्सस का भी खुलासा करती है। खाड़ी मुल्कों से लिखे पत्रों में वह बताती है कि किस तरह दशकों से हिन्दी सिनेमा में एक ख़ास किस्म का नेक्सस काम कर रहा है, जिसका उद्देश्य हिंदुस्तानी परंपराओं, भारत के लोकतंत्र, भारत की सामाजिक व्यवस्था और सिस्टम पर लगातार प्रहार करना है। सुगंधा अपनी डायरी में लिखती है कि कैसे मुंबई में गीतकार से लेकर पटकथा लिखने वाले ख़ास किस्म के लोग जान बूझकर हिंदू परंपराओं को निशाना बनाते थे। और यह काम पिछले कई दशकों से हो रहा था। वैसे आज भी हालात बहुत बदले नहीं है। आज भी भारतीय समाज के लिए आराध्य राधा बॉलीवुड के लिए सैक्सी राधा ही है। उनके कुत्तों और नौकरों के नाम अब भी रामू ही रखे जाते हैं। उनकी मजाल नहीं कि कोई स्क्रिप्ट राइटर फिल्म में कुत्ते का नाम अब्दुल या रहमान रख दे।

बहरहाल, वापस उपन्यास की ओर बढ़ते हैं। कई सालों से पत्रकारिता कर रहे उपन्यासकार मुरारी गुप्ता ने लंबे समय तक राजस्थान में फिल्म पत्रकारिता भी की है। लिहाजा उपन्यास में उनकी लिखने और संवाद की शैली में यह विधा जाहिर भी होती है। वैसे उनके इस पहले उपन्यास का मूल तत्व प्रेम कथा है, और प्रेम कथा को अपने चरम तक पहुँचाने में उपन्यासकार ने ख़ूब मेहनत की है। उसके लिए कई तरह की पगडंडियाँ बनाई हैं। इन पगडंडियों पर चलते हुए पाठक अनुभव करता है कि अपने प्रेम के पाने के लिए दोनों को कितनी जद्दोजहद करनी पड़ती है। दोनों की प्रेम कथा में अचानक आया तूफ़ान सुगंधा को भीतर से कमज़ोर कर देता है। सुगंधा और उसके युवा प्रेमी प्रयाग शम्स के बीच प्रेम की धारा एक दूसरे के पत्रों के जरिए बहती है। प्रयाग शम्स मुंबई में टीवी और फिल्म जगत् में संघर्ष कर रहा है। दोनों सुगंधा की ही एक मशहूर फिल्म में एक साथ काम कर नजदीक आए थे। लेकिन सुगंधा की क़िस्मत उसे खाड़ी मुल्कों में ले गई थी और प्रयाग मुंबई में संघर्ष कर रहा था। प्रयाग शम्स ने अपनी अधूरी प्रेम कहानी को पूरा करने के लिए सुगंधा को कई जगह तलाशता है। मगर, क्या प्रयाग का सुगंधा से फिर से मिलन हुआ? इस बात का जबाव तो उपन्यास को पढ़ने के बाद ही मिलेगा।

बहरहाल, भारतीय सूचना सेवा में कार्यरत और पिछले कई वर्षों से पत्रकारिता और लेखन में निरंतर सक्रिय मुरारी गुप्ता का पहला उपन्यास 'सुगंधा' पाठकों की कसौटी पर खरा उतरा है। यह सिर्फ वैचारिक उत्तेजना ही पैदा नहीं करता, बल्कि फ़िल्मी रील की तरह की कहानी होने से यह उपन्यास सभी उम्र के पाठकों को रोमांचित करता है और गुदगुदाता भी है। नई शैली में लिखा गया यह उपन्यास अलग पहचान बनाने में सफल होगा।

000

नई पुस्तक

(आलेख संग्रह)

ग्रामीणों के संघर्ष और सफलता की यात्रा

संपादक : भालचन्द्र जोशी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ पत्रकार रूबी सरकार के ग्रामीण पत्रकारिता पर आधारित आलेखों का संग्रह हाल में ही शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस पुस्तक में रूबी सरकार द्वारा समय-समय पर लिखे गए आलेखों का संकलन किया गया है। वरिष्ठ पत्रकार विजय दत्त श्रीधर इस पुस्तक को लेकर लिखते हैं- रूबी सरकार मध्यप्रदेश के गाँवों में घूमी हैं। नकारात्मक और सकारात्मक समाचारों के सिरे पकड़कर रिपोर्ट लिखी हैं। अखबारों में उनका प्रकाशन कराया है। इस तरह एक दृष्टांत प्रस्तुत किया है कि पत्रकारिता का एक महत्वपूर्णपक्ष यह भी है। इस आलेख संग्रह के प्रकाशन से यह संभावना बनती है कि शहरी पत्रकारिता में ही डूबे पत्रकारों की निगाहें असली भारत की ओर घूमेंगी। उनकी लेखनी और कैमरे उस भारत के लिए चलेंगे जो वास्तव में इस देश की आत्मा है और रीढ़ की हड्डी भी है। युवा पत्रकारों और पत्रकारिता के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी है। सार्वजनिक जीवन में सक्रिय कार्यकर्ताओं के लिए भी काम की है।

000

पुस्तक समीक्षा

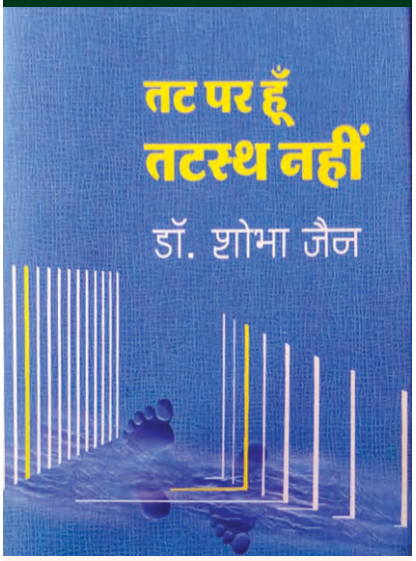

(कविता संग्रह)

तट पर हूँ तटस्थ नहीं

समीक्षक : शैलेन्द्र शरण

लेखक : डॉ. शोभा जैन

प्रकाशक : अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली

शैलेन्द्र शरण
79, रेलवे कॉलोनी, आनंद नगर
मप्र 450001
मोबाइल- 8989423676
ईमेल- ss180258@gmail.com

कविता कल्पना, विचारों तथा शब्दों के प्रभावी तालमेल से बनती हैं। कविता भावों की वो शृंखला है जो मन से मन को जोड़ने का कार्य करती है। पब्लो नेरुदा ने इस संबंध में कहा है कि 'कविता शब्दों का वह पंछी है जो स्वतन्त्रता के आकाश में उड़ता है'।

एक अच्छा कवि बहुत हठी होता है और कविता लिखते समय अपने विवेक और शक्ति के अतिरिक्त किसी और की नहीं मानता। वर्तमान कविता को पाठकों से जोड़ने के लिए कवि अपनी तरफ से कुछ न कुछ अलग करता ही है किन्तु पाठकों को भी कविता से जुडने के लिए कुछ अपनी तरफ से जोड़ने का विकल्प खुला रखना पड़ता है। जब एक स्त्री कविता लिखती है तो वह कठोर नहीं हो पाती इसलिए पाया गया है कि स्त्री की कठोरतम भावों की अभिव्यक्ति भी कोमलता लिए होती है। उसकी गंभीर कविताएँ करुणा से परिपूर्ण होती हैं।

डॉ. शोभा जैन का कविता संग्रह 'तट पर हूँ तटस्थ नहीं' नाम से यह मूल संग्रह आया। इसका नाम अब 'तट के पाथर' किया जाकर पेपर बैक में आया है।

यह संग्रह कोमल भावों की गंभीर अभिव्यक्ति है। इस संग्रह की कविताएँ मात्र स्त्रीबोध और स्त्रीविमर्श की कविताएँ नहीं हैं। इन कविताओं के कैनवास पर मनुष्यता के सम्पूर्ण चित्र विभिन्न रंगों और भंगिमाओं में दिखाई पड़ते हैं। ये कविताएँ खोते जा रहे अर्थों को पाने की वह कोशिश है जिसमें कठोर होती जा रही इंसानियत के भीतर मृतप्राय: मानुष-भाव को पुनर्स्थापित की मंशा है। बावजूद इसके आत्मकथ्य में डॉ. शोभा जैन लिखती हैं कि 'यह पूरा सच है कि मैं कविता नहीं लिखती और इसे सहज स्वीकारती हूँ कि यह विधा मुझसे सधती नहीं। फिर भी किसी दुस्साहस की तरह अपने आत्मकथ्य को इन कविताओं के रूप में सहेजा है जो यदा-कदा पत्रिकाओं से गुज़रते हुये, सोशल मीडिया पर चढ़ती-उतरती रही।' वे स्पष्ट कहती हैं 'कविता सब्र की विधा है, किन्तु मैंने बिना पारंपरिक समझ के इन कच्ची कविताओं के साथ इस विधा में दाखिला लिया है।' किन्तु अपने ही इस शब्दों को इस संग्रह की कविताओं से वे मिथ्या साबित कर देती हैं। इस संग्रह की कविताएँ यकीनन गंभीर चिंतन की कविताएँ हैं।

यह आम बात है कि एक आलोचक बहुत अच्छा कवि नहीं हो सका है किन्तु डॉ. शोभा जैन की कविताओं को पढ़कर ऐसा बिलकुल भी नहीं लगता। विलियम ब्लेक कहते हैं 'कविता ही वह दर्पण है जो हमें स्वयं को और दुनिया को बेहतर ढंग से समझने में मदद करती है।' इस आधार पर देखा जाए तो इस संग्रह की कविताओं में ख़ुद को समझने के प्रयास में कवि दुनिया को देखता भी है, समझता भी है और उसकी सटीक अभिव्यक्ति करने में सफल भी सिद्ध होता दिखाई पड़ता है। संग्रह की पहली ही कविता देखिए-

पुण्य कभी ठग नहीं सकता / .... वैभव की विडम्बना है / जितना धनी उतना ऋणी / हर सुख की एक वेदना है / हर नियति में कुछ परिहास / हर गोद में एक लोरी है / हर मौन में इक आव्हान।

इस कविता की पंक्तियाँ सूत्रों की तरह सामने आती हैं आरंभ से अंत तक लगभग प्रत्येक पंक्ति में एक स्वतंत्र विचार स्थापित है। यह कविता एक निष्कर्ष की तरह सामने आती है। अंतिम पंक्ति में वही कोमलता और करुणा व्याप्त है जिसकी चर्चा मेरे द्वारा ऊपर की पंक्तियों में कहीं की जा चुकी है।

डॉ. शोभा जैन सिर्फ इंसानी प्रवृत्तियों की पड़ताल नहीं करतीं बल्कि प्रकृति के स्वभाव तक जाने की चेष्टा करती हैं। 'उगने और झर जाने की नियति' और 'चट्टानों का एकालाप' कविताएँ इसी पड़ताल की कविताएँ हैं। इंसान की मनोदशा एक जैसी नहीं रहती। आस-पास और दुनिया में घट रहीं घटनाओं से अछूता कोई भी नहीं रह पाता। समाज में बहुतेरे लोग बोलकर अपनी व्यथा व्यक्त कर देते हैं किन्तु जब एक संवेदनशील इंसान बोल नहीं पाता है तो तब वह लिख लिया करता है। अपना विरोध दर्ज कराने का उसका यह एक अत्यंत प्रभावी माध्यम होता है। विगत वर्ष जैन तीर्थ को 'पर्यटन स्थल' घोषित कर दिये जाने का विरोध बहुत तरह से हमारे सामने आता रहा। अख़बारों के माध्यम से भी सामने आया। लेखिका ने भी किया होगा, विरोध किया जाना भी चाहिए। शीर्षक कविता 'तट पर हूँ तटस्थ नहीं' इसी धरातल पर दृढ़ता से सच्चाई बयाँ करती हुई, एक वैचारिक और महत्त्वपूर्ण कविता है जिसे पढ़कर क्षोभ उत्पन्न होता है।

'विभाजन' शीर्षक से संग्रह में एक कविता है, इस यूनिवर्स के विभाजन को डॉ. शोभा जैन अपने तर्कों से, विचारों से इस तरह सामने रखती हैं जिससे असहमत नहीं हुआ जा सकता। अब इस बात को कौन नहीं मानेगा कि 'आदमी ने धरती रख ली / विज्ञान ने आकाश /' उनके लेखन में ऐसी पंक्तियाँ जगत् की चिंता में कही ईमानदार पंक्तियाँ हैं।

इस संग्रह की कविताओं के रचाव में कोई आडंबर नहीं है, अलग से कुछ भर देने की कोशिश भी नहीं है इसलिए इन कविताओं में विचारों की सच्चाई भी है और इस दुनिया में स्थान-स्थान पर घट रहा यथार्थ भी है। यथार्थपरक कविताओं की उम्र अधिक होती है क्योंकि उसमें समय का इतिहास लिखा होता है। यदि यह यथार्थपरक कविता घटनापरक न हो और उसमें समग्रता हो तो ऐसी कविता की लंबे समय तक जीने की संभावनाएँ और बढ़ जाती हैं। गहन चिंतन और बोध की एक छोटी सी कविता है 'अपरिचित क्षण' यह कविता पढ़ते ही ठिठका देती है- 'इस विशाल उपवन में / फूल कब खिला / कब मुरझा गया / इसका पता / इसका पता किसी को नहीं लग पाता है।' इस कविता में ध्वनित अर्थ दूर तक ले जाते हैं। एकांत और अकेलेपन को बयाँ करने के लिए इससे बेहतर पंक्तियाँ मुश्किल प्रतीत होती हैं। एक कविता का उदाहरण और देना चाहता हूँ 'एक शब्द असहमति' इस कविता की कुछ पंक्तियाँ देखें 'भीड़ भरे शहर में / एक शब्द / असहमति भरा / अकेला खड़ा रहा..../ सभाओं, मंच पर थिरकते शब्द / श्मशान घाट से लौटते आदमी से / प्रतीत होते हैं।' यह आज का कटु सत्य है कि असहमति को स्वीकार नहीं किया जाता। इसी कविता में आगे डॉ. शोभा जैन लिखती हैं 'शायद इसीलिए कविता / कभी ख़त्म न होने वाली उदासी बन गई।' यह कविता वर्तमान के मर्म की पहचान करती है।

इस कविता संग्रह का एक और खंड है 'स्त्री के लिए जगह'। इस खंड में तेरह स्त्री केन्द्रित कविताएँ हैं। इन कविताओं का अपना अलग आस्वाद है। स्त्री विमर्श पर किसी भी स्त्री द्वारा जो कविताएँ लिखी जाती हैं वे गहन अर्थ लिए हुये होती हैं बनिस्बत पुरुषों द्वारा स्त्री-विमर्श की कविताओं के। इस खंड की कविताएँ मूल्यांकन की माँग करती हैं और अपना अलग नज़रिया सामने रखती हैं।

इस संग्रह की कविताओं में रचनाकार की अपनी अलग भाषा है, अलग शैली है, वैचारिक स्तर भी इतर। नई कविताओं में शिल्प का बंधन नहीं होता किन्तु शिल्प में गुंजाइश प्रतीत होती है। चूँकि इनमें लयबद्धता है अत: स्वीकार्य हैं। यह संग्रह समय-समय पर रचनाकार के करीब से गुज़रे अनुभवों, गहन अनुभूतियों और चिंतन की अभिव्यक्ति का संग्रह है। इसे पढ़ा जाना चाहिए।

000

नई पुस्तक

(प्रेम केंद्रित आलेख संग्रह)

प्रेम का घर : प्रेम की यात्रा

संपादक : भालचन्द्र जोशी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कथाकार भालचन्द्र जोशी के संपादन में शिवना प्रकाशन से यह प्रेम केंद्रित आलेख संग्रह हाल में ही प्रकाशित होकर सामने आया है। इसमें मृदुला गर्ग, विजय बहादुर सिंह, अनामिका, विनोद शाही, वसंत निरगुणे, राजीव श्रीवास्तव, राकेश बिहारी, बजरंग बिहारी तिवारी, नीरज खरे, अजय वर्मा, अमिता नीरव, अनुराधा गुप्ता, डॉ. अनीता, शोभा जैन के प्रेम केंद्रित लेख संकलित हैं। पुस्तक के बारे में स्वयं भालचन्द्र जोशी लिखते हैं- प्रेम कहानियों में एक काव्य (कोमल) भाषा की जरूरत इसलिए बताई जाती है कि संवेदना के साथ इस भाषा का युग्म व्यक्ति की स्मृतियों का दरवाज़ा खोलता है। जहाँ भाषा की सहज निरन्तरता अनुभव के लिए अर्थ तलाशती है। उस छिपे अर्थ को प्रकट करती है। प्रेम कहानी सुख के सपने में दुख को पहचानने की कोशिश है। वह यथार्थ और सपने के जोड़ के भीतर तक ले जाती है। कुछ परतें भाषा खोलती है, कुछ पाठक के श्रम के लिए छोड़ देती है, ऐसी कहानियाँ और ज्यादा असरदार होती हैं। इस पुस्तक में प्रेम के विविध वर्ण प्रकट करने की कोशिश है ।

000

पुस्तक समीक्षा

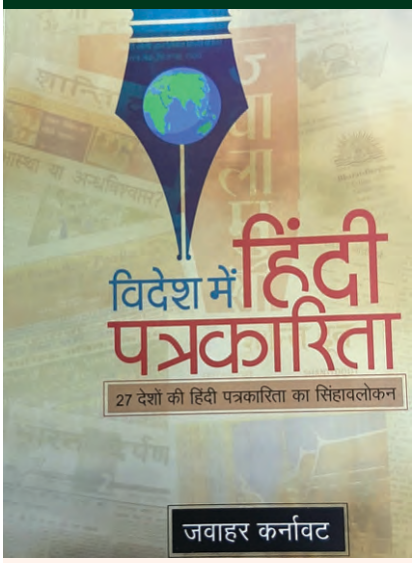

(शोध)

विदेश में हिंदी पत्रकारिता

समीक्षक : डॉ. पिलकेन्द्र अरोरा
लेखक : जवाहर कर्नावट
प्रकाशक : नेशनल बुक ट्रस्ट

डॉ. पिलकेन्द्र अरोरा
आभार, आज़ादनगर
उज्जैन 456010 मप्र
मोबाइल- 9893441760

आज़ादी के 77 वर्षों बाद भी हिन्दी भले राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित नहीं हो पाई है, पर अपनी सरलता और ग्राह्यता के कारण वह आज जन- जन के मन, बुद्धि और आत्मा की भाषा है। यही नहीं रोज़गार, व्यवसाय के लिए विदेश जाकर बसने वाले भारतीयों ने भी हिन्दी की यश और कीर्ति का परचम फहराने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इस योगदान का माध्यम बनी हैं विदेशों में हिन्दी पत्रकारिता की गौरवशाली यात्रा। प्रबुद्ध भारतवंशियों की सामाजिक संस्थाओं ने जहाँ जनचेतना जागृत करने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया वहाँ साहित्यिक संस्थाओं ने भाषा, साहित्य और संस्कृति के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से पत्रकारिता को समृद्ध किया। इन समर्पित प्रयासों से विश्व के कई देशों में हिन्दी भाषा और साहित्य भी समृद्ध हुआ और हिन्दी पत्रकारिता का महत्त्वपूर्ण विकास भी हुआ।

पिछले दिनों विदेशों में हिन्दी की गौरव यात्रा में हिन्दी पत्रकारिता की महती भूमिका से साक्षात्कार कराती एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक का प्रकाशन राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा किया गया। लेखक हैं वरिष्ठ भाषाविद, हिन्दी सेवी डॉ. जवाहर कर्नावट। पुस्तक विदेशों में हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास, वर्तमान स्थिति और उसके महत्त्व को रेखांकित करती है। तीन सौ पृष्ठों की पुस्तक को लेखक ने चार खंडों में विभाजित किया है। पहला खंड गिरमिटिया देशों में हिन्दी पत्रकारिता को समर्पित है जिसमें डॉ. कर्नावट ने मारीशस, दक्षिण अफ्रीका, फीजी, सुरीनाम, गवाना और त्रिनिदाद - टुबैगो में हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास और वर्तमान स्थिति का तथ्यपरक वर्णन किया है। दूसरा खंड उत्तरी अमेरिका और आस्ट्रेलिया महाद्वीप में हिन्दी पत्रकारिता पर केन्द्रित है जिसमें अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड हैं। तीसरा खंड युरोप महाद्वीप के देशों से संबंधित है जिसमें लेखक ने ब्रिटेन, नीदरलैंड, जर्मनी, नार्वे, हंगरी, बुल्गारिया और रूस में हिन्दी पत्रकारिता की स्थिति का चित्रण किया है। चौथे अंतिम खंड एशिया महाद्वीप के देशों में हिन्दी पत्रकारिता का समर्पित है जिसमें जापान, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत, कतर, चीन, सिंगापुर श्रीलंका आदि देशों में हिन्दी पत्रकारिता का वर्णन है।

इस संबंध में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि विदेश में हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास और वर्तमान स्थिति का वर्णन लेखक ने इतिहास की पुस्तकों के आधार पर नहीं किया है वरन विभिन्न महाद्वीपों के 27 प्रमुख देशों की यात्रा की है और महत्त्वपूर्ण तथ्यों को एकत्र कर उनका गहन अध्ययन, विवेचन और विश्लेषण किया है। यात्रा के दौरान लेखक ने विभिन्न देशों से पिछले 120 वर्षों में प्रकाशित 150 से अधिक पत्र -पत्रिकाएँ एकत्र कीं और उनकी विषय -वस्तु को अपने शोधपरक अध्ययन का आधार बनाया। पुस्तक के अंत में लेखक ने उन संस्थाओं और व्यक्तियों का नाम सहित आभार भी व्यक्त किया है। इसलिए इस शोधपूर्ण पुस्तक में शामिल सभी तथ्य वास्तविक हैं और शोधार्थियों और पत्रकारों के लिए उपयोगी हैं।

वस्तुत:विदेश में हिन्दी पत्रकारिता की इतिहास भारतवंशियों की विश्व-यात्रा के संघर्ष और प्रतिष्ठापन का इतिहास है। स्वतंत्रता पूर्व भारतीय मज़दूर मारीशस, फीजी, सूरीनाम आदि देशों में 'गिरमिटिया' के रूप में ले जाए गए और स्वतंत्रता पश्चात शिक्षा, रोज़गार और व्यवसाय की

दृष्टि से भारतीय अमेरिका, इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया आदि देशों की ओर आकर्षित हुए। विदेशों में स्थापित भारतीयों संस्थाओं-संगठनों ने भारतवंशियों में जनचेतना जागृत करने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू किया। प्रकाशन का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य हिन्दी भाषा, साहित्य और संस्कृति का प्रचार-प्रसार था। कई देशों में हस्तलिखित पत्रिकाओं, साप्ताहिक, मासिक पत्रों का चलन प्रारंभ हुआ जो कालांतर में प्रिंट स्वरूप में प्रकाशित होने लगे। कई देशों में राष्ट्रीय और धार्मिक चेतना जाग्रत करना भी प्रकाशन का लक्ष्य रहा।

पुस्तक की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि प्रत्येक देश में पत्रकारिता की चर्चा से पूर्व लेखक ने उस देश की भौगोलिक स्थिति, जनसंख्या आदि की प्रारंभिक जानकारी दी है और हिन्दी के विकास में उन देशों के रेडियो और टीवी आदि प्रसार माध्यमों के योगदान का भी चित्रण किया है। खंडों के हर उपखंड के अंत में संदर्भ के रूप में उपयोग किए गए पत्र-पत्रिकाओं के महत्त्वपूर्ण अंकों का भी उल्लेख है।

पुस्तक का एक आकर्षण है विदेशों की 24 पत्र -पत्रिकाओं के रंगीन-श्वेत श्याम चित्र जिन्हें डॉ. कर्नावट ने अपने अध्ययन का प्रमुख आधार बनाया है। इन चित्रों में मारीशस में 1835 से 1935 से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'दुर्गा' का भी दुर्लभ चित्र है। साथ ही 1914 में प्रकाशित होने वाली दक्षिण अफ्रीका की पत्रिका 'इंडियन ओपिनियन' का चित्र भी शामिल है। इसके अलावा फिजी के 'शांति दूत', सूरीनाम के 'सूरीनाम दर्पण' और 'हिन्दी नामा', त्रिनिडाड की 'ज्योति', अमेरिका के 'हिन्दी जगत्' और 'सौरभ', कनाडा की 'हिन्दी चेतना' और 'नमस्ते कनाडा', आस्ट्रेलिया की 'हिन्दी समाचार पत्रिका' और 'देवनागरी', न्यूजीलैंड की 'भारत दर्शन' और 'अपना भारत', ब्रिटेन के 'तसवीरी अख़बार' और 'पुरवाई', नीदरलैंड की हिदी 'प्रचार पत्रिका', जर्मनी की 'बसेरा', रूस की 'नई दिशा', 'भारत दर्पण', जापान की 'ज्वालामुखी' और 'जापान भारती'। इनके अलावा चीन की 'चीन सचित्र' और 'चीन भारत संवाद', तिब्बत के 'तिब्बत बुलेटिन', केन्या की 'हिन्दी संस्थान', नार्वे की 'दर्पण' हंगरी की 'प्रयास', म्यांमार की 'प्राची प्रकाश' ओर नेपाल की 'हिमालिनी' के चित्र शामिल हैं।

पुस्तक का एक और महत्त्वपूर्ण पक्ष है, उसकी सरल, सहज भाषा, प्रवाहमयी शैली और सुंदर प्रस्तुतिकरण। विविध चार खंडों के उपखंडों का शीर्षकों- उपशीर्षकों में विभाजित कर पठनीय और आकर्षक रूप दिया गया है। पत्र -पत्रिकाओं के संपादकों के कथनों को 'इटैलिक' रूप में प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक का उत्कृष्ट कलेवर, सुंदर मुद्रण भी प्रभावी है। पुस्तक की एक महत्त्वपूर्ण सीमा है जिसका उल्लेख स्वयं डॉ. कर्नावट ने भूमिका में किया है कि पुस्तक की सामग्री सूचनात्मक है। उसका भाषाई और पत्रकारिता की दृष्टि से विश्लेषण नहीं हो पाया है। वस्तुत: यह विषय इतना व्यापक है कि उसे एक पुस्तक में संपादित कर प्रस्तुत करना संभव ही नहीं है। वास्तव में यह शोधपूर्ण और महत्त्वपूर्ण पुस्तक पाठकों को हिन्दी पत्रकारिता के वैश्विक परिदृश्य से भलिभाँति परिचित कराती है। 'भूमिका' में माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान भोपाल मप्र के संस्थापक निदेशक पद्मश्री विजयदत्त श्रीधर ने पुस्तक के महत्त्व को रेखांकित करते हुए लिखा है कि हिन्दी सेवी जवाहर कर्नावट ने विभिन्न देशों की यात्रा कर तथ्य जुटाए हैं और पहले पहल एक ज़रूरी विषय का दस्तावेज़ीकरण करने की कोशिश की है। आने वाले समय में शोधार्थी इस विषय का विस्तार कर प्रामाणिक इतिहास का रूप प्रदान करेंगे।

हिन्दी भाषा के उन्नयन और विकास के लिए एक कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में समर्पित डॉ. जवाहर कर्नावट को इस महत्त्वपूर्ण और शोधपूर्ण पुस्तक के लेखन की बधाई और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास को पुस्तक को सुंदर और आकर्षक रूप में प्रकाशित करने के लिए साधुवाद।

000

नई पुस्तक

(शोध)

दण्ड से न्याय तक

लेखक : प्रवीण कक्कड़

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

भारतीय पुलिस तथा दण्ड विधान पर शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर यह पुस्तक अभी आई है। इसे राष्ट्रपति पदक प्राप्त पूर्व पुलिस अधिकारी प्रवीण कक्कड़ ने लिखा है। पुस्तक के बारे में स्वयं प्रवीण कक्कड़ लिखते हैं- पुलिसकर्मी भी देशभक्ति और जनसेवा के लिए अपनी पूरी ज़िंदगी लगा देता है, लेकिन उसके परिवार को सुविधाओं के नाम पर कुछ ख़ास नहीं मिलता। न तो उसके बच्चों के लिए विशेष बोर्डिंग स्कूल हैं न ही शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सुविधाएँ। इसके अलावा प्रशासनिक और राजनीतिक दबाव अलग है। मैंने अपनी ज़िंदगी में पुलिस को तीनों पक्षों की ओर से देखा और समझा है। पहला तो ख़ुद पुलिस सेवा में रहते हुए, दूसरा प्रशासनिक पदों पर दिल्ली और भोपाल में रहने के दौरान और तीसरा सक्रिय राजनीति क्षेत्र से नज़दीकी जुड़ाव में। मैंने इन अनुभवों से जाना कि कहाँ पुलिस से कितनी उम्मीदें की जाती हैं, कहाँ पुलिस सुधार ज़रूरी है और कहाँ पुलिस के लिए समाज की ओर से सहयोग ज़रूरी है।

000

पुस्तक समीक्षा

(कहानी संग्रह)

वांग छी

समीक्षक : डॉ. उपमा शर्मा

लेखक : मनीष वैद्य

प्रकाशक : सेतु प्रकाशन, नई दिल्ली

डॉ. उपमा शर्मा
बी-1/248, यमुना विहार
नई दिल्ली 110053
मोबाइल- 8826270597
ईमेल- dr.upma0509@gmail.com

कहानियाँ देश और समाज की वे वास्तविक तस्वीर होती हैं जिन्हें कथाकार संवेदनाओं की अथाह गहराइयों में डूब कर सृजित करता है। 'वांग छी' कहानी संग्रह से गुज़रते हुए मन अनायास ही कथाकार के पात्रों की पीड़ा से जुड़ जाता है। ये कहानियाँ उर्वर संवेदनाओं की उपज हैं जो पाठक के हृदय पर बहुत समय तक स्थान बनाये रहती हैं।

इस कहानी संग्रह की पहली कहानी 'खिरनी' पढ़ते हुए पाठक के भीतर खिरनी-सी ही मिठास अनायास घुल जाती है। बचपन कितना निश्छल और मासूम होता है। कथाकार ने कहानी को बड़े सुंदर बिम्बों से सजाया है। खिरनी चम्बल और मालवा में पाया जाने वाला छोटा-सा एक दुर्लभ फल है बिल्कुल प्रेम के सदृश। प्रेम पगी नायिका खिरनी की मिठास में डूबी रहती है और नायक की आँखें बचपन से ही रेस में प्रथम आने के सपने बुनती हैं। प्रेम-स्मृतियों की पूँजी सँभाले कथा नायिका जिसे प्रेम में नीम भी मीठा लगता है लेकिन ज़िंदगी की भाग दौड़ में अव्वल आने के लिए बहुत तेज़ी से दौड़ने वाला नायक जो अभी भी नायिका की कोमल भावनाओं के प्रति उतना ही संवेदनहीन है। इस कहानी में अधूरे प्रेम की कसक ग़लतान खिरनी की मिठास को नीम की कड़वाहट में तब्दील कर देती है और पाठक पर प्रेम में डूबी लड़की का जादू देर तक छाया रहता है।

सरहदों का बँटवारा किसी मनुष्य के जीवन को किस हद तक प्रभावित कर सकता है, इस बात का अहसास हमें संग्रह की शीर्षक कहानी 'वांग छी' में शिद्दत से होता है। दो सीमाओं में बँटे देश के व्यक्तियों का भी बँटवारा हो जाता है। इस लाइन के इस पार से उस पार जाने के नियम इतने सख्त हैं कि व्यक्ति चाह कर भी इस पार से उस पार अपनों से मिल नहीं सकता। वांग छी के घर दो देशों में बस गए लेकिन ज़रूरत पर वे सीमा-रेखाओं की बाधा से न इधर के हो पाते हैं न उधर के। वे एक भी जगह सही समय पर उपस्थित न रह सके। कैसी विडम्बना है कि अफ़सरों के दिल भी पत्थर के हो जाते हैं, जहाँ संवेदनाओं की कोई सुनवाई नहीं।

टॉल्स्टॉय के शब्दों में कथानक सदा जीवन के कोलाहल से, वर्तमान समय के जीवंत अंतर्विरोध से उत्पन्न होता है। यह किसी सामाजिक अंतर्विरोध के प्रकटीकरण की चाबी है। मनीष वैद्य की कहानियाँ इस कसौटी पर पूरी तरह खरी उतरती हैं। ये कहानियाँ जीवन की सहज घटनाओं से स्वाभाविक और अकृत्रिम रूप से संवेदनाओं को उथल-पुथल कर पन्नों पर उतरी हैं। इसीलिए ये कहानियाँ हमें बेहद प्रामाणिक लगती हैं, जैसे वे अपने ही आसपास घट रही कोई बात कह रहे हों। वे किसी भी तरह से कहीं अविश्वसनीय नहीं होती हैं।

इन कहानियों के कथानक यथार्थ और बदलते समय की परिस्थितियों से उपजे हैं। वो

तथाकथित विकास, तेज़ी से बदलते समय के गाँव, शहर, टैक्नोलॉजी और इससे पुराने व्यवसाय पर उत्पन्न हुआ संकट, दो देशों के बीच की सीमा-रेखा पर कड़वाहट से किसी व्यक्ति पर पड़ने वाले असर के माध्यम से बदलते समय की स्थितियों का लेखक चित्रण ही नहीं करते अपितु उन पर वैचारिक मत भी रखते हैं। इनकी कहानियों में राजनीति, समाज और जीवन की आलोचनात्मक व्याख्या है। ये कहानियाँ मनुष्य के दु:खों पर उँगली रखती हैं, जीवन को समझने का व्यापक दृष्टिकोण उत्पन्न करती हैं, इसलिए मनीष वैद्य लोकजन के बेहद लोकप्रिय कथाकार हैं। उन्होंने अपने इस नए संग्रह में शामिल कहानी चूहेदानी, एचएमटी 3511, कंधे पर घंटाघर, अगन मानुष, पहले जोड़, फिर घटाव फिर जोड़ और जुगलबंदी में विकास की अंधी दौड़ और टेक्नोलॉजी की वजह से पिछड़ते पुराने कारोबार के सतत ह्रास से लोगों की आजीविका पर उपजे संकट से विपन्न लोगों की मन स्थिति पर बख़ूबी क़लम चलाई है।

कहानी के बारे में इस्पहानी भाषा के महान् रचनाकार बोर्खेज ने लिखा है कि सृष्टि की रचना करने वाले ने सृष्टि के आरम्भ में ही कहानी लिख दी थी। हर दौर का लेखक उसे अपने-अपने ढंग से लिखता है।

इसी बात को चरितार्थ करते हुए मनीष वैद्य संवेदनशील कथाकार हैं। रूस-यूक्रेन के युद्ध की पीड़ा से उपजी संवेदनाओं को कथावस्तु बनाकर उन जैसा कथाकार ही 'स्कायलैब' जैसी संवेदनशील प्रेम कहानी लिख सकता है। युद्ध से पहले किसी को यूक्रेन जैसे छोटे देश में बहुत ज़्यादा दिलचस्पी नहीं थी लेकिन रूस के उसे युद्ध में तहस-नहस करने से देश-दुनिया के लोगों को यूक्रेन से एक विशेष लगाव हो गया। युद्ध में यूक्रेन के हताहत सैनिकों और मलबे के ढेर में बदलते शहरों को देख शायद ही कोई ऐसा संवेदनशील व्यक्ति होगा जिसकी आँखें नम न हुई हों।

मनीष वैद्य इन संवेदनाओं को रिजवाना के माध्यम से यूँ लिखते हैं 'कितनी सुंदर सलोनी है यह दुनिया लेकिन हमने आज इसे किस मुहाने पर लाकर खड़ा कर दिया है। उसने कभी दुनिया के नक्शे में यूक्रेन नहीं देखा, लिहाजा उससे उसका जुड़ाव कभी किसी रूप में नहीं रहा लेकिन अभी जब से रूस ने उसे नेस्तनाबूद करना शुरू किया है, यूक्रेन अनदेखा-अनजाना होते हुए भी उसके दिल के एक हिस्से में धड़कने लगा है।'

रिजवाना अपनी पोती रिजा के मोबाइल पर आए मैसेज को देख अनायास ही चालीस साल पहले के उन हालातों में पहुँच जाती है जब रूस और अमेरिका में उपग्रह भेजने की होड़ सी मच गई थी। स्काईलैब उपग्रह का टनों वजनी मलबा गिरने वाला था। लोग डरे-सहमे थे कि इतना भारी उपग्रह जिस जगह गिरेगा तो वहाँ के लोग बचेंगे भी कि नहीं। ऐसे हालातों में करीम और रिजवाना भी अपनी मोहब्बत को लेकर चिंतित थे। दोनों इस आसमानी आफ़त के गुज़रने के बाद एक होने का सोच रहे थे। आसमानी आफ़त एक निर्जन स्थान पर गिर गई। दुनिया बच गई। जब करीम को पता चलता है रिजवाना की शादी कहीं और हो गई, स्काईलैब की आफ़त से बच गया लेकिन उसके प्रेम की दुनिया लुट गई। वह पूछना चाहता है -'क्या दुनिया बची रही? पर किससे पूछे?'

कहानी अपने दूसरे उत्कर्ष को छूती है जब रिजवाना को अंशुल में करीम नज़र आता है। दुनिया चाँद पर पहुँच गई। बहुत कुछ बदला लेकिन दो प्रेम करने वालों के हालात आज भी वैसे ही हैं। क्या बदला? कुछ भी तो नहीं।

शिल्पगत दृष्टि से इन कहानियों की भाषा सरल और जीवंत है। शैली और शब्द चयन एक निरंतर सृजनशील साहित्यकार की शैली का आनंद देते हैं। यद्यपि कुछ कहानियों की विषय वस्तु एक ही धरातल से ली गई हैं लेकिन कहीं भी दोहराव नहीं लगता। हर कहानी एक से बढ़कर एक लगती है। उनमें आम आदमी का डर, उसकी भावानुभूतियाँ बड़े ही मनोविश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत की गई हैं। निसंदेह यह एक उत्कृष्ट कहानी संग्रह है जो पाठकों के मन पर देर तक असर छोड़ेगा।

000

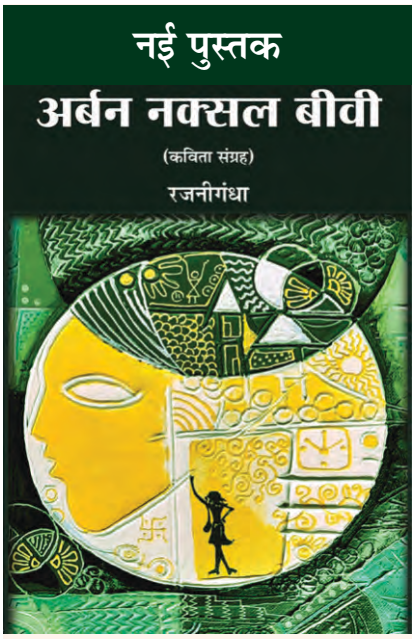

(कविता संग्रह)

अर्बन नक्सल बीवी

लेखक : रजनीगंधा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

रंगमंच तथा फ़िल्मों की गुणी अभिनेत्री रजनीगंधा का यह कविता संग्रह शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर कुछ दिनों पूर्व ही आया है। स्वयं रजनीगंधा इस पुस्तक के बारे में लिखती हैं- जबसे क़लम सँभाली तब से तो मानों मेरे दर्द को अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम यानी कविता मिली। जो दर्द मेरे भीतर आलोडित होते रहते थे उन्हें एक रास्ता मिला और इस तरह कविता लेखन शुरू हुआ। अपनी रचनाओं पर दृष्टिपात करूँ तो अब तक अनेक रचनाएँ लिख चुकी हूँ। ये कविताएँ असल में मेरे व्यक्तित्व का प्रतिबिंब हैं। मेरी कविताओं में आप अव्यवस्थाओं के प्रति आक्रोश मिलेगा, समाज को बदलने की कसमसाहट मिलेगी और साथ ही मिलेंगे क्रांतिकारी तेवर। हालाँकि कुछ लोग मानते हैं कि कविता को प्रेममय होना चाहिए लेकिन मेरा मानना है कि अगर कविता और साहित्य समाज का दर्पण हैं तो समाज में सिर्फ प्रेम ही नहीं वरन् अनेक विडम्बनाएँ भी हैं और ऐसे में कविता का दायित्व हो जाता है कि वह उन विडंबनाओं को उकेरे।

000

पुस्तक समीक्षा

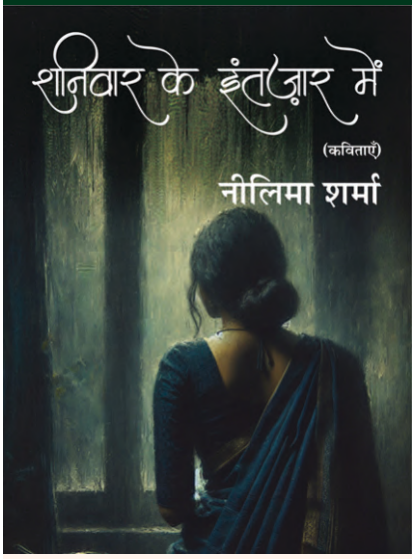

(कविता संग्रह)

शनिवार के इंतज़ार में

समीक्षक : ज्योत्स्ना कपिल

लेखक : नीलिमा शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

ज्योत्स्ना कपिल
18 ए, विक्रमादित्य पुरी, स्टेट बैंक कॉलोनी, बरेली 243005 उप्र
मोबाइल- 9412291372
ईमेल- jyotysingh.js@gmail.com

नीलिमा शर्मा, साहित्य का एक ऐसा जाना-पहचाना चेहरा बन चुकी हैं, जो गद्य, काव्य दोनों विधाओं में अपनी उपस्थिति पुरज़ोर तरीक़े से दर्ज करवा रही हैं। लघुकथा, कहानी और कविताओं में उनकी थाप की गूँज हर तरफ सुनाई दे रही है। यद्यपि नीलिमा शर्मा की अपनी पुस्तकें तो अभी सिर्फ दो ही आई हैं परन्तु वह अपनी क़लम की तीक्ष्णता से सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर चुकी हैं। उनकी पहली पुस्तक एक कहानी संग्रह 'कोई ख़ुशबू उदास करती है' था, जो साहित्य जगत् में ख़ासा सराहा गया। अब उनकी दूसरी पुस्तक एक कविता संग्रह है, जो अभी कुछ समय पूर्व ही शिवना प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है।

'शनिवार के इंतज़ार में' यह शीर्षक है नीलिमा शर्मा के संग्रह का, जो सुनने में मनभावन लगता है। नीलिमा शर्मा एक संवेदनशील रचनाकार हैं। उनकी रचनाओं में संवेदनाओं की महक होती है। उन्हें पढ़कर पाठक को अहसास हो जाता है कि लिखने वाला कैसे कोमल मन का व्यक्तित्व है। पुस्तक को पढ़ते और उसके पन्ने पलटते हुए, एक स्थान पर मन गीला हो गया। जहाँ वह बात करती हैं लड़कियों की, उनके प्रेम की, उनकी निष्ठा और समर्पण की। उसकी एक बानगी देखिये- और मैं उदास सा करवट बदलता हुआ / याद करता हूँ सिर्फ़ एक जिस्म जिस्म जो दिन रात मेरे इर्द-गिर्द / घूमता हैं एक निश्चित परिधि में बिना अपना ख़्याल किये / यह लड़कियाँ कितनी कमज़ोर होती है / कमबख़्त होती हैं / कितना भी दुत्कारो और फिर पुचकारो / सावन की झड़ी सी बरसती रहती हैं / बस एक पल के सानिंध्य के लिए।

पढ़कर लगा सचमुच ऐसी ही तो होती हैं लड़कियाँ।

इसके बाद दृष्टि ठहरी एक पृष्ठ पर जो माँ के नाम था। माँ जब होती है तो उसकी ममता का अनुभव तो हम करते हैं, ज़िद करते हैं रूठते हैं। परन्तु माँ का अदृश्य होना ही हमें अहसास करवाता है कि वह क्या थी, उसके न रहने पर अपनी अपूरणीय क्षति का अहसास होता है - माँ बिन मायका / माँ तेरे घर का एक कोना / जहाँ छुपा कर गई थी मैं / अपने लड़कपन की कुछ

खट्टी-मीठी यादें / और आज सुबह सवेरे उठ कर बाँध रही हूँ उनको / अपने मन के भीगे कोने से अपने आँचल में / कितना मुश्किल होता है न माँ के बिना मायके आना / और रात भी रह जाना / न नींद आती है और न ही चैन / मन बावरा मुँह अँधेरे उठ आँगन में चक्कर लगाता है।

बेटी से माँ के मन के तार जुड़े होते हैं। अपने मन के भाव जितना वह बेटी से साझा कर पाती है उतना किसी और से नहीं। ऐसे में जब विवाहित बेटी उसके पास ज़्यादा नहीं रह पाती तो क्या गुज़रती है माँ पर, और क्या गुज़रती है बेटी पर भी- माँ का मन / कुछ दिन रह जाओ न / कैसे कहा था न माँ ने उस शाम / मेरा हाथ थाम कर हौले से मुझे जाना है माँ / घर में ढेरों काम विलंबित हैं बेटे की ट्यूशन / और इनकी नौकरी / आप तो जानती हैं / औरत के बिना / घर कैसा हो जाता है / अपनी ही माँ को / अपने माँ होने की / मजबूरी बताती मैं / सामान समेटने लगी थी। / भूल गई थी / माँ कितनी भी / उम्रदराज हो जाए / पढ़ लेती है बेटी के / अनबोले जज़्बातों को / कितना मुश्किल होता है / माँ के घर से यूँ लौटकर आना / माँ रुकने को कहे / और बेटी बनाए झूठा बहाना।

माँ-बेटी के ही संबंध पर एक और कविता है- शर्मिंदगी / नन्ही-नन्ही अँगुलियाँ / जब छूती हैं मुझे / अपने कोमल स्पर्श से / तब मेरे अन्दर कुछ / गर्म मोम सा बनकर बहता है / याद आता है मुझे माँ से किया हर ग़लत व्यवहार / भावनात्मक अत्याचार / तब माँ ने मूक आँखों से कहा था / जा तू भी माँ बन और जान / अपने माँ होने के दर्द को / सुकून को / आज माँ हैं / पर मेरे पास लफ़्ज़ नहीं अपनी शर्मिंदगी के सिवा।

कितना मुश्किल होता है एक लड़की के लिए जब वह अनजाने में किसी दहशतगर्द से जुड़ जाती है। कितनी पीड़ा वह अपने नाम कर लेती है, कुछ इन्ही जज़्बातों को उन्होंने उतारा है - मैंने वहीं धोयी थीं / सब यादें / वहीं तोड़ी थीं / तुम्हारी लायी चूड़ियाँ / वहीं बहाया था / टुकड़े-टुकड़े कर के दुपट्टा / तुम्हारे ही नाम को सुनकर / बुक्का फाड़ कर रो लेने के बाद / टीवी पर दहशतगर्दों की लिस्ट में!

नीलिमा शर्मा की क़लम सिर्फ एक नारी के मन की अभिव्यक्ति ही नहीं करती, बल्कि वह पुरुष के मन की बात भी करती हैं- स्वीकारोक्ति / रोते नहीं हैं पुरुष / मैं भी कहाँ रो रहा हूँ / बरसात है यह तो / और मैं इसमें अपने / अंदर के घाव धो रहा हूँ / मवाद सी भर गई है इन में किसी की यादों की। / चीत्कारे हैं / स्पंदन है / और है असीम वेदना भी / इसलिए इस ठंडी भीगी बारिश में / ख़ुद को भिगो रहा हूँ। / रोते नहीं है पुरुष / मैं भी कहाँ रो रहा हूँ!/

इंतज़ार पर उनकी क़लम चलती है तो कुछ यूँ कहती हैं- इंतज़ार / दफ़न कर दी है / सभी बासी यादें / उम्मीदें कूट-कूट कर / भर ली हैं अब पोटली में / जिनका रंग गँदला हो चुका मौसमों की मार से / लेकिन अरमान भी अब सिसकते हैं / तलाईयों के नीचे कसमसाते हुए / तकियों को दिलासे देते हैं थपथपाते हुए / बरसों बरस पहले / कोई गया था कहकर / जल्दी लौट आने को / और चौखट लहूलुहान है खुरचे हुए नाखूनों के / गहरे निशानों से!

शीर्षक कविता 'शनिवार के इंतज़ार में' भी बहुत भावपूर्ण बन पड़ी है। पति से दूर विरहणी पत्नी का शनिवार का इंतज़ार बहुत सजीव बन पड़ा है- मन की गहराइयों तक / सोचते - सोचते मुझे / अपने ही साथ पा लेते हो / और सोचों में ही छा जाते हो फिर सोचों में ही / बेसुध होकर सो जाते हो / सुनो भी / अब तुम ही सोचो / तुम्हारे इस पहाड़ी शहर में बावरी सी मैं / किस तरह / रात भर / ताका करती हूँ / तुम्हारा सिरहाना / सिर्फ़ / और सिर्फ़ / शनिवार के इंतज़ार में.....

पुस्तक में नीलिमा शर्मा के भाव और कथन नितांत निजी से महसूस होते हैं। जिनमें घुसपैठ, मन को कुछ अपराधी सा भाव तो देती है, परन्तु पढ़ने के कौतुहल को भी नहीं रोक पाती। बहरहाल, एक सुंदर और भावपूर्ण संग्रह के लिए नीलिमा शर्मा को बधाई एवं शुभकामनाएँ। आपकी क़लम यूँ ही अविराम चलती रहे और पाठकों का दिल लुभाती रहे।

000

नई पुस्तक

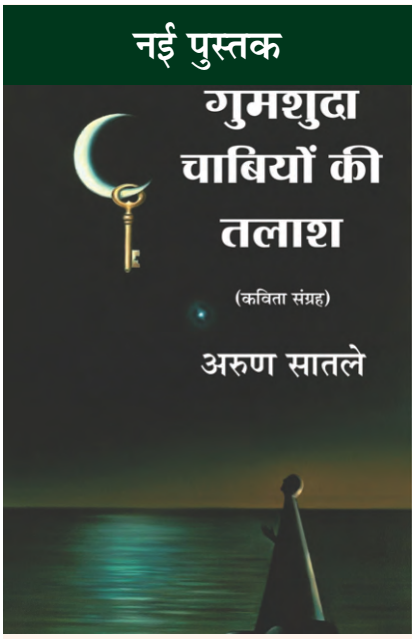

(कविता संग्रह)

गुमशुदा चाबियों की तलाश

लेखक : अरुण सातले

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कवि अरुण सातले का यह कविता संग्रह शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर हाल में ही सामने आया है। इस पुस्तक के बारे में कथाकार मनीष वैद्य लिखते हैं- अरुण सातले की कविताओं को पढ़कर पाठक संवेदना के स्तर पर इस तरह जुड़ जाता हैं कि उसे ये कवितायें अपने जीवन की महसूस होने लगती हैं। कविता यही विस्मय रचती है कि वह कब कवि से छूटकर पाठक के मन में रस-बस जाती हैं। अरुण सातले चुपचाप अपने एकांत में कविता रचने वाले कवि हैं। निमाड की सूखी धरती से आने वाला यह कवि अपने जीवन राग, प्रेम और करुणा की नमी से तर-ब-तर है। इनकी कविताओं में एक खास तरह की चमक, उम्मीद, आश्वस्ति है। ये कविताएं अपने समय के जरूरी सवालों से रूबरू होती सम्पन्न जीवन दृष्टि देती है। लोक जीवन, इसका संघर्ष, इसकी सांगितिकता, रागात्मकता लगभग हर कविता में अन्त:-सलिला की तरह मौजूद हैं। ये कवितायें जीवन के उछाह से भरी कविताएं हैं जो आमदपरस्त जिंदगियों के आस-पास से गुजरते हुये आतीं हैं।

000

पुस्तक पड़ताल

विमर्श - रूदादे-सफ़र

संपादक - सुधा ओम ढींगरा

(आलोचना)

विमर्श- रूदादे-सफ़र

समीक्षक : दीपक गिरकर

संपादक : सुधा ओम ढींगरा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016, मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

शिवना प्रकाशन से प्रकाशित पुस्तक विमर्श - रूदादे-सफ़र (आलोचना) का संपादन वरिष्ठ प्रवासी साहित्यकार सुधा ओम ढींगरा ने किया है। यह पुस्तक साहित्यकारों, समीक्षकों, आलोचकों, शोधार्थियों, पाठकों के विवेक को समृद्ध करने वाली पुस्तक है। 'विमर्श - रूदादे-सफ़र' (आलोचना) पुस्तक में 41 समीक्षकों के समीक्षात्मक, मानीखेज आलेख, 34 सारगर्भित टिप्पणियाँ, 20 संक्षिप्त टिप्पणियाँ, 6 पत्र, 26 प्रतिक्रियाएँ और 2 साक्षात्कार शामिल किए हैं जो उपन्यास के कथानक, पात्रों के चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, भाषा शैली, उद्देश्य को समग्रता से समझने के लिए नई रोशनी देते हैं। हिन्दी के सुपरिचित कथाकार और प्रसिद्ध उपन्यास 'अकाल में उत्सव' के लेखक पंकज सुबीर का देहदान की पृष्ठभूमि पर लिखा उपन्यास 'रूदादे-सफ़र' गत वर्ष में ही इतना अधिक चर्चित हुआ कि साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में इस उपन्यास की बहुत अधिक समीक्षाएँ और आलोचनाएँ प्रकाशित हुई। इस उपन्यास ने आलोचनात्मक लेखों का कीर्तिमान बनाया है। 'रूदादे-सफ़र' उपन्यास को पाठकों ने इतना सराहा कि, 2023 में पहले संस्करण के फ़ौरन बाद 2023 में ही इस उपन्यास के चार और संस्करण प्रकाशित करने पड़े और छठा संस्करण 2024 में छपा। इस उपन्यास ने पठनीयता के नए मानदंड स्थापित किये हैं।

उपन्यास का कथानक इस तरह का है कि यह डॉक्टर राम भार्गव और अर्चना की जीवन गाथा है। डॉक्टर राम भार्गव में अपने पेशे के प्रति ईमानदारी, समर्पण एवं जूनून था। डॉक्टर राम भार्गव भोपाल के शासकीय जयप्रकाश अस्पताल में ईएनटी डॉक्टर हैं। वे दूसरे डॉक्टर्स के समान प्राइवेट प्रैक्टिस नहीं करते हैं और न ही दवाई कंपनियों से कमीशन लेते हैं। वे सिर्फ वेतन से ही अपने परिवार का गुज़ारा करते हैं। डॉक्टर राम भार्गव की पत्नी पुष्पा भार्गव इसी बात को लेकर अपने पति से झगड़ा करती रहती है। डॉक्टर राम भार्गव और पुष्पा भार्गव की एक ही बेटी है जिसका नाम अर्चना है। जैसा की आम तौर पर होता है कि बिटिया की अपने पिताजी से अच्छी पटती है। इस उपन्यास की कथा में भी डॉक्टर राम भार्गव जिन विधाओं में रुचि रखते हैं अर्चना भी उन्हीं विधाओं में रुचि रख रही हैं। दोनों को ही ग़ज़ल और संगीत सुनने में रुचि है। दोनों अक्सर रविंद्र भवन में हस्त-शिल्प की प्रदर्शनी देखने जाते हैं। अर्चना भी एमबीबीएस करना चाहती है और वह भोपाल के गांधी मेडिकल कॉलेज से ही एमबीबीएस करना चाहती है लेकिन उसे रायपुर का मेडिकल कॉलेज मिलता है। वह रायपुर के मेडिकल कॉलेज से एमबीबीएस करती है और वह एनॉटोमी में एमएस भी रायपुर के मेडिकल कॉलेज से ही करती है। जब अर्चना रायपुर मेडिकल कॉलेज में पढ़ रही थी तब उसे एक विद्यार्थी शेखर से प्रेम हो जाता है लेकिन शेखर बहुत अधिक कॅरियर कॉन्शियस है। शेखर पीजी करने के लिए दिल्ली चला जाता है और वहाँ से अमेरिका चला जाता है। डॉक्टर अर्चना की पोस्टिंग भोपाल के गांधी मेडिकल

कॉलेज के एनाटॉमी विभाग में ही हो जाती है। एनाटॉमी विभाग में एक डिसेक्शन रूम रहता है जहाँ एमबीबीएस प्रथम वर्ष के विद्यार्थी कैडेवर (मुर्दे के शरीर) की चीड़फाड़ करके मानव अंगों का अध्ययन करते हैं। एनाटॉमी विभाग को आसानी से मृत शरीर नहीं मिलते हैं और विद्यार्थियों की संख्या के हिसाब से हमेशा मृत शरीर की कमी बनी रहती है। देहदान के घोषणा पत्र तो काफ़ी लोग भर देते हैं लेकिन जब देहदान की बारी आती है तब परिवार के लोग धार्मिक संस्कार पूरा करने के लिए देहदान नहीं करते हैं। मृत्यु के पश्चात देहदान की पूरी प्रक्रिया मेडिकल कॉलेज के एनाटॉमी विभाग में ही होती है। भोपाल के मेडिकल कॉलेज में एनाटॉमी विभाग की प्रमुख डॉक्टर अर्चना ही देहदान करवाती है। एक दिन भोपाल कलेक्टर प्रवीण गर्ग के पिताजी का शरीर देहदान के लिए मेडिकल कॉलेज आता है। प्रवीण गर्ग बहुत ही विनम्र व्यक्ति है। कुछ दिनों पश्चात प्रवीण गर्ग डॉक्टर अर्चना से मिलते हैं और अधिक से अधिक देहदान हो इसके लिए विचार-विमर्श करते हैं। प्रवीण गर्ग देहदान को एक मिशन के रूप में चलाते हैं और अधिक से अधिक देहदान के घोषणा पत्र भरवाते हैं। कथा का अंत क्या होता है यह जानने के लिए आपको उपन्यास पूरा पढ़ना होगा क्योंकि अंत ही इस उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।

इस उपन्यास विमर्श - रुदादे सफ़र (आलोचना) पुस्तक की संपादक सुधा ओम ढींगरा ने सही ही लिखा है कि 'यह उपन्यास जिस भूमि पर लिखा और तराशा गया है, उसकी आधे हिस्से की सूखी और आधे हिस्से की गीली माटी है। दोनों हिस्सों को एक साथ लेकर चलना, जिससे कोई हिस्सा कमज़ोर न पड़े, लेखन कौशल का कमाल होता है। मज़बूती से पकड़ कर उपन्यास पाठक को जब अंत तक ले जाता है, पाठक भौंचक्का रह जाता है। अंत में सिहर उठता है। यह उपन्यास जिस तरह के रसहीन विषय को केंद्र में लेकर आगे बढ़ता है, उसके लिए बहुत ज़रूरी था कि लेखक क़िस्सागोई और कहन शैली में ऐसे कौशल का उपयोग करे, जिससे पाठक को उसकी नीरसता का एहसास ही नहीं हो। क़िस्सागोई किसी भी विषय को सरस बना देती है, पंकज सुबीर के पास क़िस्सागोई की ऐसी कला है, जिसका उपयोग कर इस उपन्यास को रोचक और अंत तक उत्सुकता जगाए रखने वाली कृति बना दिया है। पंकज सुबीर ने रूदादे सफ़र उपन्यास लिखकर हिन्दी साहित्य को नायाब तोहफ़ा दिया है।'

वरिष्ठ साहित्यकार श्री विजय कुमार तिवारी ने इस क़िताब पर अपने सारगर्भित बीज आलेख में लिखा है कि पंकज सुबीर एक गंभीर रचनाकार हैं और उनका शिल्प अलग प्रभाव छोड़ता है। आज हमारा समाज आपसी संबंधों को सही तरीक़े से जी नहीं पाता, यहाँ उन्होंने पिता-पुत्री, पति-पत्नी और मित्रता जैसे रिश्तों को ख़ूब गहराई से चित्रित किया है। पंकज सुबीर प्रेम हो जाने को बुरा नहीं मानते बल्कि उसका पक्ष लेते हैं। डॉक्टर राम भार्गव चाहते हैं कि बेटी शादी कर ले परन्तु कभी दबाव नहीं डालते हैं। पंकज सुबीर जहाँ अवसर मिलता है, रूमानियत का तड़का लगा ही देते हैं। यह रसिकता पात्रों के जीवन में झलक ही जाती है। यह भी लेखन का कोई प्रभावी तरीक़ा है, अपनी भावनाओं और परिस्थितियों को गीतों, ग़ज़लों और धुनों का सहारा लेकर रोचक तरीक़े से पिता-पुत्री प्रस्तुत करते हैं। उर्दू से भरी ग़ज़लें और गायकों की आवाज़ असरदार है। बहुत कुछ बिना कहे, कह जाने का यह नायाब तरीक़ा है। हर पात्र भावनाओं से भरा है, जितना बाहर है, भीतर अधिक है और पाठक कहीं अधिक जुड़ाव महसूस करता है। मालवा, निमाड़, मारवाड़ी के शब्द-भाव व दृश्य हैं जो पंकज सुबीर के जीवन में रचे-बसे हैं।

समकालीन कथाकार गीताश्री ने 2023 में जिन किताबों को पढ़ा और पसंद किया और उन्होंने डीएनए इंडिया की लिए दस पुस्तकों की सूची बनाई उसमें पंकज सुबीर का उपन्यास रूदादे-सफ़र भी शामिल है। भालचंद्र जोशी ने अपनी समीक्षा में लिखा है – संवेदनाओं का ज़ख्मी होना एक नई संवेदना को जन्म देना है। रुदादे-सफ़र ऐसी ही जख्मी संवेदना की यात्रा है। इस भावनात्मक यंत्रणा की निरंतर यात्रा में रिश्तों के द्वंद्व हैं। इस उपन्यास में एक दिलचस्प बात है कि इसमें प्राय: स्थितियाँ खलनायक हैं पात्र खलनायक की तरह कम नज़र आते हैं बल्कि जो नज़र आते हैं वे भी परिस्थितियों की बनावट और बुनावट के भीतर हैं। अचला नागर ने इस उपन्यास के संबंध में लिखा है कि इस उपन्यास ने देहदान के साथ पिता-पुत्री का विशेष रूप से बहुत ही सुंदर संबंध स्थापित किया है। यह अलग टाइप का उपन्यास है। इसमें गानों का बहुत अच्छा इस्तेमाल किया है। समीक्षक डॉ. सीमा शर्मा लिखती हैं रूदादे-सफ़र एक अनूठा उपन्यास है, इसे किसी एक विषय पर केंद्रित मानकर देखना उचित नहीं है, क्योंकि यह एकांगी लेखन नहीं है, इसमें कई परतें हैं जो समाज को बहुत सूक्ष्मता से देखती हैं। चिकित्सा के एक बड़े विभाग एनॉटोमी का लेखक ने बहुत सूक्ष्म और शोधपरक चित्रण किया है। लेखक की शोधवृत्ति रचनाओं की विश्वसनीयता को बढ़ा देती है। इस उपन्यास में कथाकार ने चिकित्सा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को परत-दर-परत उजागर किया है। पंकज सुबीर के इस उपन्यास को केवल देहदान और पिता पुत्री के संबंधों तक सीमित करना उचित नहीं होगा क्योंकि इस उपन्यास का विस्तार इससे कहीं अधिक है। इसे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर केस स्टडी की तरह भी देखा जा सकता है। यह उपन्यास पूर्णत: सोद्देश्य रचना है, जो पाठक के अंदर बेचैनी पैदा करती है उसे विचार के लिए विवश करती है। वर्तमान समय में समाज में अकेलापन भी एक उभरती हुई समस्या है। डॉक्टर अर्चना भार्गव भी उस अकेलेपन के साथ जीने को अभिशप्त है।

रमेश शर्मा ने लिखा है कि मनुष्य के कैडेवर हो जाने के बाद की कथा बहुत ही रोमांचक और रोचक है, जहाँ से पाठक के मन में एक नई बहस जन्म लेती है कि क्या वह मृत्यु के पश्चात एक कैडेवर में बदल जाना चाहेगा? क्या वह अपनी देह को मेडिकल साइंस के विद्यार्थियों के लिए किसी मेडिकल कॉलेज को दान करना चाहेगा? यह बहस

समाज के पारंपरिक और कर्मकांडी परिवारों के लिए आज भी उपेक्षा का विषय है। मृत्यु उपरांत देहदान को लेकर जिस तरह की मनोदशाएँ हमारे समाज में दिखती हैं, उस पर भी यह उपन्यास एक विमर्श को जन्म देता है।

उपन्यास में मेडिकल साइंस के दो शब्द साइटस सॉलिटस और साइटस इन्वर्सस पर गहरा विमर्श है। थौरेक्स और एब्डोमन रीज़न के ऑर्गन्स की नॉर्मल पोजिशन को साइटस सॉलिटस कहा जाता है जबकि इसके मिरर वाली बॉडी को साइटस इन्वर्सस कहा जाता है। साइटस इन्वर्सस की बॉडी की श्रेणी में आने वाले इंसान का दिल बाएँ तरफ़ न होकर दाईं तरफ़ होता है। दस हज़ार में से एकाध मनुष्य की बॉडी इस तरह की हो सकती है। इस श्रेणी के लोग अनोखे इंसान होते हैं जो दुनिया को एक अलग ही नज़र से देखते हैं। डॉक्टर राम भार्गव और डॉक्टर अर्चना जैसे लोग इसी श्रेणी में आते हैं, जो चिकित्सा के पेशे में होते हुए भी पैसे के पीछे बिल्कुल नहीं भागते। ऐसे लोगों के लिए मानवीयता ही सर्वोपरि है। रमेश शर्मा इस उपन्यास के बारे में आगे कहते हैं कि इस उपन्यास को पढ़ते हुए कई प्रकार के रिश्तों की महक हमें भीतर से गुदगुदाती है। गीतों और ग़ज़लों का इस उपन्यास में बख़ूबी प्रयोग किया गया है जिससे यह उपन्यास रोचक बन पड़ा है।

सुपरिचित प्रवासी साहित्यकार रेखा भाटिया ने रूदादे-सफ़र को पढ़कर लिखा है यह मानव मनोविज्ञान, मन, मस्तिष्क, संवेदनाओं, रिश्तों और मानसिकता की बहुत गहराई से पड़ताल करता एक बेजोड़ उपन्यास है। लेखक ने देहदान के बहाने राजनीतिक पार्टियों के तमाशे का खोखलापन उजागर किया है। लेखक ने ग़लती और ईगो के बीच के द्वंद्व की ख़ूबसूरत विवेचना की है। 'आज ग़लती की है, आज ही सुधारो वरना उस ग़लती का प्रभाव दिनों-दिन बढ़ता जाएगा।' जसविन्दर कौर बिन्द्रा इस उपन्यास के बारे में लिखती हैं उपन्यास में भोपाल शहर की सुगंध बसी है। यहाँ पुराने व नए भोपाल का अंतर, उसकी संस्कृति, विरासत, ख़ासियत, भोपालीपन के साथ, झीलों, नदियों व पहाड़ों की ख़ूबसूरती, यहाँ का शाही अंदाज़, धर्मों में परस्पर भाईचारे व अपनत्व का भाव इत्यादि को कथाकार ने कथानक के साथ गूँथ कर बयान किया है।

प्रकाश कान्त लिखते हैं कि उपन्यास के साथ विशेष बात यह है कि वह कथा के उस क्षेत्र में प्रवेश करता है जिसे लेकर हिन्दी में अभी तक बहुत अधिक नहीं लिखा गया है। इस उपन्यास में बहुत सारी चीज़ें बहुत विस्तार से आई हैं। साथ ही, वह चिकित्सा विज्ञान पढ़ाने वाले अध्यापकों के निजी जीवन के संवेदनात्मक पक्ष को देखने-समझने और उद्घाटित करने का भी महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। शैलेंद्र शरण ने अपनी सारगर्भित समीक्षा में लिखा है- पंकज सुबीर के उपन्यासों में विचार पक्ष अत्यधिक मज़बूत और समृद्ध होता है। उनके उपन्यास अकाल में उत्सव, जिन्हें जुर्म-ए-इश्क पर नाज़ था और रूदादे-सफ़र इस बात का प्रमाण है कि उनकी सकारात्मक और गहन विचारशीलता के अनेकों उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। पंकज सुबीर की अधिकांश कहानियों का अंत अप्रत्याशित होता है, उनकी कहानियों के अंत का अंदाज़ कठिन होता है। इस उपन्यास का अंत भी अप्रत्याशित है।

समालोचक गंगा शरण सिंह ने इस कृति के विषय में कहा है- पंकज सुबीर का उपन्यास रूदादे-सफ़र एक तरफ़ मानवीय संवेदना और संबंधों की यादगार गाथा है तो दूसरी तरफ़ कहानी की पृष्ठभूमि में सघनता से शामिल है चिकित्सा जगत्। एनोटॉमी की दुनिया से तो बख़ूबी परिचित कराया ही है उन्होंने, साथ ही अपने मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव्स के द्वारा खेले जाने वाला दवा कंपनियों के अमानवीय खेल को भी खुलकर जाहिर किया है। मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक चेतना से लैस यह उपन्यास पाठक को अंतिम पन्नों तक बाँधे रहता है। कवयित्री एवं कथाकार डॉ. मधु सन्धु ने इस उपन्यास पर अपनी समीक्षा में लिखा है- रूदादे-सफ़र एक यात्रा है - बेटी के नेह में डूबे एक पिता की, पिता के वात्सल्य में तिरोहित एक बेटी की। दशकों लंबी यात्रा। उपन्यास पिता-पुत्री संवाद-सा है। रूदादे-सफ़र दस्तावेज़ है एक गाइड का, जो दर्शक रूपी सैलानियों को भोपाल के हर कोने-कतरे से, अंदर बाहर से, अतीत-वर्तमान से, पुराने-नए शहर से परिचित करवा रहा है। यह उपन्यास एक भावुक संगीतज्ञ के गीतों का संग्रहण है। यह एक नौकरीपेशा स्त्री के जीवन का चित्र भी है। उपन्यास ऐसे क्रूर और चतुर पुरुष का भी वर्णन करता है, जो पत्नी/स्त्री/प्रेमिका की हत्या कर उसकी मृत शरीर को देह दान के नाम पर एनोटॉमी विभाग में ठिकाने लगाना चाहता है। यह उपन्यास भ्रष्टाचार की परतें खोलता है।

रूदादे-सफ़र जाति-धर्म से ऊपर उस बौद्धिक लोक की कृति है, जहाँ अर्चना सिंह रेहाना ख़ान की अप्पी है। जहाँ अफ़गानी ख़ून और हिन्दू ख़ून का भेद न होकर मानवीयता, बंधुत्व, स्नेह ही मुख्य सच्चाई है।

यह हिन्दुस्तान का, हिन्दुस्तानी का, इक्कीसवीं शती का उपन्यास है। यहाँ उर्दू, अंग्रेज़ी शब्दों से कोई परहेज़ नहीं किया गया। उपन्यास का ताना-बाना रागात्मक, संगीत और शरीर विज्ञान के जिस धागे से बना गया है, उसमें उर्दू-अंग्रेज़ी से परहेज़ हो ही नहीं सकता था। लता के लिए लतर, टेम्पो के लिए भटसुअर, टूटी फ्रूटी के लिए हेमा मालिनी का दिल जैसे शब्द भाषा को भोपाली स्पर्श देते हैं।

कथाकार राजनारायण बोहरे ने रूदादे-सफ़र को पढ़कर लिखा है- पंकज सुबीर का उपन्यास रूदादे-सफ़र देह विज्ञान जैसे एकदम नए कथ्य और विषय पर आधारित अविस्मरणीय उपन्यास है। मेडिकल कॉलेज के पहले साल में प्रवेश लेने वाले किशोर छात्रों का कैडेवर छूने से डरना, उल्टियाँ करना, घबराहट, सपनों तक में परेशान होना ऐसे ही प्रसंग हैं जो पाठक को भी उन्हीं अनुभूतियों से भर देता है। डॉ. रमाकांत शर्मा लिखते हैं पंकज सुबीर का नया उपन्यास रूदादे-सफ़र उनकी बेटियों को समर्पित है। इस उपन्यास में जहाँ पिता और पुत्री के बीच के रिश्ते की आत्मीयता और परस्पर विश्वास को रेखांकित किया गया है, वहीं ज़िंदगी के सफ़र के तमाम आयामों की गहराई से

पड़ताल भी की गई है। मानव-शरीर की रचना के अध्ययन को केंद्र में रखकर रचा गया यह उपन्यास देहदान के प्रति जागरूकता लाता है। राजनीति में अच्छे लोगों के अभाव पर भी इस उपन्यास में गहरी टिप्पणी की गई है। देहदान जैसे लगभग अछूते विषय को उठाकर यह उपन्यास मानवीय संवेदनाओं को झकझोरने के अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल हुआ है।

कैलाश मंडलेकर इस उपन्यास के बारे में लिखते हैं कि रूदादे-सफ़र का मूल कथानक यों तो देहदान पर केंद्रित है पर रचना का औपन्यासिक फ़लक अपने भीतर अनेक उपकथाएँ सँजोये हुए है। भारतीय समाज में मध्य वित्त परिवारों में माता पिता और संतान के बीच रिश्तों की महीन बुनावट, इस कथा में एक ऐसे भाष्य को रचती है जो वर्तमान दौर की सामाजिक टूटन के बरअक्स प्रेम और वात्सल्य तथा बंधन और मुक्ति जैसे मूल्यों की स्थापना के लिए कटिबद्ध है। कथा का समूचा ताना-बाना इस तरह बुना गया है कि सारे पात्र सजीव लगते हैं और पढ़ने वाले को लगता है, मानों वह स्क्रीन पर सब कुछ घटित होते हुए देख रहा है। सुधा जुगरान ने अपनी समीक्षा में लिखा है कि इस उपन्यास में पंकज सुबीर ने अर्चना व राम भार्गव को माध्यम बनाकर बहुत ही महीनता से पिता-पुत्री के भावुक रिश्ते की पड़ताल की है। मंत्री जी की पत्नी के पिता के चले जाने पर मंत्री जी की पत्नी को रोते देख शव की एम्बॉलिंग करने के लिए गई अर्चना डॉक्टरी पेशे की गंभीरता व शुष्कता को दरकिनार कर भावुक हो रो पड़ती है। उसे अहसास होता है कि यह केवल उस महिला का दर्द नहीं है, यह तो हर उस बेटी का दर्द है जो अपने पिता को खो देती है।

अजय बोकिल ने इस उपन्यास पर लिखा है कि यह उपन्यास जीवन के सत्यों से बार-बार साक्षात्कार कराता है। और इससे भी बड़ी बात ये कि महान् कथाकार मंटो की कहानियों की तरह अंत में पाठक को गहरा झटका देता है। देहदान के पुनीत कार्य में जुटी डॉक्टर बेटी को जब अपने ही लापता पिता की देह जब दान में मिलती है, तो डॉक्टर अर्चना के साथ साथ पाठक भी सन्न रह जाता है। रूदादे-सफ़र मन की उलझनों और वक़्त के थपेड़ों के बीच बढ़ती तथा कड़वी सच्चाइयों की बुनियाद पर बुनी जीवन यात्रा की कहानी है। यह ऐसा वृत्तांत है, जो व्यथाओं से भरा होने के बावजूद समाज को एक सकारात्मक सन्देश देता है। ऐसा सन्देश, जिसमें निजी सुख दु:ख से ज़्यादा दूसरों की लिए जीने की सार्थकता है। इक़बाल अहमद ने इस कृति के विषय में कहा है – एक ख़ास बात उपन्यास की यह है कि उपन्यास हमें डॉक्टरों की ज़िंदगी, उनकी चुनौतियों, उनके संघर्ष, उनकी परेशानियों के बारे में बताता है। मेडिकल कॉलेज की लाइफ़ के साथ डॉक्टर अर्चना यादों के सहारे अपने अतीत में आवाजाही करती रहती हैं। उनके पिता डॉक्टर राम भार्गव इस उपन्यास के दूसरे महत्त्वपूर्ण किरदार हैं। डॉक्टर अर्चना की माँ पुष्पा भार्गव भी एक महत्त्वपूर्ण किरदार हैं। डॉक्टर अर्चना ने माँ-बाप को ख़ूब बहस करते और एक-दूसरे को ज़िंदगी के दो बिलकुल अलग छोरों पर खड़ा देखा है। उपन्यास में डॉक्टर अर्चना और डॉक्टर राम भार्गव के रिश्तों को भावनात्मक तरीक़े से पेश किया गया है।

नीरज नीर ने अपनी समीक्षा में लिखा है पंकज सुबीर की यह विशेषता है कि वे जिस विषय पर उपन्यास लिखते हैं, उस विषय पर व्यापक शोध करते हैं, उसकी विस्तृत जानकारी हासिल करते हैं। आज जब स्त्री विमर्श के नाम पर तमाम तरह की नकारात्मकता परोसने को ही प्रगतिशीलता का मापदंड मान लिया जाता है, ऐसे में इस उपन्यास में, जिसकी मुख्य पात्र एक स्त्री है और प्रगतिशील स्त्री है, उसमें पुरुष के चरित्र को बहुत ही ख़ूबसूरत और संवेदनशील तरीक़े से प्रकट किया गया है। पुरुष जो एक पिता है, अपनी बेटी के साथ उसके हर निर्णय में उसके साथ खड़ा होता है, उसे हर तरह की आज़ादी देता है, लेकिन उसके भविष्य को लेकर उसके निर्णयों को लेकर चिंतित भी रहता है। वह चाहता है कि उसकी बेटी अच्छी डॉक्टर बने लेकिन साथ ही वह यह भी स्पष्ट कर देता है कि कॅरिअर अगर ज़िंदगी से बड़ा होने लगे, तो एक बार ज़रूर रुक कर सोचना चाहिए कि हम दुनिया में ज़िंदगी जीने के लिए आए हैं कि कॅरिअर बनाने के लिए। यह सच ही तो है कॅरिअर और सुख-सुविधाओं को जुटाने की हवस में हम ज़िंदगी को जीना ही भूलते जा रहे हैं। कथाकार और समीक्षक गोविन्द सेन के अनुसार यह उपन्यास पिता-पुत्री के भावनात्मक संबंधों पर आधारित है। गोविन्द सेन आगे लिखते हैं कि इस उपन्यास के शीर्षक ने थोड़ी जिज्ञासा पैदा कर दी थी। रूदादे-सफ़र रोज़मर्रा का परिचित शब्द नहीं है। वह तो अंतिम पृष्ठ पर जाकर पता लगता है कि उपन्यास का शीर्षक निदा फ़ाज़ली के एक शेर से लिया गया है, जिसका अर्थ है - सफ़रनामा। इसमें पिता-पुत्री के मन की कई परतों को बख़ूबी खोला गया है। एक बेटी के लिए पिता के कंधे बहुत मज़बूत संबल होते हैं। उपन्यास इतना रोचक है कि पाठक अंत तक इसे छोड़ नहीं पाता। पंकज सुबीर की क़िस्सागोई लाजवाब है। पूरे उपन्यास में गीत-संगीत गूँजता रहता है। प्रसंगानुसार कभी आबिदा परवीन की आवाज़ गूँजती है, तो कभी जगजीत सिंह-चित्रा सिंह की, तो कभी किसी अन्य गायक की और कभी राम भार्गव और अर्चना भी गाते हुए दिखाई देते हैं।

हरिराम मीणा के अनुसार शिल्प की दृष्टि से बात की जाए तो आरंभ से लेकर अंत तक कथा का प्रवाह पाठक को बाँधे रखने में सक्षम है। भाषिक स्तर पर पात्रानुकूलता प्रभावित करती है। इस कृति में आद्यांत गीत-संगीत की गूँज सुनाई देती है। आख़िर यही तो डॉक्टर राम भार्गव और उनकी पुत्री का गहरा शौक रहा है। बेग़म अख्तर, लता मंगेशकर, आशा भोंसले, आर.डी. बर्मन, भारत भूषण, गुलज़ार, आबिदा परवीन, कब्बन मिर्ज़ा की उपस्थिति बार बार रहती है, जो एनोटॉमी विभाग के नीरस वातावरण को रसमय बनाती रहती है और पुस्तक को रोचक व पठनीय भी। दीपक गिरकर ने अपने समीक्षात्मक आलेख में लिखा है कि पंकज सुबीर ने इस उपन्यास में पिता-पुत्री के निश्छल रिश्ते, प्रेम और भावनाओं को यथार्थ की क़लम से उकेरा है। कथाकार ने बड़ी कुशलता से डॉक्टर अर्चना, डॉक्टर राम भार्गव और पुष्पा भार्गव की

भावनाओं के उफान का सृजन इस उपन्यास में किया हैं। वे अपने कथा साहित्य के द्वारा भारतीय मूल्यों को पुर्नस्थापित करते हैं। पंकज सुबीर के कथा साहित्य में रोचकता तथा सकारात्मकता पाठकों को आकर्षित करती है। लेखक ने सभी किरदारों के विभिन्न भावों को मार्मिकता, सहजता और सकारात्मक रूप से अपने कथा साहित्य में अभिव्यक्त किया हैं।

लेखक इस उपन्यास में एक बिल्कुल नए कथानक से परिचय कराते हैं। कथाकार ने इस उपन्यास को इतने बेहतरीन तरीक़े से लिखा है कि गांधी मेडिकल कॉलेज भोपाल का एनाटॉमी विभाग व डिसेक्शन-रूम, भोपाल की ईदगाह हिल्स, कोहेफिज़ा और पुराने भोपाल शहर का जीवन्त चल चित्र पाठक के सामने चलता है। उपन्यास की कहानी में प्रवाह है, अंत तक रोचकता बनी रहती है। उपन्यास के बुनावट में कहीं भी ढीलापन नहीं है। लेखक ने इस उपन्यास को बहुत गंभीर अध्ययन और शोध के पश्चात लिखा है। रूदादे-सफ़र उपन्यास शिल्प और औपन्यासिक कला की दृष्टि से सफल रचना है। यह उपन्यास सिर्फ पठनीय ही नहीं है, संग्रहणीय भी है। यह कृति देहदान पर बहुत ही स्वाभाविक रूप से सवाल खड़े करती है और इन विषयों पर एक व्यापक बहस को आमंत्रित करती है।

आकाश माथुर ने अपनी समीक्षा में लिखा है कि पिता-पुत्री के रिश्ते पर लिखा गया यह उपन्यास कई रिश्तों को खँगालता है। अर्चना और रेहाना का रिश्ता, जो इस दुनिया को बचाये हुए है। इसी तरह की संवेदनाओं से भरे इस उपन्यास में लेखक का दर्शन भी दिखाई देता है। एक वाक्य है उपन्यास का 'मरीज़ को ठीक करने पर मिलने वाला सुख', यह एक श्लोक है। यही सुख तो हमने तलाशना बंद कर दिया है। यही समाज के पतन का मूल कारण है, जिसे लेखक ने सिर्फ एक पंक्ति में कह दिया है। पंकज सोनी लिखते हैं यह उपन्यास एक बेटी की स्मृतियों के सफ़र की अनूठी दास्तान है। यह एक बाप बेटी के रिश्ते की सुंदर कहानी है। जिसमें एक पिता है जो उसका सरपरस्त और ख़ैरख़्वाह भी है और उसका सखी हातिम भी है। एक ऐसा दोस्त, जिसके सामने बेटी अपना दिल खोलकर रख देती है। उपन्यास पढ़ते समय भोपाल हमारे सीने में धड़कता रहता है। इसमें भोपाल एक पात्र की तरह उपस्थित है। धनंजय कुमार सिंह इस उपन्यास को पढ़कर कहते हैं इस उपन्यास में एक ख़ास बात जो कथा के प्रारंभ से अंत तक जो दिखाई दी, वह यह कि यह टूटन की कहानी नहीं है। यह एक जुड़ाव की सकारात्मक कहानी है जहाँ चारों तरफ़ प्यार की कोंपलों के बीच घृणा और मतभेदों के फूल तिरोहित होते नज़र आते हैं। उपन्यास का अंत चौंकाता ज़रूर है, लेकिन यथार्थ की ज़मीन नहीं छोड़ता।

प्रीति दुबे ने अपनी सारगर्भित समीक्षा में लिखा है कि उपन्यास के आख़िरी पृष्ठों को पढ़ कर आँखों का नम होकर तर हो जाना, अविरल अश्रुधारा बहती जाना, बहती जाना, बहती जाना और पन्नों का धुँधला नज़र आना तय है। देहदान जैसे पुनीत कार्य हेतु प्रोत्साहन, भविष्य निर्माण, कम उम्र में परिपक्व विचार रिश्तों को समझने की समझ और न जाने कितना कुछ सिखाता है पंकज सुबीर द्वारा लिखित बेहतरीन उपन्यास रूदादे-सफ़र। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि इस उपन्यास पर एक फ़िल्म बननी ही चाहिए। नूपूर प्रणय वागळे इस उपन्यास पर लिखती हैं – यह कृति पिता-पुत्री की अद्भुत व्यथा कथा है। इस उपन्यास में पाँच जोड़ी पिता-पुत्री हैं। उन पुत्रियों के व्यक्तित्व में उनके पिता का अंश झलकता है। रेहाना बहुत ही सौम्य, ज़िंदादिल, शरारती है और ज़िन्दगी जीना जानती है। रेहाना जिस समाज का प्रतिनिधित्व करती है, उस समाज की पारंपरिक व्यवस्थाओं के विरुद्ध अडिग खड़े होकर, अपनी बेटी को हर क्षेत्र में सहयोग करने वाले पुरोगामी विचारधारा का ज्वलंत उदाहरण उसके पिता हैं। जिनके सहयोग के कारण रेहाना को अपने कॅरिअर से ले कर जीवनसाथी तक चुनने की स्वतंत्रता प्राप्त है, जिसके कारण एक गहरा आत्मविश्वास उसके व्यक्तित्व में झलकता है।

मंत्री जी की पत्नी अपने पिता का दाह संस्कार गाँव में ही करना चाहती थी लेकिन उनके पिताजी ने अपने देहदान का फॉर्म भरकर मेडिकल कॉलेज को दे दिया था। मंत्री जी की पत्नी को शीघ्र ही अहसास हो जाता है कि उसका यह हठ व्यर्थ है, क्योंकि उसकी जड़ों की अटूट पकड़ तो उसके पिता थे। अपने मृत पिता के पार्थिव शरीर की प्रिजर्वेशन प्रक्रिया के कारण होने वाली चीरफाड़ से पीड़ा न हो इसके लिए वह इस प्रक्रिया का विरोध करती है।

जब कलेक्टर की बहन राखी सात समंदर पार से अपने दिवगंत पिता का दर्शन करने आती है, तब वह एनाटॉमी विभाग के दरवाज़े से लेकर कैडेवर टेबल तक की छोटी-सी दूरी भी तय नहीं कर पाती है।

पुष्पा भार्गव, जो की डॉक्टर अर्चना की माँ हैं, और उपन्यास के प्रमुख पात्रों में से एक हैं, एक अत्यंत व्यावहारिक सोच रखने वाली महिला हैं, जो चाहती हैं कि उसका पति भी समय के साथ चले और उनका जीवन भरपूर पैसों और भौतिक सुख-सुविधाओं से संपन्न हो। अपने शैक्षणिक जीवन में ही पिता की छत्रछाया न रहने पर असुरक्षा का भय ताउम्र उनके साथ रहा।

उपन्यास की नायिका डॉक्टर अर्चना और उसके पिता डॉक्टर राम भार्गव के बीच मैत्री का एक अनोखा रिश्ता है, जो सामान्यत: उस उम्र में लड़कियों का अपनी माँ के साथ होता है।

संपूर्ण परिपेक्ष्य में देखा जाए तो हर बेटी के लिए उसका पिता एक अभेद्य सुरक्षा कवच होता है, वह उसमें आत्मविश्वास लाता है, हिम्मत बनता है और उसका आदर्श होता है।

मीरा गोयल के अनुसार यह उपन्यास देह दान की महत्ता आम जनता तक पहुँचाता है। कथा के माध्यम से लेखक ने राजनीति के निन्दनीय धंधे और सेल्फ प्रमोशन के आधुनिक तरीकों पर भी प्रकाश डाला है। अर्चना को शोध और शिक्षण पसंद है, चिकित्सा नहीं। डॉक्टर अर्चना के पिता डॉक्टर राम भार्गव इस तथ्य को समझते हैं कि जब सभ्यता और विज्ञान पूँजीवाद के साथ कदम मिलाकर चलते हैं, तो वह समय समाज

के हित में नहीं होता, पर समझदार लोगों को पेशे से भागना सुधार नहीं ला सकता। अनीता सक्सेना लिखती हैं रूदादे-सफ़र अतीत और वर्तमान की कहानी है। इस कृति में रिश्तों के ख़ूबसूरत और भावपूर्ण पुलों की कहानी है। उपन्यास का अंत झकझोर देने वाला है। पाठक उसकी कल्पना तक नहीं कर सकता और देर तक सोचता रह जाता है। विजय शर्मा कहते हैं इस उपन्यास में पिता-पुत्री दोनों का रिश्ता काव्यात्मक है। गीत-संगीत के माध्यम से पात्रों की मन:स्थिति चित्रित हुई है। पंकज सुबीर के पास गीतों-ग़ज़लों का ख़जाना है, रुचि है, जिसे घटना तथा मूड के अनुसार उन्होंने अपनी इस कथा में शुरू से अंत तक पिरोया है।

यशोधरा भटनागर ने अपनी समीक्षा में लिखा है कि मानवीय भावनाओं का सूक्ष्म चित्रण! सुंदर प्रवाह है। रिश्तों की भावुकता से सिक्त रूदादे-सफ़र में पाठक एक ओर पिता-पुत्री के प्रगाढ़-पावन प्रेम में डूबता-उतराता पुलक से भर उठता है, दूसरी ओर खरी-खोटी सुनाने वाली पत्नी के प्रति डॉक्टर राम भार्गव का पूर्णतया शांत-संयमित आचरण, पाठक को आश्चर्य में डाल देता है। इस उपन्यास को पढ़कर एक जागरूक नागरिक के रूप में मेरे मन-मानस में भी देह दान के विचार का पूरी सुदृढ़ता एवं स्थायित्व के साथ आविर्भाव हुआ है। यही पंकज सुबीर के उपन्यास-लेखन की सफलता का परिचायक है। गोविंद शर्मा इस उपन्यास को पढ़कर कहते हैं कि रूदादे-सफ़र आँखों में उतरती नदी का सफ़र है। पंकज सुबीर को सामाजिक सद्भाव दिखाने के लिए न तो नाटकीय पात्र गढ़ने होते हैं और न ही भावुक नारे लगाने पड़ते है। डॉक्टर रेहाना और डॉक्टर अर्चना का साथ हमें सहज लगता है। ध्रुवीकरण के हामियों को भी उपन्यास से गुज़रते हुए इसकी तस्दीक करनी ही होगी। अल्लाह से कहेगी और मंदिर में प्रसाद चढ़ायेगी तो तेरी फ़रियाद अल्लाह तक कैसे पहुँचेगी? कितनी सहजता से उपन्यास में अलग पूजा पद्धति के पात्र आते हैं और अपने किरदार की ख़ुशबू बिखेरते हैं।

सुपरिचित प्रवासी कथाकार ममता त्यागी ने अपनी समीक्षा में लिखा है रूदादे-सफ़र एक संगीतमय व्यथा कथा यात्रा है। प्रतिष्ठित उपन्यासकार पंकज सुबीर द्वारा लिखित उपन्यास रूदादे-सफ़र को पढ़ना ऐसा लगा जैसे स्मृतियों की वीथियों से भावप्रवण होकर एक यात्रा कर रही हूँ। एक ऐसी यात्रा जिसमें बस बहना है, रुकने का कोई ठौर नहीं है। जिसमें कभी संगीत सभाओं की मधुर गूँज झंकृत होती है, तो कभी अस्पताल के नीरस गलियारों से आती अजीब सी महक आकर घेर लेती है और तभी चंचल शोख़ रेहाना आकर गुदगुदा देती है। कभी डॉक्टर राम भार्गव में अपने पिता नज़र आते हैं तो कभी मरणासन्न माँ का हाथ पकड़े डॉक्टर अर्चना में अपनी परछाई सी दिखती है। डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ लिखते हैं पंकज सुबीर की रचनाओं में शेर-ओ-शायरी का बेहतर हस्तक्षेप होता है। जिन्हें जुर्म -ए-इश्क़ पे नाज़ था और हमेशा देर कर देता हूँ मैं जैसे शीर्षक ग़ज़लों से लिए गए हैं और रूदादे-सफ़र भी निदा फ़ाज़ली के एक शेर से जुड़ा हुआ है। उपन्यास की बुनावट में फ़िल्मी गीतों की उपस्थिति भी महत्त्वपूर्ण है। जीवन में प्रेम की कहानी बयान करने के लिए इजाज़त फ़िल्म के चार गीतों का उपयोग सलीक़े से हुआ है।

सरस दरबारी ने इस उपन्यास पर चर्चा करते हुए लिखा है पंकज सुबीर ने इस उपन्यास में गीतों के माध्यम से पात्रों की मन:स्थिति संप्रेषित की है। गीतों का यह अनुपम प्रयोग, उपन्यास में एक लय, एक ताजगी भरते हुए, पाठक का, पात्रों की मनोदशा से एक तादात्म्य स्थापित करता चलता है।

पंकज सुबीर शब्दों के जादूगर तो हैं ही, उन्होंने उपन्यास में संवेदनाओं के तारों को छेड़ती ग़ज़लों और गीतों का इतना सुंदर तालमेल रचा है, कि यह पूरा उपन्यास संगीत की स्वर लहरियों पर, ख़रामा-ख़रामा बहते जज़ीरे-सा प्रतीत होता है। पिता और बेटी के बीच के संवाद, उनकी कैमेस्ट्री, इस उपन्यास का सबसे सशक्त पक्ष है, जो उपन्यास में एक ताज़गी, सुर और माधुर्य भर देते हैं।

शेफालिका सिन्हा ने अपनी समीक्षा में लिखा हैं यह उपन्यास देहदान जैसे विषय की विस्तृत जानकारी देता है। यह उपन्यास क़िस्सा-कहानी से अलग एक ऐसी विधा लगती है, जो कितने ही आयामों से परिचित करवाती है। इसमें मानवीय संबंध है, देहदान जैसा जटिल विषय है, साथ ही भोपाल शहर की ऐसी व्याख्या मानों लोगों को भ्रमण के लिए आकर्षित कर रहा हो। समालोचक प्रियदर्शन इस उपन्यास पर लिखते हैं – इस कृति में एक किरदार भोपाल शहर भी है। इसमें संदेह नहीं कि पंकज सुबीर बहुत सधे हुए क़िस्सागो हैं। उन्हें अपने पाठकों को बाँधे रखना आता है। जीवन के प्रति उनके सारे किरदारों में कहीं-कहीं दार्शनिकता को छूता हुआ एक रूमानी नज़रिया है जो अच्छा लगता है। लेकिन डॉक्टर अर्चना की माँ पुष्पा उपन्यास के अंत में जितना संतुलन और गहराई दिखाती हैं, उससे लगता है, यह काम वे पहले क्यों नहीं कर पाई। क्या उपन्यासकार ने अपनी कथा योजना के तहत उन्हें लगातार असंवेदनशील बनाए रखा ताकि पिता और पुत्री के प्रगाढ़ संबंध का तर्क जुटा सके? इसी तरह उपन्यास के अंत में पिता के जिस फ़ैसले का पता चलता है, वह बिल्कुल समझ में नहीं आता। लगता है, एक अंत की तलाश में लेखक ने अपने सबसे संवेदनशील किरदार से एक असंवेदनशील कृत्य करा लिया।

तिलकराज कपूर इस उपन्यास पर लिखते हैं – उपन्यास आरंभ में ही अपने मुख्य विषय की नींव रख देता है और पाठक को आमंत्रित करता है उपन्यास की दृष्टि से एक असामान्य विषय में उतरने के लिए और फिर धीरे-धीरे विषय विस्तार की ओर बढ़ने के लिए अंतरंग संबंधों का सहारा लेता है जो पंकज सुबीर की लेखन शैली का अंश है। इनके उपन्यासों में पारस्परिक संवादों में मुख्यत: अंतरंगता और सौहार्द्रता स्पष्टत: देखी जा सकती है जो इस उपन्यास में भी है। इस उपन्यास पर अपनी समीक्षा में वाणी अमित जोशी ने लिखा है कि यह उपन्यास ख़ूबसूरत रिश्तों के ताने-बाने से बुना है। एक बाप और बेटी का रिश्ता, एक पति और पत्नी का रिश्ता, एक रिश्ता जो कि सभी जाति, धर्म और ख़ून के रिश्तों से ऊपर

जाकर डॉक्टर अर्चना और रेहाना के बीच का रिश्ता। डॉक्टर अर्चना के शेखर और कलेक्टर गर्ग के साथ के अधूरे रिश्ते, डॉक्टर अर्चना का अपनी नौकरानी के साथ का रिश्ता इस उपन्यास को ख़ूबसूरत बनाता है।

लेखिका और समीक्षक अदिति सिंह भदौरिया ने अपनी सारगर्भित समीक्षा में लिखा हैं कि इस उपन्यास में डॉक्टर राम भार्गव एक माली की तरह अपनी बेटी के भविष्य को सुखद बनाने के लिए उसमें अपने भावों के साथ साथ मानवीय मूल्यों के महत्त्व को भी रोपते हैं, जो भविष्य में एक डॉक्टर के साथ साथ एक सफल नागरिक भी बने। रूदादे-सफ़र ने अपनी पकड़ को अंत तक कामयाबी से बनाए रखा। उपन्यास पाठकों को बाँधकर रखता है। पाठक डॉक्टर राम भार्गव को तब भी याद करता है जब उनकी बेटी उनकी याद में उनके पसंदीदा गाने सुनती है। पाठक डॉक्टर राम भार्गव से तब भी जुड़ता है जब डॉक्टर राम भार्गव अपनी बेटी को उसकी माँ की डाँट से बचाते हैं। मोहन वर्मा ने इस उपन्यास पर लिखा है – उपन्यास की एक ख़ासियत यह है कि मूल कहानी के सात साथ जो हक़ीक़त, दर्शन, भावनाएँ और विषयवस्तु का सरल प्रवाह है, वह थोड़ी थोड़ी देर में पाठक को रुकने और सोचने को मजबूर करता है। उपन्यास जिस भोपाल को केंद्र में रखकर बुना गया है उसके ऐतिहासिक, प्राकृतिक वर्णन के साथ मिजाज-ए-शहर भोपाल का शब्दांकन भी नायाब है।

डॉक्टर गरिमा संजय दुबे अपनी समीक्षा में लिखती है – एक गीली लकड़ी में सुलगती आग है यह उपन्यास। उपन्यास के विभिन्न तत्वों के साथ न्याय करते हुए, व्यक्तिगत जीवन के हर रंग से गुज़रते हुए एक केंद्रीय विचार समानांतर रूप से बहता रहता है, वह है मानवता की सेवा, परोपकार। अर्चना भार्गव और राम भार्गव ऐसे ही दधीचि रूपी मानव के रूप में उपन्यास में मौजूद हैं, जो अपनी हड्डियों, रक्त, माँस, मज्जा सब कुछ परोपकार के लिए समर्पित कर देते हैं। अशोक प्रियदर्शी अपनी टिपण्णी में लिखते हैं कि यह जीवन यात्रा की असमाप्त कथा है। यह कथा आपको रह-रह कर गद्य-काव्य का आनंद देती है। कथाकार की वैचारिक टिप्पणियाँ काव्यमय हैं, वे कथारस में बाधक नहीं बनतीं, बल्कि कथा को एक धार देती हैं।

दुर्गाप्रसाद अग्रवाल ने इस उपन्यास को पढ़कर लिखा है कि बहुत दिनों बाद ऐसा उपन्यास पढ़ा है जिसे पढ़कर गहरा सुकून मिला है। इस बात का सुकून कि अभी भी बहुत कुछ अच्छा लिखा जा रहा है। इधर हमारी दुनिया में लोकप्रिय बनाम स्तरीय की जो बहस चल रही है, यह उपन्यास एक तरह से उसका भी जवाब है। इसमें लोकप्रियता के सारे तत्व हैं, और यह स्तरीय भी है। मनीषा कुलश्रेष्ठ ने इस उपन्यास को जीवन को थामे रखने का एक मीठा फ़लसफ़ा कहा है। यह देहदान के साथ यह भारतीय परिवार नाम की इकाई और उसकी जटिल मनोवैज्ञानिकता के बीच संवेदनाओं के मीठे सोते और आपसी सरोकारों की भी समानांतर कथा है। वसंत सकरगाए लिखते हैं कि यह कृति अंतिम यात्रा में जीवन का प्रारंभ है। आमतौर पर मरणोपरांत जीवन की अंतिम यात्रा पर मनुष्य के लिए किसी नसीहत के मायने बेमानी होते हैं लेकिन अंतिम यात्रा के बहाने नवजीवन की नसीहत देना रूदादे-सफ़र की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

ब्रजेश राजपूत के मतानुसार यह सफ़र पिता पुत्री के रूहानी रिश्ते का है। सुनील कुमार सिंह ने अपनी टिप्पणी में लिखा ही कि पिता का पुत्री से और पुत्री का पिता से जो संवाद शायद अक्सर मौन ही रह जाता है, उनको पिरोने की जीतोड़ मेहनत का परिणाम है रूदादे-सफ़र। राहुल देव के अनुसार यह उपन्यास बॉडी डोनेशन को लेकर पाठक को जागरूक करता है साथ ही मानवीय रिश्तों की उष्मा को बचाये रखते हुए एक सामाजिक जीवन जीने की प्रेरणा देता है। कथाकार लक्ष्मी शर्मा ने इस पुस्तक पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि यह उपन्यास जीवन-संबंधों का मानक है। बौद्धिक परिपक्वता, दोस्ताना खिलंदड़े भाव और अपने-अपने निविड़ एकांत के दुखों को साझा करते दो लोगों के बीच इस रूदादे-सफ़र में अन्य पात्रों के अन्तर्सम्बन्ध भी महत्त्वपूर्ण हैं।

ब्रजेश कानूनगो इस उपन्यास को पढ़कर लिखते हैं- इसकी सहज भाषा ने इस उपन्यास की पठनीयता को इतना बढ़ा दिया है कि किसी फ़िल्म की बेहतरीन पटकथा की तरह हम कहानी में बहते चले जाते हैं। अमृतलाल मदान अपनी टिप्पणी में लिखते हैं कि रूदादे-सफ़र पाठक के लिए रुलादे-सफ़र बन जाता है। प्रियंका ओम के अनुसार पंकज सुबीर ने गहन पड़ताल कर इस उपन्यास को लिखा है। डॉ. पुष्पलता अपनी टिप्पणी में लिखती हैं कि यह एक मार्मिक उत्कृष्ट उपन्यास है। पारुल सिंह ने अपनी टिप्पणी में लिखा है- पंकज सुबीर के लेखन में भावों के रंग होते हैं तो वे लिखते हैं 'एकाकीपन उदास और भूरे रंग का होता है।' उनके शब्दों में ही कहें तो ये धूसर रंग का एक उदास उपन्यास है।

शारदा मण्डलोई ने अपनी सारगर्भित टिप्पणी में लिखा हैं – पंकज सुबीर ने बड़ी ख़ूबी से इस उपन्यास को लिखा है। डॉ. रश्मि दुधे ने लिखा है कि साहित्य की भूमि में, देहदान विषय की नींव पर निर्मित रूदादे-सफ़र उपन्यास की यह विशाल इमारत, किसी क़िले की तरह सदियों तक बुलंद रहेगी, ऐसा मेरा विश्वास है। देवेन्द्र आर्य ने इसे शव-दान की कथा कहा है। विभा रानी ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि रूदादे-सफ़र में देहदान का सपना दिखता है।

शिल्पा शर्मा लिखती हैं कि यह उपन्यास धीमी, सुरीली, गहरी पकड़ बनाए रखने वाली ऐसी ग़ज़ल-सा लगता है, जो दर्द का एहसास तो कराती है, लेकिन उसमें इतनी कशिश है कि उसे सुनने का मोह आप छोड़ नहीं सकते हैं। प्रवासी कथाकार हंसा दीप ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि सकारात्मकता और जिंदादिली का यह समन्वय, उपन्यास रूदादे-सफ़र, पंकज सुबीर की एक विशिष्ट कृति है। नवनीत पाण्डे ने लिखा है कि इस उपन्यास के कथानक के माध्यम से जीवन के सर्वथा अलग, उपेक्षित, जटिल, अनछुए लेकिन ऐसे महत्त्वपूर्ण सोपान से गुज़रना हुआ, जो हमें भीतर तक हिला कर रख देता है।

कविता वर्मा ने अपनी टिप्पणी में लिखा है

कि एक ख़ूबसूरत और ज़रूरी उपन्यास अपनी रोचकता और प्रवाह के साथ पाठकों को बाँधे रखता है और पूरा होने के बाद भी मन में बना रहता है। रेणु जुनेजा ने लिखा है कि अन्य पाठक शायद इसे काल्पनिक कहानी मानें पर मैंने यह जीवन जिया है, मुझे यह उपन्यास एक सच्चा उपन्यास महसूस हुआ। डॉक्टर मुनीश मिश्रा ने अपनी समीक्षात्मक टिप्पणी में लिखा है कि डॉक्टर अर्चना और डॉक्टर राम भार्गव - 'पिता पुत्री की चिकित्सक जोड़ी' के साथ पंकज सुबीर ने रूदादे-सफ़र आरम्भ कर, इसे जिस मुकाम पर पहुँचाया है, वह चिकित्सा जगत् के लिए निश्चित ही एक बड़ी उपलब्धि है। श्याम सुन्दर तिवारी ने लिखा है कि रूदादे-सफ़र सिर्फ एक उपन्यास ही नहीं यह ज़िन्दगी की हक़ीक़त का सफ़र है।

डॉ. किसलय पंचोली ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि रूदादे-सफ़र रचा ही इस तरह गया है कि कोई उसे अधूरा छोड़ ही नहीं सकता। वह पाठक को लगातार बाँधे रखता है। अंशु प्रधान लिखती हैं कि रूदादे-सफ़र उपन्यास अपने आप में कई आयाम समेटे हुए है। यह कृति गागर में सागर है। दयानंद जायसवाल ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रमुख पात्र डॉक्टर राम भार्गव के जरिये इस उपन्यास में व्यक्ति के विकास की कहानी बुनी है, जो अपनी स्वभावगत अच्छाइयों और बुराइयों के साथ देशकाल की समस्याओं पर विचार करता है तथा आधुनिक मानव-संबंधों की यथार्थता को नए सन्दर्भों में टटोलने की कोशिश करता है।

कमलेश पाण्डेय ने रूदादे-सफ़र को शाश्वत भावों के शांत प्रवाह में बहती कहानी कहा है। इस कृति से गुज़रते हुए मानवीय रिश्तों के मीठे झोंकों के बीच कुछ अनछुए विषयों को क़रीब से जानने का संतोष और इंसानियत पर भरोसे की एक स्पष्ट वजह मिलती है। डॉक्टर राम सुधार सिंह लिखते हैं कि इस उपन्यास की सबसे बड़ी ख़ूबी इसकी कथा का संगुम्फन और सहज प्रवाह है। यह सच्चे अर्थों में जीवन के सफ़र की दास्ताँ है। उपन्यास के केंद्र में पिता पुत्री के रिश्तों की अव्यक्त अभिव्यक्ति है। सिनीवाली शर्मा ने लिखा है रूदादे-सफ़र एक अलग तेवर का उपन्यास है। यह कृति देहदान और भावनात्मक संबंधों को केंद्र में रखकर लिखा गया है।

चित्रा देसाई ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि मैंने पंकज सुबीर के उपन्यास और कहानियाँ ख़ूब पढ़ी हैं पर रूदादे-सफ़र की ज़मीन ही अलग है। लेखक किस तरह अपने विषय को खँगालता है, उसके हर पहलू की तह तक जाता है और पात्रों के साथ उसके जीवन में झाँकता है, ये यहाँ सीखा जा सकता है। सुनील चतुर्वेदी ने लिखा है कि इस उपन्यास की कथा में पात्रों की रेलमपेल नहीं है। गिनती के पात्र, पूरी कथा में संग-साथ चलते, अपने होने से कथा में विविध रंग भरते हुए से। वे आगे लिखते हैं कि रूदादे-सफ़र को पूरा करने के ठीक पहले एक विश्राम चाहिए। आँखों की नमी पोंछने के लिए, भावुक हुए मन को फिर से पटरी पर लाने के लिए। राजेंद्र नागदेव ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि उपन्यास में पिता और पुत्री के रिश्तों की बारीक बुनावट है। एक स्थान पर कलेक्टर के अर्चना की ओर आकर्षित होने का प्रसंग है, जो बहुत आवश्यक प्रतीत नहीं होता। उपन्यास का समापन आकस्मिक और बेहद मार्मिक है। कल्पना मनोरमा लिखती है कि रूदादे-सफ़र के आवरण पर जिस चित्र की कल्पना की गई है, वह नायाब है। एक पुरुष जो अपने कंधे पर बच्ची को बैठाए है। वहाँ पर बच्ची गोदी में हो सकती थी। उँगली थमाए हुए चलती हुई भी हो सकती थी और भी किसी वाहन आदि का भी प्रयोग हो सकता था, स्त्री को उन्मुख दर्शाने के लिए लेकिन इस चित्र के मार्फ़त रूदादे-सफ़र नामक वाक्यांश का अर्थ शायद पूर्ण ध्वनित नहीं हो सकता था।

उषाकिरण खान ने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी में लिखा है कि सघन संवेदना से ऊब-चूब यह पंकज सुबीर का नवीनतम उपन्यास है, जो आपको आँसूओं के सैलाब में छोड़ देता है। जयनंदन ने लिखा है कि पंकज सुबीर ने इस उपन्यास को लाजवाब रचा है। धीरेन्द्र अस्थाना ने लिखा है कि इस उपन्यास को पढ़ते हुए मैं तीन-चार बार रोया हूँ। अशोक मिश्र ने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी में लिखा है कि इस उपन्यास में भोपाल पूरे सौंदर्य के साथ पृष्ठ भूमि में उपस्थित है। यतीन्द्र मिश्र ने इस कृति को मार्मिक गल्प का आख्यान कहा है। अरुण कुमार जैमिनि लिखते हैं इस उपन्यास की कथा तोड़ती नहीं कुछ जोड़ती भी है। हरी मृदुल ने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी में लिखा है कि यह उपन्यास पिता-पुत्री के बहाने एक सफ़र है। शशिभूषण बडोनी ने इस कृति को एक प्रभावशाली उपन्यास कहा है। अर्चना नायडू लिखती हैं मैं इस उपन्यास को तीसरी बार पढ़ रही हूँ। कुछ अजीब-सा आकर्षण है इस कथा में। सपना सिंह ने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी में लिखा है कि इस उपन्यास में भोपाल एक जीवन्त पात्र की तरह धड़कता है। नरेंद्र नागदेव ने इसे नई राहों का अन्वेषी उपन्यास कहा है। चित्रसेन रजक ने इसे धूसर रंग का उदास उपन्यास कहा है। हेमराज कौशिक ने इसे अद्‌भुत औपन्यासिक कृति कहा है।

अभिनव शुक्ल ने इस उपन्यास को सरल, सच्चा और मनोरम कहा है। शिखा वार्ष्णेय के अनुसार यह नए और ज़रूरी विषय के इर्द-गिर्द बुना गया उपन्यास है। कमल प्रकाश ने इसे कोमल मानवीय संवेदनाओं की सुंदर कहानी कहा है। चारु मित्रा के अनुसार यह सफ़र के अंत की नई शुरुआत है। प्रज्ञा पाण्डेय ने इसे डॉक्टर अर्चना भार्गव की ज़िंदगी की एक उदास-सी कहानी कहा है। हिमांशी अग्निहोत्री के अनुसार यह उपन्यास अपना अमिट प्रभाव छोड़ता है। सुवर्णा दीक्षित ने अपनी संक्षिप्त टिप्पणी में लिखा है कि डॉक्टर राम भार्गव और डॉक्टर अर्चना भार्गव के रिश्ते में दोस्ती के जो तार हैं, वहीं दरअसल रिश्ते की जान होते हैं।

वरिष्ठ साहित्यकार सूर्यबाला ने अपने पत्र में पंकज सुबीर को लिखा है कि जब मैं अपने देहदान को लेकर अंदर एक गहरे विमर्श से जूझ रही थी तो, बहुत ज़रूरी, बहुत महत्त्वपूर्ण, चौंका देने वाली तुम्हारी यह कृति, अच्छा ही सोचने और करने वाले चरित्रों के

बीच, जिस अकृतिम, छल-छद्म रहित जीवन का आख्यान रचती है, वह एक सर्वथा नए पंकज को हमारे बीच लाती है। प्रेम जनमेजय ने अपने पत्र में पंकज सुबीर को लिखा है कि मेरे परिवार में बेटी सदा शीर्ष पर रही क्योंकि उसके लिए हम तरसे हैं। हम तीन भाई हैं। मेरे और मंझले के यहाँ दो बेटे हैं। छोटे भाई के यहाँ श्रुति ने जन्म लिया तो वह हम सबकी गुड्डो रानी हो गई। मेरे बड़े बेटे के यहाँ तन्वी आई तो ढेर सारी ख़ुशियाँ लाई। इतनी ख़ुशियाँ कि विदित और नेहा ने तय किया हमें दूसरी संतान की आवश्यकता नहीं। बेटी के पिता का सुख तो उठा नहीं सका पर पौत्री के दादू और पितृवत होने का सुख उठा रहा हूँ। बहुत कुछ जानना है, समझना है, महसूसना है और उस समय से गुज़रना है जिसमें नहीं गुज़र पाया।

शशांक ने अपने पत्र में पंकज सुबीर को लिखा है कि दृश्यों की गहराई, शहर का सौंदर्य और मानवीय आत्मीयता इनमें गहरे रंग भरते हैं। इस कृति में गहरी उष्मा से भरता हुआ जीवन वृत्तांत है, कभी ख़त्म न होने वाला यात्रा वृत्तांत। नरेंद्र गुप्ता ने अपने पत्र में पंकज सुबीर को लिखा है कि रूदादे-सफ़र उपन्यास पढ़ने के बाद शुक्रगुज़ार हूँ, इतना सेंसेटिव नावेल। इस उपन्यास की कथा ने मेरा पूरा दिमाग़ काबू में कर लिया। प्रमोद त्रिवेदी ने अपने पत्र में पंकज सुबीर को लिखा है कि एक सर्वथा नई भूमि पर आपने यह उपन्यास रचा। बतौर पाठक मुझे भी उनसे रू-ब-रू होना पड़ा, जो मेरी सीमा से बाहर हैं। मैं इसकी सघनता से बाहर से बाहर न आ सका। मुझे भी लगता है - इसे रचने के बाद आपको भी इसके तनाव से बाहर आने में आसानी नहीं रही होगी। अवनि प्रकाश श्रीवास्तव ने पंकज सुबीर को बहुत लंबा चौड़ा पत्र लिखा है। रूदादे-सफ़र - रूह से हृदय तक का सफ़र। आँखों के साथ-साथ मन भी गीला हो जाता है। मैं पहले अपनी बेटी की ओर देखता हूँ, फिर अपनी पत्नी को। क्या यह हम तीनों की कहानी है ? क्या हमारी कहानी का अंत भी रूदादे-सफ़र की तरह ही होगा। मेरी और पत्नी अनिला के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। वर्षों बाद का सन्नाटा जैसे ठीक सामने आकर पसर जाता है। जितनी अद्भुत कथा, उतनी ही अद्भुत कथाशैली क्या ज़िंदगी है अगर ज़िंदगी है तो यहीं है रूदादे-सफ़र में।

जया जादवानी ने अपनी प्रतिक्रिया में इसे एक रेयर विषय पर अच्छा नॉवेल कहा है। मधु कांकरिया ने इसे एकदम नई थीम पर महत्त्वपूर्ण उपन्यास कहा है। प्रज्ञा ने अपनी प्रतिक्रिया में लिखा है कि दो समयों में आवाजाही के सफ़र का वृत्तांत है रूदादे-सफ़र। दो समयों में अनेक लोगों की ज़िन्दगियों को नज़दीक से दिखाता सफ़र है ये उपन्यास। सुभाष नीरव ने इस कृति को भीगे लम्हों की दास्तान कहा है। प्रकाश मनु ने लिखा है कि पंकज सुबीर को शायद इल्म नहीं कि उन्होंने एक अमर कृति रच डाली है। जयनारायण बुधवार ने अपनी प्रतिक्रया में लिखा है कि हर पिता और बेटी को इसे पढ़ना चाहिए। उर्मिला सिंह ने इसे कमाल की किताब कहा है। लीना मल्होत्रा ने अपनी प्रतिक्रिया में लिखा है रुदादे-सफ़र में ऐसे पात्र मिलते हैं तो उपन्यास पढ़ते हुए मैं बचपन के समय में लौटती हूँ जब डॉक्टर्स, दुकानदार और केमिस्ट तक से दुआ सलाम रहता था, भरोसा बाकी था। कहाँ गए वे लोग! प्रत्यक्षा ने लिखा है हमारे यहाँ ऐसी किताबें कम लिखी जाती हैं। आबिद सुरती के अनुसार जिन्होंने भी इस किताब को पढ़ा, उनकी आँखों में आँसू आए हैं। योगेश सिंह के अनुसार यह उपन्यास उच्च भावनात्मक स्तर पर लिखा गया है। दिव्या माथुर ने अपनी प्रतिक्रिया में लिखा है कि इस उपन्यास का अंत अप्रत्याशित है।

डॉ. रमेश कुमार लिखते हैं कि इस किताब में पिता-पुत्री के बीच का मार्मिक संबंध है। पुष्पा दुबे ने लिखा है कि उन्होंने इस उपन्यास को पढ़ा और पढ़ते चली गईं। अंजना चांडक लिखती है कि कहानी के अपनेपन ने मुझे बाँध लिया। अनिता नौटियाल ने लिखा है कि मैं जल्द ही देहदान का फॉर्म भरने दून अस्पताल जाऊँगी। पल्लवी त्रिवेदी लिखा है कि इस उपन्यास का अंत कमाल का था। संतोष श्रीवास्तव लिखती है कि यह उपन्यास शुरू से अंत तक बेहद मार्मिक है। मीनू शर्मा ने लिखा है कि इस उपन्यास में किरदारों का चित्रण ख़ूबसूरत तरीक़े से किया है। अशोक चतुर्वेदी को उपन्यास बहुत अच्छा लगा। भवन्स नवनीत पत्रिका, जून 2023 में इस उपन्यास पर प्रतिक्रिया प्रकाशित हुई है। इस प्रतिक्रिया में लिखा है - यह कुछ मायनों में अनोखा उपन्यास है। हिन्दुस्तानी ज़ुबान पत्रिका अप्रैल – जून 2023 में प्रकाशित हुई प्रतिक्रिया के अनुसार यह सामाजिक चेतना से लैस उपन्यास है। शिव परसाई ने लिखा है रूदादे-सफ़र भोपाल के बिसरते इतिहास को पुनर्जीवित करती है। नीलिमा सिंह लिखती है कि लगता है कि यह उपन्यास किसी डॉक्टर के द्वारा लिखा गया है। उषाकिरण ने अपनी प्रतिक्रिया में लिखा है कि इस पुस्तक को पढ़ने के बाद मन बहुत भावुक हो जाता है। रेनू रामजस ने लिखा है कि यह एक बेहतरीन उपन्यास है।

'साहित्य सूत्र' वेब पोर्टल के लिए ब्रजेश राजपूत ने पंकज सुबीर के साथ इस उपन्यास पर सार्थक चर्चा की। दूरदर्शन के 'साहित्य सृजन' कार्यक्रम में आकाश माथुर ने पंकज सुबीर के साथ इस उपन्यास पर सार्थक चर्चा की। पंकज सुबीर ने इन साक्षात्कारों में उपन्यास की रचना प्रक्रिया पर बात की है। उन्होंने इस कृति पर चर्चा करते हुए बताया कि इस उपन्यास की विषय वस्तु रूखी थी इस वजह से मैंने इसमें संगीत और ग़ज़लें डाली हैं। पिता-पुत्र और माँ-बेटी पर भी बहुत सारे उपन्यास मिल जाएँगे लेकिन पिता और पुत्री के कोमल रिश्ते पर लिखा गया यह पहला ही उपन्यास है।

समीक्षकों, आलोचकों, साहित्यकारों ने इस पुस्तक में तथ्यों के साथ गहरा विश्लेषण किया है। उपन्यास और विमर्श की इस पुस्तक को पढ़कर लगा कि वास्तव में पंकज सुबीर ने एक लाजवाब कृति की रचना कर दी है। इस उपन्यास पर एक फ़िल्म बननी चाहिए। देहदान पर विमर्श के लिहाज से यह विमर्श की पुस्तक बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। विमर्श - रुदादे-सफ़र (आलोचना) पुस्तक पाठकों को देहदान के लिए के लिए उत्प्रेरक का कार्य करेगी।

000

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नए सेट में शामिल पुस्तकें

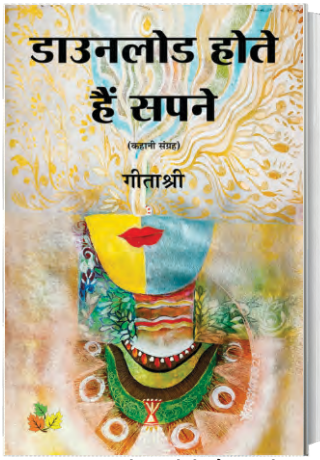

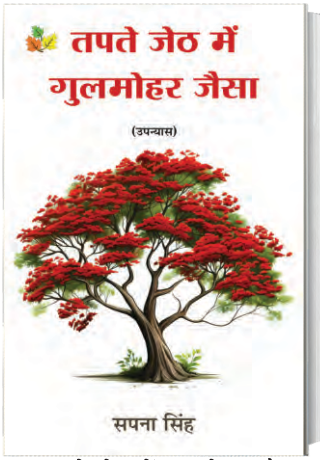

डाउनलोड होते हैं सपने
कहानी संग्रह
लेखक - गीताश्री
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2024

तपते जेठ में गुलमोहर जैसा
उपन्यास
लेखक - सपना सिंह
मूल्य- 220 रुपये, वर्ष- 2024

पन्नी
उपन्यास
लेखक - ज्योत्स्ना सिंह
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2024

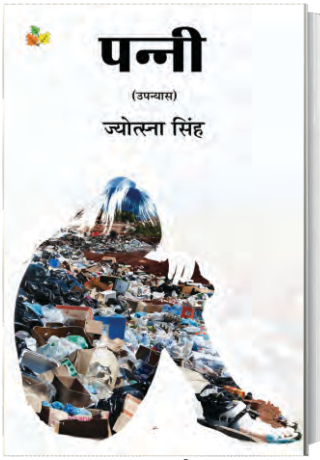

वजूद
उपन्यास
लेखक - अंशु प्रधान
मूल्य- 450 रुपये, वर्ष- 2024

अष्टछाप के अर्वाचीन कवि
कविता संकलन
संपादक - पंकज पाठक
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

मदिरा बरसे नभ से
वर्षा गीत संग्रह
लेखक - विजया भारती
मूल्य- 220 रुपये, वर्ष- 2024

मधुमास उतर आया
नाटक
लेखक - काशीराम सोनी
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

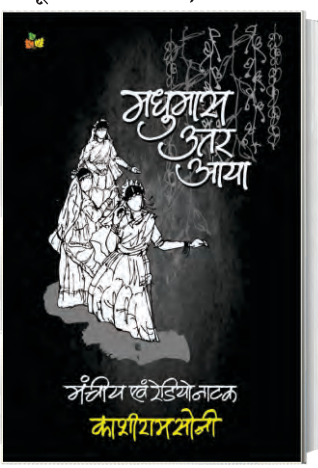

विमर्श- ये वो सहर तो नहीं
आलोचना
संपादक - शहरयार
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

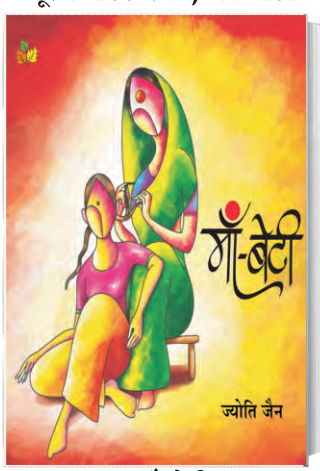

माँ-बेटी
कविता संग्रह
लेखक - ज्योति जैन
मूल्य- 220 रुपये, वर्ष- 2024

दिल चाहता है
कविता संग्रह
संपादक - विनोद कुमार
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

पुरवाई के झरोखे से
साक्षात्कार संग्रह
संपादक - नीलिमा शर्मा
मूल्य- 150 रुपये, वर्ष- 2024

रौशनी उस पार
ग़ज़ल संग्रह
लेखक - ज़हरा क़रार
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2024

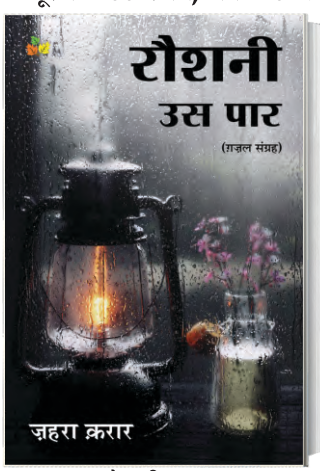

शिवना प्रकाशन

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 2-8, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेंसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फ़ोन- 07562-405545, 07562-490372
मोबाइल- +91-9806162184 (शहरयार), +91-6265665580
व्हाट्सएप- +91-8959446244, ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com
वेबसाइट- www.shivnaprakashan.com

Gmail Email- shivna.prakashan@gmail.com
+91-8959446244 https://twitter.com/shivnac
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
https://www.youtube.com/c/ShivnaCreations
amazon https://www.amazon.in/s?me=A17JJYGSVM2CEV

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन अमेरिका द्वारा मध्यप्रदेश के सीहोर ज़िले में सीहोर तथा आष्टा में चलाए जा रहे आर्थिक रूप से कमज़ोर परिवार की बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण योजना के तहत स्थापित प्रशिक्षण केन्द्रों पर आयोजित कुछ कार्यक्रम

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2024-25 का सत्रारंभ समारोह। अतिथिगण- श्री अखिलेश राय, श्री शंकर प्रजापति, श्री अनिल पालीवाल, श्रीमती राजकुमारी पालीवाल, श्री सुनील भालेराव तथा श्रीमती अनीता भालेराव।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2024-25 का सत्रारंभ समारोह। अतिथिगण- श्री अखिलेश राय, श्री शंकर प्रजापति, श्री अनिल पालीवाल, श्रीमती राजकुमारी पालीवाल, श्री सुनील भालेराव तथा श्रीमती अनीता भालेराव।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2024-25 का सत्रारंभ समारोह। अतिथिगण- श्रीमती रश्मि व्यास, श्रीमती रेखा पुरोहित, सुश्री नीता सिंह, श्रीमती स्वाति भदौरिया, श्रीमती मुफ़्सिला मसूद तथा सुश्री प्रियंका दोहरे।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2024-25 का सत्रारंभ समारोह। अतिथिगण- श्रीमती रश्मि व्यास, श्रीमती रेखा पुरोहित, सुश्री नीता सिंह, श्रीमती स्वाति भदौरिया, श्रीमती मुफ़्सिला मसूद तथा सुश्री प्रियंका दोहरे।

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-490372, Mobile 09806162184, 08959446244 07828313926

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।